शब्द लोक

प्रतिध्वनि कला
संस्कृति की

ISSN 2349-137X

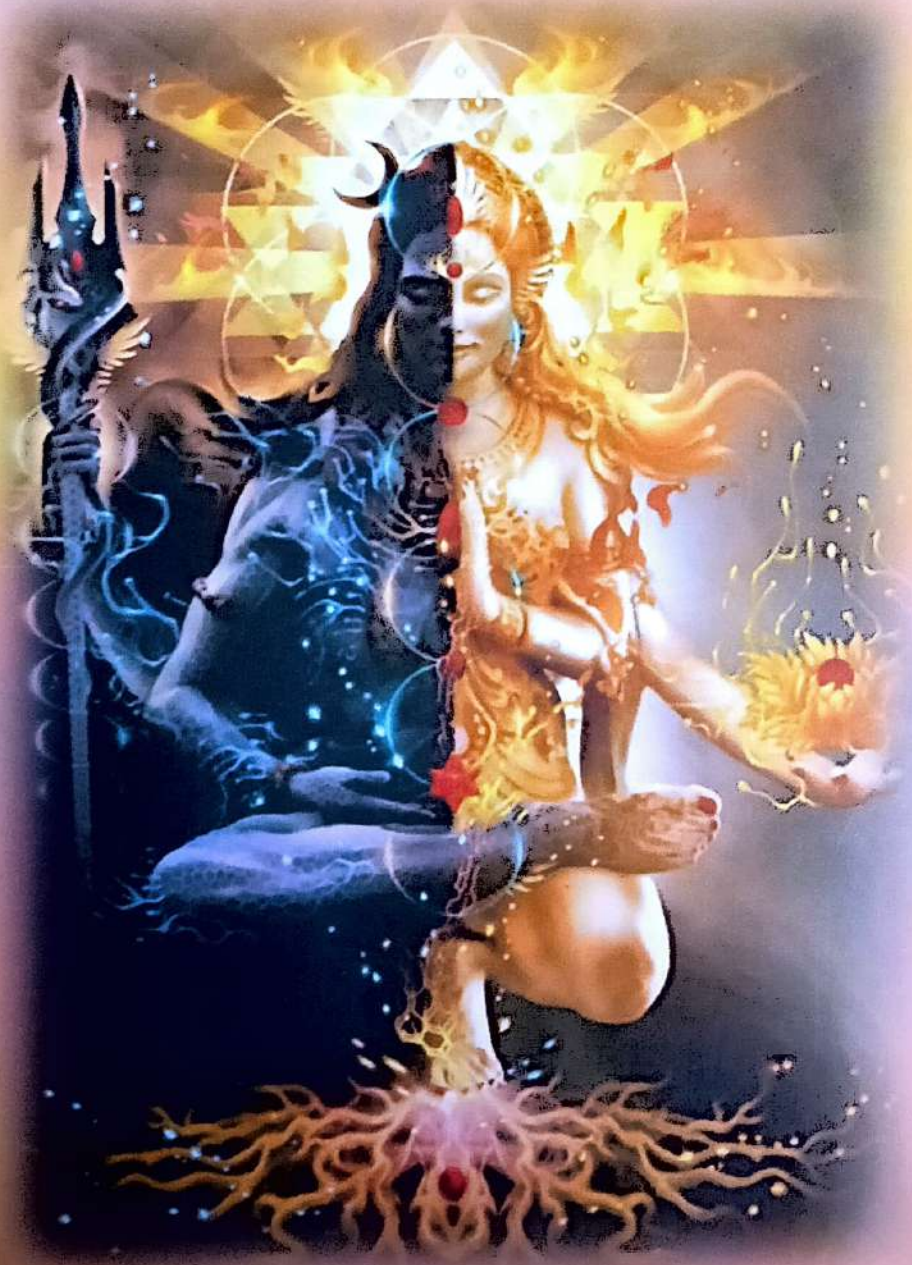

अनहद लोक

प्रतिध्वनि कला संस्कृति की

सम्पादक

डॉ. मधु रानी शुक्ला

सम्पादक मण्डल

डॉ. आशा अस्थाना, डॉ. राजेश मिश्र, डॉ. मनीष सी, मिश्र

व्यंजना

आर्ट एण्ड कल्चर सोसायटी

109 डी/4, अबूबकर पुर, प्रीतमनगर, सुलेमसराय,

इलाहाबाद - 211011

अनहद लोक

प्रतिध्वनि कला संस्कृति की

सम्पादक : डॉ. मधु रानी शुक्ला

सम्पादक मण्डल : डॉ. आशा अस्थाना, डॉ. राजेश मिश्रा, डॉ. मनीष मिश्र

सम्पादकीय सहयोग एवं कला संयोजन : शाम्भवी शुक्ला

आवरण पृष्ठ : डॉ. आर.एस. अग्रवाल

मुद्रक : विकास कम्प्यूटर एण्ड प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

वितरक : पाठक पब्लिकेशन, महाजनी टोला, इलाहाबाद
0532- 2402073

प्रकाशक

व्यंजना

आर्ट एण्ड कल्चर सोसायटी

109 डी/4, अबूबकर पुर, प्रीतमनगर, सुलेमसराय,

इलाहाबाद

मो. : 9838963188, 9454843001

E- mail- melodyanhad@gmail.com

madhushukla-11@gmail.com

मूल्य : 200/- प्रति अंक

वार्षिकः 500/-

तीन वर्षः 1500/-

आजीवनः 20,000/-

पोस्टल चार्जेज अलग से

© सर्वाधिकार सुरक्षित

- रचनाकारो के विचार मौलिक हैं
- समस्त न्यायिक विवाद का क्षेत्रा इलाहाबाद न्यायालय होगा

मार्ग दर्शन :

पं. देबू चौधरी, डॉ. सोनल मानसिंह, प्रो. चित्तरंजन ज्योतिषी,
डॉ. कमलेश दत्त त्रिपाठी, पं. विश्वमोहन भट्ट, पं. भजन सपोरी, पं. रोनू मजुमदार, प्रो. ऋत्विक् सान्याल, प्रो. दीप्ति ओमचारी भल्ला,
पं. विजय शंकर मिश्र, पं. अनुपम राय, श्री एस. पी. सिंह

संयोजन सहयोग :

डॉ. के. शशि कुमार, डॉ. रामशंकर, डॉ. शान्ति महेश, डॉ. निशा झा

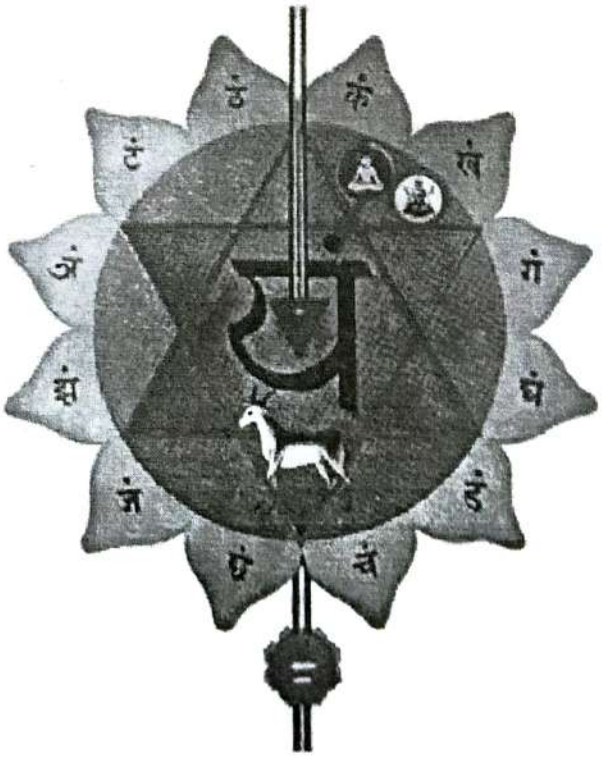

संगीत नाटक अकादेमी
के
सहयोग से प्रकाशित

संगीत नाटक अकादेमी

जगतः पितरौवन्देपार्वतीपरमेश्वरौ

आत्मात्वंगिरिजामतिसहचरा, प्राणांशरीरग हम्।
पूजातेविनियोगभोगरचना, निद्रासमास्थितिः।
संचारः पदयोप्रदक्षिणिविधि,स्तोत्राणिसर्वागिरो,
यदत्कर्म यज्ञोत्वरिवलंशुभआराधनं।।

भौतिकता से परे सब शून्य है निष्काम ज्ञानेन्द्रियों का चरमोत्कर्ष शिवत्व की प्राप्ति है अपारदर्शी 'शिव' जो ध्यानस्थ मुद्रा में लीन हैं तथा जिनका सम्पूर्ण शरीर ही योग, अध्यात्म, दर्शन लोक को प्रतिम्बित करता हुआ है दो आँखें जो केवल भौतिक जगत मात्र का ही दर्शन करती हैं, वहीं तीसरा नेत्र अर्न्तदृष्टि बोधक है जो मिथ्या जगत का त्यागकर वास्तविक जगत का दर्शन करने का सूचक है। शिव रहस्यवाद के प्रतीक सर्प को धारण करते हैं कुण्डलिनी का प्रतीक है कुण्डलिनी के सदृश्य ही जागृत अवस्था में अपनी वास्तविक शक्ति को दर्शाती है धैर्य, सजग, सक्रीय, जीवंत, ध्यान मुक्तनंदी की सवारी करते हुए शिव ने त्रिशूल जो इडा, पिंगला व सुषुम्ना जिनका भौतिक स्वरूप में विद्यमान न होकर भी उर्जा को नियमित गति प्रदान करनेवाले जीवन के मूलभूत तत्वों में द्वैत का प्रतीक हैं योग परंपरा में जिसे रुद्र, हर तथा सदाशिव कहा गया शिव का त्रिशूल तीन कष्टों दैनिक, दैविक व भौतिक के विनाश का सूचक है इसमें सत्, रजस तथा तमोगुज तीन शक्तियाँ है जिसे वैज्ञानिक संदर्भ में प्रोटान, न्यूट्रान व इलेक्ट्रान से जोड़ते हैं।

शिव का न आदि है न अंत एकादश रुद्रणियाँ, चौसठ योगिनियाँ तथा भैरवादि इनके सहचर व सहचरी है सर्वत्र व्याप्त शिव के दो मुख्य निवास स्थान काशी व कैलास है। शिव के कई रूप उमा महेश्वर, अर्धनारीश्वर, पशुपति, त्रिवासा, दक्षिणामूर्ति योगीश्वर रूप है भगवान शिव तो पार्थिव रूप में भी पूज्य है। शिवमिथ्या जगत का त्यागकर वास्तविक जगत का दर्शन करनेवाले त्रिनेत्र धारी है जो ज्ञान, रहस्य व समस्त उर्जा शक्ति के संचालक है तथा 'शक्ति' ब्रह्मा द्वारा सृजन, विष्णु द्वारा पालनव शिव द्वारा संहार की प्रेरणा शक्ति है जो विभिन्न रूपों में सृष्टि के समस्त तत्वों में व्याप्त है जब पुरुष रूप से उपास्य हुई तो ईश्वर, शिव भगवान नाम से संज्ञापित हुई और जब स्त्री रूप में पूज्य हुईं तो ईश्वरी दुर्गा व भगवती कहीं गईं इस प्रकार अमेद्य इन्हें **"शिवः अभ्यान्तरे शक्तिः शक्तिअभ्यान्तरेशिवः"** अर्थात शक्तिशिव का शरीर तो शिव शक्ति की आत्मा कहा गया। सच्चिदानन्दशिव की परा शक्ति से चित्त्, चित्त् से आनन्द शक्ति, आनन्द शक्ति से इच्छा शक्ति, इच्छा शक्ति से ज्ञान शक्ति तथा ज्ञान शक्ति से क्रिया शक्ति का उद्भव हुआ जो समस्त सृष्टि की संचालक व निवृत्तकलाओं की जनक है। चित्र शक्ति से नाद व आनंद शक्ति से बिंदु का प्राकट्य बताया गया है इच्छा से 'म'कार प्रकट हुआ ज्ञान से ऊकार क्रिया शक्ति

से अकार का जन्म हुआ इस प्रकार ऊँ का जन्म हुआ। इसी महत्ता को सिद्ध करते हुए महा कवि कालीदास ने जगत मातृ पितृ स्वरूप में स्वीकार करते हुए उनकी वन्दना की–

वागर्थाविवसमप क्तौवागर्थाप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौवन्देपार्वतीपरमेश्वरौ।।

मध्यकाल में तुलसी ने भी कहा–

भवानीशंकरौवन्दे श्रद्धा विश्वासरूपण्ये।
याम्यांबिना न पश्यन्तिसिद्धाः स्वान्तः स्थयीश्वरम।।

शंकर विश्वास तो भवानी श्रद्धा कही गई है दोनो की उपासना से ही परमात्म के दर्शन होते है। (कला जगत के अधिष्ठाता "शिव-शक्ति") समायोग जहाँ दैविय रूप में पूज्य माना गया वहीं लास्य भाव में कला जगत को नई दृष्टि प्रदान करता है। शक्ति जब लास्य करती है तो सृष्टि की रचना और शिव का नृत्य सृष्टिप्रपंच का संहारक है शक्ति सहित शिवसमर्थ हैं पर शक्ति बिनाशिव, शव हैं।

'सिन्धु घाटी' सभ्यता में प्राप्त वास्तु, मूर्ति के भग्नाव शेष हों या आधुनिक स्थापत्यकला, पारम्परिक लोक चित्र कला हो या मॉर्डन आर्ट शिव-शक्ति को सभी कलाकार ने अपनी कला से सजाया है। राग ध्यान परम्परा में शिव शक्ति समायोगाः कहकर रागो की उत्पत्ति का आधार माना गया शिव शक्ति विभिन्न कलाओं में भिन्न-भिन्न रूपों में व्याख्यायित किए गए वास्तुकला, चित्रकला, काव्य, संगीत, रंगमंच, लोक से शास्त्रीय जगत तक रचे गए अर्धनारीश्वर रूप तो कला संस्कृति, साहित्य, धर्म, समाज को एक नई दिशा प्रदान करता है वो योगियों के "शिव-शक्ति" आराधना से लोक जगत के साथ ही विपरीत लिंगीयों के भी आराध्य रहें हैं। शिव विश्व के रंगमंच है शक्ति रूप में अवतरण है शिव की शक्ति का अवतरण नाटक होता है शिव की तत्वता का अनूकरण है शिव बनकर ही शिव को पाने भी चेष्टा करता है जैसे भगवान की मूर्ति से निराकार ब्रह्म के सन्निकर पहुँचते हैं वैसे नट भी आकार रूप लेता है।

इन्हीं तथ्यों को उजागर करने हेतु दो दिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय अन्तर्विषयी संगोष्ठी कलाजगत एवं शिव शक्ति वैश्विक सन्दर्भ में पर आयोजित है। ये कलाएँ समस्त सृष्टि को जीवंतता प्रदान करती हैं। 'कालिदास एकेडमी' उज्जैन में दिनांक 29, 30 सितम्बर को आयोजित किया जा रहा है। "शिव-शक्ति" के समायोग से उत्पन्न समस्त आचार विचार, क्रियाकलाप सभी सामाजिक सरोकारों से सम्बद्ध है इन्हीं तत्वों को ध्यान रखते हुए दोदिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय अन्तर्विषयी संगोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें साहित्य में शिव शक्ति, वास्तुकला एवं शिव शक्ति, चित्रकला एवं शिव शक्ति, मूर्तिकला में शिव शक्ति, विश्व के प्रमुख शिव शक्ति मंदिर, संगीत में शिव शक्ति, जन-संवाद के माध्यम शिव शक्ति, ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में शिव शक्ति, शिव शक्ति का समाज शास्त्रीय सम्बन्ध, लोकगीत, लोकगाथा, लोकनाट्य में शिव शक्ति, शिव शक्ति का दार्शनिक स्वरूप, शिव शक्ति एवं वैदिक सन्दर्भ, रहस्यवाद एवं शिव शक्ति, शिव शक्ति पर अकादमिक शोध कार्य पर आधारित प्रपत्रों को आमंत्रित किया।

–मधु रानी शुक्ला

अनुक्रमांक

1. शिवलिंग पूजन का महत्त्व	अमित प्रकाश झा	9
2. विद्यापति की रचनाओं में शिव	डॉ. राम कृष्ण झा	12
3. मिथिलांचन के संगीत में महेशवाणी एवं नचारी	प्रो. निशा झा	15
4. शिव गीतों में राग-रस	श्वेता सत्यम	19
5. शिव योग	डॉ. रैना कुमारी	22
6. शिव-ताण्डव	निलेश चन्द्र त्रिवेदी	24
7. शिव शक्ति एवं वैदिक संदर्भ	अंजली दीक्षित	26
8. विश्व के प्रमुख शिव शक्ति मन्दिर	सुश्री अंजना चौहान	29
9. संगीत में शिवशक्ति	अरुण कुमार	33
10. शिव और शक्ति, साहित्य और कला में	डॉ. अरुण वर्मा	35
11. शिव और संगीत	डॉ. अश्विनी कुमार सिंह	38
12. संगीत में शिवशक्ति	डॉ. भाग्यश्री मोकासदार	41
13. मालवी लोक गीतों में शिव और शक्ति	दीपिका चौरसिया	45
14. संगीत में शिव-शक्ति	दीपक वर्मा	48
15. शिवशक्ति का समाजशास्त्राी सम्बन्ध	डॉ. दीप माला मिश्रा	51
16. राग भैरव में शिव का स्वरूप	डॉ. आकांक्षा गुप्ता	56
17. शिव पावर्ती के प्रेम की चित्राात्मकता, 'कुमार सम्भवम' के सन्दर्भ में	डॉ. जूही शुक्ला	58
18. संगीत के जनक शिव	डॉ. किरण सिंह	61
19. चित्राकला में शिव-शक्ति	डॉ. अनुराधा आर्य	63
20. संगीत के माध्यम से सृष्टि में शिव-शक्ति का संचरण	डॉ. दीप्ति बंसल	66
21. भारतीय संगीत और शिव शक्ति : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ. हर्षित वैयर	69
22. तंत्र तथा आगम साहित्य में संगीत और शिव शक्ति	डॉ. अंजलिका शर्मा	71
23. संगीत में शिवशक्ति	डॉ. इला शर्मा	74
24. संगीत में शिवशक्ति : लोकगीत के संदर्भ में	डॉ. नीरला दास	77
25. भारतीय संगीत और शिव शक्ति	डॉ. प्रभा भारद्वाज	82
26. संगीत में शिव शक्ति	डॉ. रश्मि	85
27. ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में शिव शक्ति	डॉ. कुमारी बीभा	88

28. संगीत में शिव शक्ति — डॉ. सारिका विवेक 91
29. संगीत में शिव शक्ति — डॉ. जयश्री विश्राम कुलकर्णी 94
30. Lord Shiva as Hanuman Avatar in Thai Ramkien — Dr. Jitendra Pratap Singh 97
31. संगीत में शिव-शक्ति का वर्णन — डॉ. ज्योति विश्वकर्मा 101
32. संगीत में शिव-शक्ति — प्रा. के.ओ. जिरापुरे 104
33. वैश्विक सन्दर्भ में शिव-शक्ति — डॉ. कामना अवस्थी 107
34. उज्जयिनी की कालिदास चित्रकला प्रदर्शनी में प्रदर्शित चित्रों में शिव-शक्ति चित्रण — खुशबू जांगलवा 111
35. संगीत में शिव शक्ति — कुमारी प्रीति 115
36. Shiva-Shakti in Universal Perspective — Madhav Puranik 117
37. शिव शक्ति का दार्शनिक स्वरूप — मधु 118
38. शिव शक्ति और संगीत — डॉ. मनदीप कौर 127
39. शिव और शक्ति का दार्शनिक स्वरूप — डॉ. मनीषा दुबे, शैलेन्द्र आचार्य 131
40. कला में शिवशक्ति - उपमहेश्वर — डॉ. मीनू अग्रवाल 133
41. शिव की नगरी काशी में तबले की विकास यात्रा — नमन सिंह 135
42. शिव शक्ति की प्रतीक तुर्रा कलंगी नाट्य कला — डॉ. प्रभा बजाज 138
43. संगीत तथा मूर्तिकला में शिव शक्ति — प्रविण के. आहिरे 140
44. साहित्य में शिव शक्ति — कु. राधा सैनी 143
45. ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में शिव शक्ति — राखी अग्रवाल 148
46. साहित्य में शिव — रेखा कुमारी 152
47. शिव-शक्ति का एकात्म रूप-अर्द्धनारीश्वर — ऋतु मालवीय 154
48. संगीत में शिव शक्ति — मो. रियाज 157
49. लोक गीत, लोक गाथा, लोक नाट्य में शिव शक्ति — रूपा सिंह 163
50. साहित्य में शिव शक्ति 'कालिदास, शिवमहापुराण और धनुर्भङ्गम् महाकाव्य के परिप्रेक्ष्य में' — सचिन सेमवाल 168
51. शास्त्रीय नृत्य कथक में शिव — शाम्भवी शुक्ला मिश्रा 173

शिवलिंग पूजन का महत्त्व

अमित प्रकाश झा

आई. आई. एम., लखनऊ, उत्तर प्रदेश

एक बार ब्रह्मा और विष्णु भगवान शंकर के अगल-बगल खड़े हो गए और उन्हें प्रणाम किया तथा कुटुम्ब सहित श्रेष्ठ आसन पर शिव जी को स्थापित किया और यानि-हार, नूपुर, केयुर, किरीट, मणिमय कुण्डल, यज्ञोपवीत, उत्तरीय वस्त्रा, पुष्पमाला, रेशमी वस्त्रा, मुद्रिका, पुष्प ताम्बूल, कपूर, चन्दन एवं अगुरू का अनुलेप, धूप, दीप, वेतछत्रा, व्यंजन, ध्वजा, चँवर तथा अन्यान्य दिव्य उपहारों आदि से पूजन किया।

इस पूजन से प्रसन्न हो शिव जी ने कहा–

"आज का दिन महान हैं इसमें तुम्हारे द्वारा जो आज मेरी पूजा हुई है, इसमें मैं तुमलोगों पर बहुत प्रसन्न हूँ। इसी कारण यह दिन परम पवित्र और महान से महान होगा। आज की यह तिथि शिवरात्रि के नाम से विख्यात होकर मेरे लिए परम प्रिय होगी। इस समय जो मेरे लिंग (निस्कल-अंग-आकृति से रहित निराकार स्वरूप के प्रतीक) और वेर (सकल-साकार रूप के प्रतीक विग्रह) की पूजा करेगा, वह पुरुष जगत् की सृष्टि और पालन आदि कार्य भी कर सकता है।[1]

शिवरात्रि के संबंध में शिव जी ने बताया कि-जो शिवरात्रि को दिन-रात निराहार एवं जितेन्द्रिय रहकर अपनी शक्ति के अनुसार निस्कपट भाव से मेरी यथोचित पूजा करेगा, उसको मिलनेवाले फल का वर्णन सुनो। एक वर्ष तक निरन्तर मेरी पूजा करने पर जो फल मिलता है वह सारा फल केवल शिवरात्रि को मेरा पूजन करने से मनुष्य तत्काल प्राप्त कर लेता है। जैसे पूर्ण चन्द्रमा का उदय समुद्र की वृद्धि का अवसर है, उसी प्रकार यह शिवरात्रि तिथि मेरे धर्म की वृद्धि का समय हैं इस तिथि में मेरी स्थापना आदि का मंगलमय उत्सव होना चाहिए।[2]

शिवजी ने अपने लिंग दर्शन के संबंध में बताया है–मार्गशीर्ष मास में आर्द्रा नक्षत्र होने पर मेरी मूर्ति या, लिंग का दर्शन और पूजन करता है उसे मैं कार्त्तिकेय से भी अधिक प्यार करता हूँ।

लिंग पूजन से सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य, सार्ष्टि और सायुज्य इन सभी मुक्तियों का अधिकार प्राप्त हो सकता है। शिक्षक के दो रूप है 'सकल' और 'निष्कल'। 'ब्रह्मभाव' निस्कल एवं 'महेश्वरभाव' रूप है। शिव ही परब्रह्म है। कल (सगुण) और अकल (निर्गुन)–ये दोनों मेरे ही स्वरूप हैं। जीवों पर अनुग्रह ही शिव का कार्य है। सर्वत्र समरूप से स्थित हैं एवं सबके आत्मा है।

जहाँ-जहाँ लिंग की स्थापना कर पूजन की जाती है वहाँ शिव जी प्रतिष्ठित हो जाते हैं। शिवलिंग की स्थापना, मूर्ति स्थापना से अधिक महत्वपूर्ण है। ब्रह्मा एवं विष्णु से शिवजी ने बताया कि–

"अन्य सभी जीव अनात्मरूप हैं, इसमें संदेह नहीं हैं सर्ग से लेकर अनुग्रह तक (आत्मा या ईश्वर से भिन्न) जो जगत्-संबंधी पाँच कृत्य हैं, वे सदा मेरे ही हैं, मेरे अतिरिक्त दूसरे किसी के नहीं है;

क्योंकि मैं ही सबका ईश्वर हूँ। पहले मेरी ब्रह्मरूपता का बोध कराने के लिए 'निष्कल' लिंग प्रकट हुआ था, फिर तुम दोनों को अज्ञात ईश्वरत्व का स्पष्ट साक्षात्कार कराने के लिए मैं साक्षात् जगदीश्वर ही 'सकल' रूप में तत्काल प्रकट हो गया। अतः मुझमें जो ईशत्व है, उसे ही मेरा सकलरूप जानना चाहिए तथा जो यह मेरा निष्कल स्तम्भ है, वह मेरे ब्रह्मस्वरूप का बोध करानेवाला है। हे पुत्रों! लिंग-लक्षणयुक्त होने के कारण यह मेरा ही लिंग (चिह्न) है। तुम दोनों को प्रतिदिन यहाँ रहकर इसका पूजन करना चाहिए। यह मेरा ही स्वरूप है और मेरे सामीप्य की प्राप्ति करानेवाला है। लिंग और लिंगी में नित्य अभेद होने के कारण मेरे इस लिंग का महान पुरुषों को भी पूजन करना चाहिए।[3]

शिवलिंग की स्थापना के संबंध में ऋषियों ने कहा है कि-अनुकूल समय में शुभ काल में पवित्र तीर्थ अथवा नदी के तट पर शिवलिंग की स्थापना करनी चाहिए और वहाँ नित्य-पूजन हो सके, इसका ख्याल रखना चाहिए। पार्थिव द्रव्य, जलमय द्रव्य अथवा धातुमय पदार्थ से शिवलिंग का निर्माण कर पूजन करने से तत्काल पूजा का फल मिलता हैं शिवलिंग को चल एवं अचल रूप से प्रतिष्ठित किया जा सकता है। अचल रूप प्रतिष्ठित शिवलिंग को श्रेष्ठ माना जाता है। शिवलिंग का पीठ मण्डलाकार (गोल), चौकोर, त्रिकोण अथवा खट्वांग के आकार (ऊपर गोल तथा आगे लम्बा) का होना चाहिए। ऐसा लिंगपीठ अत्यन्त ही फल देनेवाला होता है।

शिवलिंग का निर्माण मिट्टी, प्रस्तर या लोहे आदि से किया जाना चाहिए।

इस संबंध में कहा गया है कि–"पहले मिट्टी, प्रस्तर आदि से अथवा लोहे आदि से शिवलिंग का निर्माण करना चाहिए। जिस द्रव्य से 'शिवलिंग का निर्माण हो, उसी से उसका पीठ भी बनाना चाहिए–यही स्थावर (अचल प्रतिष्ठा वाले) शिवलिंग की विशेष बात है। चर (चल प्रतिष्ठा वाले) शिवलिंग में भी लिंग और पीठ का एक ही उपादान होना चाहिए, किंतु बाणलिंग के लिए यह नियम नहीं है। लिंग की लम्बाई निर्माणकर्त्ता के बाहर अंगुल के बराबर होनी चाहिए-ऐसा ही शिवलिंग उत्तम कहा गया है। इससे कम लम्बाई हो तो फल में कमी आ जाती है, अधिक हो तो कोई दोष नहीं है। चर लिंग में भी वैसा ही नियम है उसकी लम्बाई कम-से-कम कर्त्ता के एक अंगुल के बराबर होनी चाहिए।"[4]

सभी जीवों (स्थावर एवं जंगम) को संतुष्ट कर एक गड्ढे में सोना एवं नवरत्न भरकर मन्त्रोच्चार के साथ महादेवजी का ध्यान किया जाना चाहिए। उसके बाद नादघोष युक्त महामंत्र ओंकार का उच्चारण कर शिवलिंग का स्थापना करनी चाहिए।

स्थापित शिवलिंग के संबंध में कहा गया है कि–"मनुष्यों द्वारा स्थापित शिवलिंग से चारों ओर सौ हाथ तक पुण्यक्षेत्र कहा गया है तथा ऋषियों द्वारा स्थापित शिवलिंग के चारों ओर एक हजार हाथ तक पुण्यक्षेत्र होता है। इसी प्रकार देवताओं द्वारा स्थापित शिवलिंग के चारों ओर भी एक हजार हाथ तक पुण्यक्षेत्र समझना चाहिए। स्वयंभू लिंग के चारों ओर तो एक हजार धनुष (चार हजार हाथ)–तक पुण्य क्षेत्र होता है।"[5]

यदि मनुष्य नियमित रूप से शिवलिंग का पूजन न कर सके तो, नियमित शिवलिंग दर्शन से भी कल्याण होता है। तुरन्त शिवलिंग का निर्माण, मिट्टी, आटा, गाय के गोबर, फूल, कनेरपुष्प, फल, गुड़, मक्खन, भस्म अथवा अन्न आदि से किया जा सकता है और तद्नुसार उसका पूजन किया जा सकता है। इतना ही नहीं, अँगूठे आदि पर भी पूजन किया जा सकता है। भगवान शिव अपने, भक्तों के लिए सर्वत्र विराजमान रहते हैं। श्रद्धापूर्वक शिवलिंग का दान भी करना चाहिए। इससे भी शिवलोक की प्राप्ति होती है।

शिवलिंग स्वरूप के लिए कहा गया है कि-शिवभक्त के नाभि के नीचे के भाग को ब्रह्मभाग तथाा नाभि से ऊपर से कण्ठ पर्यन्त भाग को विष्णुभाग और मुख को शिवलिंग स्वरूप माना गया है।

शिवलिंग से संबंधित यह उल्लेखनीय है कि–"शिवलिंग को शिव मानकर अपने को शक्तिरूप समझकर, शक्तिलिंग को देवी और अपने को शिवरूप समझकर, शिवलिंग को नादरूप तथा शक्ति को बिन्दुरूप मानकर परस्पर सटे हुए शक्तिलिंग और शिवलिंग के प्रति उपप्रधान और प्रधान की भावना रखते हुए जो शिव और शक्ति को पूजन करता है, वह मूलरूपी भावना करने के कारण शिवरूप ही है। शक्तिमुक्त शिवयंत्र रूप होने के कारण शिव के ही स्वरूप है।"[6]

प्रथम लिंग प्रणव ही है जो समस्त, अभीष्ट वस्तुओं को देने वाला है। सकल, लिंग स्थूललिंग एवं निष्कल लिंग सूक्ष्म लिंग होता है। पंचाक्षर मंत्र स्थूल लिंग कहलाता है। ये दोनों लिंग का पूजन मोझदायी है। पौरुषलिंग और प्रकृतिलिंग के अनेक रूप हमारे समक्ष हैं–जैसे–स्वयंभूलिंग, बिन्दुलिंग, प्रतिष्ठित लिंग, चरलिंग एवं गुरुलिंग।

शिव ही स्वयं वृक्षों की अंकुर की भाँति नादलिंग के रूप में व्यक्त हैं जिन्हें स्वयंभू लिंग कहा गया है।

शिव की प्रतिष्ठा और आवाह्न बिन्दुलिंग कहलाता है।

देवताओं एवं ऋषियों के द्वारा आत्मसिद्धि के लिए शुद्ध भावनाओं से शिवलिंग की स्थापना को ही पौरुषलिंग या प्रतिष्ठित लिंग कहते हैं कटि, हृदय एवं मस्तक तीनों स्थानों में जो लिंग की भावना है, वह आध्यात्मिक लिंग ही चरलिंग कहलाता है।

गुरु की पूजा ही परमात्मा शिव की पूजा है। जिह्वारूपी लिंग को ही गुरुलिंग की मान्यता दी गयी है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि शिवभक्त को हमेशा शिवलिंग का ही आश्रित होकर वास करना चाहिए। शिवलिंग के आश्रय में रहने वाले शिवरूप ही हो जाते है। भगवान शिव की कृपा जिनपर रहती है वो शिवज्ञान को प्राप्त कर लेते हैं। मानव जीवन में शिवलिंग पूजन की महिमा व्यापक एवं मोक्षप्रदायक है। आधुनिक समय में पार्थिव शिवलिंग की पूजा की व्यापकता पाई जाती है। यह भी कहा गया कि सत्ययुग में मणिलिंग, त्रेतायुग में स्वर्णलिंग तथा द्वापर युग में पारदलिंग को श्रेष्ठ माना गया है।

संदर्भ ग्रंथ

1. श्री शिवमहापुराणांक, *कल्याण*, पृ.-93, संख्या 1, वर्ष 1991
2. वही
3. वही, पृ. 95
4. वही, पृ. 97
5. वही पृ. 100
6. वही

विद्यापति की रचनाओं में शिव

डॉ. राम कृष्ण झा

एसोसिएट प्रोफेसर, शासकीय महाविद्यालय, देवसर, मध्य प्रदेश

शास्त्रों में वर्णित है कि पंचभूत, पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश एवं वायु के संगठन से बना यह जगत् शिवमय है। कहते हैं कि "सारा चराचर जगत् बिन्दु नादस्वरूप हैं, बिन्दु शक्ति है और नाद शिव। इस तरह यह जगत शिव-शक्ति स्वरूप ही है। नाद बिन्दु का और बिन्दु इस जगत का आधार है। ये बिन्दु और नाद (शक्ति और शिव) संपूर्ण जगत के आधाररूप से स्थित हैं। बिंदु और नाद से युक्त सब कुछ शिवस्वरूप हैं, क्योंकि वही सबका आधार है।"[1]

भारत का एक राज्य है बिहार, जिसमें मिथिला प्रांत की अपनी अनूठी, आध्यात्मिक विशेषता है। मिथिला में 13वीं शताब्दी के आस-पास महान विभूति विद्यापति ने जन्म लिया। इन्होंने गीतावली (गीतों का संग्रह) की रचना की जिनमें शिव, दुर्गा, राधा-कृष्ण आदि देवी-देवताओं का गहन व्याख्यान मिलता है। विद्यापति, शिव के महान भक्त, अनन्यतय उपासक थे। इनके संबंध में किंवदंति है कि भगवान शिव साक्षात् इनके घर में उगना के रूप में नौकर थे। विद्यापति उनकी भक्ति से ओत-प्रोत थे। उन्हें शिव ने कहा था कि जिस दिन यह बात दूसरे को मालूम हो जाएगा तो, मैं सदा के लिए चला जाऊँगा। ऐसा ही हुआ एक दिन विद्यापति जी की पत्नी उगना को मारने उठी, तभी विद्यापति जी के मुँह से निकल गया—"अरे नहीं वो तो शिव है"—यह सुनते ही उगना गायब हो गए। उन्हीं के विरह में विद्यापति जी ने यह गीत लिखा—

उगना रे मोरे कतए गेला है
कृतए गेलाह शिव किदहु भेलाह
भाँग नहिं बटुआ रूसि बैसलाह
जोहि-हेरि आनि देल है हँसि उठलाह
जे मोरा उगनाक कहत उदेस
ताहि देब कर कंगन संदेश
नन्दन वन बीच भेटल महेश
गौरी मन हरखित मेटल कलेस
विद्यापति मन उगनास काज
नहि हितकर मोर तिहुअन राज

एक अन्य गीत में विद्यापति ने शिव को अपने जीवन के दुखों से अवगत कराया है। उनका कहना है कि हे भोलानाथ मेरी पूरी जिन्दगी, जन्म से लेकर आज तक दुख में ही बीती है। मेरे सपने में भी सुख नहीं मिला। इसलिए मेरी भवसागर रूपी जिंदगी को आप पार लगाइए और मुझे सद्गति प्रदान करें।

यह गीत निम्नांकित है
कखन हरब दुख मोर, हे भोलानाथ
दुखहि जनम मेल दुखहि गमाओल
सुख सपने हु नहि भेल
एहि भव सागर कतहु थाह नहि
भैरव धरू करूआर
भनई विद्यापति मीर भोलानाथ गति
करू अन्त मोहि पार।

शिव से संबंधित उन्होंने अनेक रचनाएँ की जो मिथिलावासी के कंठ में सुरक्षित है।

भगवद्भक्ति के संबंध में 'कल्याण'[2] में लिखा है कि–

'श्रद्धा' भक्ति का आधार है। इसलिए देवताओं का, जिनमें लोगों का श्रद्धा है, अस्तित्व स्वीकार किया जाता है। स्नेह न करने की अपेक्षा कुछ स्नेह करना श्रेष्ठतर है; क्योंकि स्नेह करने से हम स्वयं में स्वयं को केंद्रित कर लेते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य छोटे देवी-देवता उस एक सर्वोपरि सत्ता के ही रूप माने जाते हैं। इस तथ्य को जोर देकर कहा गया है कि अन्य भक्त अपने-अपने गन्तव्य को प्राप्त करते हैं, किन्तु जो सर्वोपरि भगवान् का भक्त है, वही असीम आनन्द को प्राप्त करता है। जब तक उपासना श्रद्धापूर्वक की जाती है, यह अंतःकरण को पवित्र बनाती है और उच्चस्तर की चेतना के लिए मन को तैयार करती है। हर एक अपनी अभिलाषा के अनुरूप ही भगवान् के रूप का आकलन करता है।''

भक्ति की परिभाषा बताते हुए मधुसूदन सरस्वती ने लिखा है–

द्रवीभावपूर्विका हि मनसो भगवदकारता
सविकल्पक व त्ति रूपा भक्तिः।

यह एक ऐसी मानसिक स्थिति है, जिसमें चित्त प्रेमोन्मत्तता से द्रवीभूत होकर भगवद्कार बन जाता है।

वास्तव में यही प्रेमोन्मन्तता शिव के प्रति विद्यापति को थी। जैसा कि हम जानते है कि काव्य के दो पक्ष हैं-अनुभूति पक्ष एवं अभिव्यक्ति पक्ष। इसे ही भाव-पक्ष एवं कला पक्ष कहते हैं। जब भाव पक्ष एवं कला पक्ष का समन्वय होता है तभी काव्य एवं गीतों में चमत्कारिता आती है। अपने 'कीर्तिलता' रचना में कहा है कि बाल चन्द्रमा (द्वितीया का चन्द्रमा) और विद्यापति की भाषा का दुर्जन परिहास नहीं कर सकता क्योंकि वह तो शिव के मस्तक पर विराजमान है और विद्यापति की भाषा रसिको को रस-सिक्त एवं मुग्ध करने वाली है।

''बालचन्द विज्जवाई भाला
दुहु नहि लग गई दुज्जन हासा
ओ परमेसर हर-सिर सोहई
ई गिच्चम नागर मन मोहई।''

विद्यापति भाषा के शिल्पकार थे। ऐसी भाषा-सौष्ठव अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। शब्द-संयोजन, भाषा-साहित्य, कलात्मक अभिव्यक्ति इनकी रचना का परिचायक है। सहज-भाषा का चुनाव इन्होंने किया जो बिहार के मिथिला क्षेत्र में लोक गीत बनकर प्रचलित हुआ और यह कहा जाता है कि इनके गीतों में संगीतात्मकता भरी पड़ी है। विद्यापति ने शिव-वंदना की है–

जय जय शंकर जय त्रिपुरारी
जय जय पुरुष जयति अध नारि
आध धवल तनु आधा गोरा
आध सहज कुच आध कटोरा
आध हड़माल आध गजमोति
आध चानन सोह आध विभूति
आध चेतन मति आधा मोरा
आध पटोर आध मुँज डोरा
आध जोग आध भोग विलासा
आध पिधान आध दिगबाससा
आध चान आध सिंदुर सोभा
आध विरूप आध जग लोभा
भने कबि-नत विधाता जाने
दुई कए बाँटल एक पराने

अर्थात–हे शंकर आपकी जय हो। अर्द्धनारी आपकी जय हो, आपका आधा शरीर श्वेता आधा गौरवर्ण हैं आपके शरीर का आधे भाग में मनुष्य जैसे कुच है एवं आधे में नारी कुच है। गले की भाला में आधी मुंडमाल एवं आधी गज-मुक्ता है। आधे शरीर में चंदन लगा हुआ है एवं आधे में विभूति (भस्म) है। बुद्धि में आधी चेतन है तो आधी भोली। आधे शरीर में रेशमी वस्त्र धारण है एवं आधे में मूँज की रस्सियाँ हैं। आधा भाग आपका योगी है तो आधा भोग-विलास में लिप्त है। आधा शरीर सुंदर वस्त्र तो आधा हाथी के चर्म से ढँका हुआ हैं, आधे मुख पर चन्द्रमा तो

आधे मुख पर सिंदूर सुशोभित हैं, इतना ही नहीं आपका आधा रूप तो भयानक है और आधा अपने अपूर्व सौंदर्य से जगत को मोहित करने वाला है। विद्यापति कहते है कि इस बात को परमात्मा ही जानते हैं कि एक शरीर को दो भागों में कैसे बाँट दिया गया है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि इस गीत में विद्यापति ने शिव के अर्द्धनारीश्वर रूप को बताया है एवं उनकी बंदना की गई है।

शिव से संबंधित विद्यापति की एक रचना इस प्रकार है–

हरि जनि बिसरब मो ममिता
हम नर अधम चरम पतिता
तुअ सम अधम-उधार न दोसर
हम सन जग नहिं पतिता
जम के द्वार जवाब कओन देव
जखन बुझत निजगुन कर बतिया
जब हम किंकर कोपि पठाएल
तखन के होत धरहरिया
भन विद्यापति सुकवि पुनीत मति
संकर विपरित बानी
असरन-सरन चरन सिर नाओल,
दया करू दिअ सूलपानी।

इस गीत में विद्यापति ने शंकर भगवान से कहा है कि मैं पापी और पतित हूँ लेकिन आप मेरे प्रति अपनी ममता को मत छोड़ दीजिए। आपके जैसा कोई देव नहीं जो पतितों का उद्धार कर सके। आप शरणहीनों को शरण देने वाले हैं इसलिए मैं आपके चरणों में सिर नवाता हूँ। आप मुझ पर दया कीजिए।

स्पष्ट है कि इनकी रचनाओं में संगीतात्मकता के साथ-साथ शिव भक्ति की अविरल धारा प्रवाहित है। जिसमें वर्षों से शिव भक्त आप्लावित हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. शिवपुराण, पृ. 71
2. वि. सं 2021, अंक-1, जनवरी 1965 ई., पृ-27

मिथिलांचन के संगीत में महेशवाणी एवं नचारी

प्रो. निशा झा

स्नातकोत्तर संगीत विभाग
तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर

प्राचीन काल से मिथिला की भूमि, पवित्र, पावन भूमि रही है। यहाँ की जलवायु अधिकांशतः शीतल एवं सुखद है। यह प्रमाण मिलता है कि मिथिला बहुत समय तक वैदिक एवं उपनिषद् विद्या का केन्द्र रहा है। राज दरबार से लेकर समाज के छोटे से छोटे लोगों के घर में सदा ज्ञान की ज्योति जलती रही है। बहुत से आक्रमण भी यहाँ हुए, लेकिन अपनी विद्या, परम्परा एवं संस्कृति को मिथिला रक्षा कर बचाए हुए है।

मिथिलांचल के संबंध में डॉ. मोहननन्द झा जी ने लिखा है कि–

"मिथिलांचल में संप्रदाय नाम से किसी का भी विशेष महत्व नहीं है। वैष्णव, शाक्त एवं शैव तीनों की उपासना समान भक्ति एवं श्रद्धा से होती है। फिर भी अढ़रन-ढ़रन आशुतोष शिव की आराधना सकल जनसाधारण में विशेष रूप से देखा जाता है। इसका एक कारण यह भी है कि अन्य देवी-देवताओं की आराधना में भक्तों को बहुत सारे विधानों एंव सामग्रियों की आवश्यकता पड़ती है, जबकि शिव की आराधना में न्यूनतम सामग्रियों की आवश्यकता होती है। कुछ न जुट पाया तो केवल एक लोटा जल, दो दो आक्-धतुर के श्वेत फूल, केवल भेंट चढ़ाकर भी शिव को प्रसन्न किया जा सकता है, ऐसा विश्वास भी लोगों में जमा हुआ है। फिर ऐसे आशुतोष शिव की आराधना में विशेष तारतम्य हो भी कैसे? मिथिला बच्चों के अक्षराम्भ में ही "ओना मासीधं" से कराया जाता है जो "ऊँ नमः शिवाय सिद्धमय" का अपभ्रश रूप है। चतुर्दशी और शिवरात्रि में लोग उपवास करते हैं और दशहरा में प्रत्येक मिथिला परिवार में दुर्गापाठ के पूर्व गीली मिट्टी का शिवलिंग बनाकर पूजा का विधान है। यहाँ तक कि मिथिला में कन्या एवं पुत्रवधु का कार्यपटुता का मूल्यांकन भी पार्थिव शिवलिंग बनाने एवं तकली चर्खे पर उनके के लिए सूत काटकर जनेऊ तैयार करने की क्षमता से किया जाता है। यों आजकल ये बातें आधुनिकता के विपरीत समझी जाने लगी है।"[1]

मिथिला में सांप्रदायिकता नहीं रहा। हिंदू धर्म के लोग ही ज्यादातर यहाँ रहे एवं हिन्दु मान्य देवताओं को श्रद्धा एवं भक्ति भाव से पूजते रहे। यहाँ की परम्परा में निम्नांकित पूजन प्रचलित रहाँ

1. शिव
2. शक्ति
3. विष्णु

वैसे मिथिला में महादेव की पूजा सबसे अधिक प्रचलित रही है। यहाँ के लोगों को यह विश्वास रहा है कि अंत में शिव ही लोगों को मुक्ति देते हैं। इसलिए मिथिला में शिव से संबंधित गीत प्रचलित है।

शक्ति पूजा भी विस्तृत रूप में होता है। मिथिला में अनेक शक्ति पीठ हैं, जिनमें आठों सिद्धियों को प्राप्त करने की कामना की जाती है।

नवरात्रि पूजा में, कन्या कुमारियों का भोजन एवं पूजन आदिशक्ति उपासना के परिचायक हैं। इनके अतिरिक्त मिथिला में विष्णु भगवान का भी विशेष पूजन होता है। शिवपूजा मिथिला की अनूठी विशेषता है, प्रायः मिथिला के हर गाँव में शिव-मंदिर बना होता है। इसलिए मिथिला क्षेत्र में शिव से संबंधित लोकगीतों की भी भरमार है। यहाँ की परम्परा में शिव संबंधित गीतों को दो भागों में बाँटा गया हैं

1. महेशवाणी एवं
2. नचारी

महेशवाणी गीतों में शिव-गौरी विवाह का वर्णन होता है एवं नचारी गीतों में शिव संबंधित भक्ति गीत होते हैं।

इन गीतों के संबंध में 'मैथिली साहित्यक इतिहास' में लिखा है कि–"नचारी गीत विशुद्ध स्तुति गीत है एवं महेशवाणी में गौरी विवाह तथा महादेव के ग हस्थ जीवन का वर्णन होता है।"[2]

इस संबंध में डॉ. मोहनानन्द जी ने लिखा है कि–"शिव के गुणगान संबंधी मिथिला में अनेकों गीत प्रचलित हैं, जिसकी अपनी खास विशेषता है, महेशवाणी और नचारी में शिव के गुणगान के हेतु विशिष्ट प्रकार के लोकगीत हैं। जहाँ महेशवाणी में शिव के प्रति भक्ति भावनाओं की गाथा है वहीं दूसरी ओर नचारी में शिव-पार्वती के विवाह एवं दाम्पत्य जीवन से संबंधित वर्णन है। इन गीतों के माध्यम से जहाँ एक ओर भक्ति-भाव और श्रद्धा की शिक्षा मिलती है वहीं दूसरी ओर यदा कदा इन गीतों में व्यंग्य विनोद के आधार पर विभिन्न सामाजिक कुरीतियों पर कटाक्ष भी किया है। इन लोकगीतों के माध्यम से तात्कालिक सामाजिक परिस्थिति का भी आभास हमें मिलता है। नचारी और महेशवाणीयों के रचनाकारों में विद्यापति, कारनाट, हर्षनाथ झा, चन्दा झा प्रभृति कुछ ऐसे शिष्ट-साहित्य सर्जक भी हैं जिनके ऐसे पद लोकगीतों की तरह ही जन सामान्य के कंठों में बसी है।[3]

मिथिला में प्रचलित महेशवाणी एवं नचारी गीत निम्नांकित हैं–

1. महेशवाणी

हम नहि आजु रहब एहि आँगन जौं बुढ़ होएत जमाइए गे माई
एक त बैरी भेल बीध-विधाता, दोसर धिआ केर बाप
तेसर बैरी भेल नारद बाभन, जे बुढ़ आनल जमाए, गेमाई
पहिलुक बाजन डमरू तोड़ब, दोसरे तोड़ब स्डमाल
बड़द हाँकि बरिआति बैलाएब, धिआ लए जाएब पड़ाए, गेमाई
धोती लोटा पोथी पतरा, सेहो सम लेबन्हि छिनाए
जओ किछु बजता नारद बाभन, दाढ़ी लए घिसिआएब गेमाई
भनई विद्यापति सुनु हे मनाईनि, दृढ़ करू अपन गेआन
शुभ-शुभ कए शिव गौरि बिआहु, गौरी-हर एक समान गेमाई।

प्रस्तुत गीत में गौरी के विवाह के लिए नारद को उत्तरदायी ठहराया गया है। गौरी की माता का कहना है कि हम इस घर से चले जाएँगें, लेकिन शिव के साथ गौरी का विवाह नहीं करेंगे। गौरी के पिता, विधाता, नारद सभी दोषी हैं। लेकिन कवि विद्यापति कहते हैं कि शिव गौरी के समान हैं। शुभ-शुभ करके गौरी का विवाह कीजिए।

2. बड़ अजगुत भेल, गौरी के एहन बड़ विधिकिए देल
पूड़ी जिलेबी कोहबर घरगेल, कोबरे में भोला बाबा भाँग फाँकि लेल
तेल फूलेल कोहबर घरगेल, कोबरे में भोला बाबा भष्म लेपि लेल
शाल दोशाल कोबर घर गेल, कोबरे में भोला बाबा छाल ओढ़ि गेल

प्रस्तुत गीत में गौरी के संबंध में कहा गया है कि विधाता क्यूँ गौरी को ऐसा वर दिए जो भाँग खाते हैं, भष्म लगाते हैं एवं छाल ओढ़ते हैं। इस गीत में

भोला बाबा के रूप के कारण मन अत्यन्त व्यथित है।

3. हम नहि शिव संग गौरी बियाहब
मोरा गौरी रहति कुमारी, गेमाई
भूत प्रेत बरियाति अनलनि
मोरा जिया गेल डराई, गे माई
गालो, चटकल केशो पाकल
पैरों में फाटल बेमाई, गे माई
गौरी लए भागब गौरी लए जाएब
गौरी लए नैहर पराएब, गे माई
भनहि विद्यापति सुनुहे मनाइनि
इहो थिका त्रिभुवन नाथ, गे माई

प्रस्तुत गीत में शिव के रूप की चर्चा है। गौरी की माता का कहना है कि—हम गौरी का विवाह नहीं करेंगे इनसे। गौरी कुमारि ही रहेगी। इनका तो बराती ही है भूत-प्रेत। गाल चटका हुआ है, केश भी पका हुआ है, हम गौरी को लेकर नैहर चले जाएँगे। लेकिन विद्यापति का कहना है कि-नहीं ये त्रिभुवन नाथ हैं।

4. बड़दो न बान्ळे गौरा तोर भँगिया
अँगने अँगने खाय बथार
रोमए गेलहुँ कि टूकि टूकि माल
कार्तिक गणपति दुनु चरवाहि
इहो छोट छोट बालक बड़द हराह
एक मन होइए शिव के दियनि उपराग
देहरि बैसल छथिन बासुकी नाग

प्रस्तुत गीत में कहा गया है शिव अपने बड़द को बाँधकर भी नहि रखते हैं। कार्तिक-गणपति को चरवाहा रखे हैं। लेकिन ये दोनों बालक भी अच्छे नहीं है। मन करता है कि शिव को, जाकर यह सारी बात कह दें लेकिन द्वार के सामने ही बासुकी नाग बैठा हुआ है।

4. शिव छथि लागल दुआरि
इन्द्र चंद्र दिग्पाल वरूण चढ़ि चढ़ि निज असवारी
साजि बरात हेमंत घर आएल
नग्र शोर मेल भारी
पुरहित ब्रह्म चारो भुख लए देत ध्वनि उच्चारि
परिछन चलालि माए मनाइनि लए कंचन के थारी
नारद के हम किरे विगाड़, आनल भँगया भिरवारी

प्रस्तुत गीत में शिव के बारात आगमन की चर्चा है गौरी (पार्वती) को माता का कहना है कि हम नारद का क्या बिगाड़े हैं, जो ऐसा भंगिया भिरवारी को मेरे द्वार पर लेकर आया है।

नचारी गीत

1. बाबा कोना कोना के दुनिया अहाँ बनेलिये यौ
दुनिया में पठेलिये यौ ना
ककरो बेटा परसँ बेटा ककरो बेटी पर सँ बेटी
ककरो जीवन भर के बाँझिन बनेलिये यौ ना
ककरो घोड़ा पर सँ घोड़ा ककरो हाथी पर सँ हाथी
ककरो जीवन भर के दरिद्र बनेलिये यौ ना
ककरो कोठी पर सँ कोठी, ककरो महल अटारी
ककरो गाछी तर में जीवन बितेलिये यौ ना

प्रस्तुत गीत में महादेव की लीला की चर्चा की गयी है। कहा गया है कि आप के द्वारा बनाए इस दुनिया में हर व्यक्ति को अलग-अलग ढंग से भेजा गया है। सभी व्यक्तियों में समानता नहीं है।

2. जोगिया एक हम देखल गे माई
अनहद रूप कहलो नहि जाई
पंच वदन तिन नयन बिसाला
बसन बिहून ओढ़न बघछाला
सिर बह गंगा तिलक सोहे चन्दा
देखि सरूप मेटल दुखदंदा
एहि जोगिआ लए रहलि भवानी
मन आनल वर कऔन गुन जानी
कुल नहि सिल नहि तात महतारी
बएस हिनक थिक लछ जुग चारी
मन विद्यापति सुनु ए मनाइनि
एहो जोगिया थिक त्रिभुवन दानी

प्रस्तुत गीत में शिव के रूप की विस्तृत चर्चा की गयी है। शिव अनहद है जिसकी व्याख्या की नहीं जा सकती। विशाल नयन, पंचवदन, बघछाला ओढ़े हुए हैं। सिर से गंगा बह रही है, तिलक पर चंद्रमा विराजमान है। यही शिव जोगिया हैं।

महेशवाणी और नचारी गीतों के अतिरिक्त मिथिलांचल में महादेव संबंधित गीतों के अनेक प्रकार मिलते हैं, जिनमें एक प्रकार है चैती धुन पर आधारित महादेव के गीत

डिमडिम डमरू बजावै हो रामा, भोला रंगरसिया
अपने महादेव भाँग उपजावे, गौरी से भाँग पिसावे हो रामा
भोला रंगरसिया अपने महादेव पूजा पर बैसला, गौरी सँ टहल करावे हो रामा,
अपने महादेव बसहा चरावे गौरि सँ डोरिया धरावे हो रामा,

प्रस्तुत गीत को चैती धुन पर गाने की परम्परा है।

वास्तव में भगवद्भक्ति की गेय अभिव्यक्ति ही अपने इष्टदेव की उपासना एवं आराधना होती है।

श्रीमद्भागवत् में व्यास जी ने लिखा है, जो वचन भगवन्नाम, यश और प्रभाव रहित उच्चरित होता है, उससे पाप की ही वृद्धि होती है। अतः सज्जन पुरुष भगवान् के नाम, यश, गुण को सुनते हैं और स्वयं भी गाते हैं यथा–

तद्वाग्विसर्गो जनताघविप्लवो
यस्मिन प्रतिश्लोकमबद्ध वत्यपि
नामान्यनन्तस्य यशोऽकितानि यत्
श्रृण्वन्ति गायन्ति गृणान्ति साधवः।[4]

भगवद्भक्ति की यही भावना मिथिलावासियों के रग रग में धुली हुई है।

शिवमहिमा, शिव कल्याणकारी भावना से ओत प्रोत मिथिलावासी हर क्षण शिव प्रार्थना, स्तुति, भक्ति में तल्लीन रहते हैं। यही गेय परम्परा मिथिला को सांस्कृतिक, आध्यात्मिक रूप में श्रेष्ठ बनाए हुए है, जिसकी कोमल, सहज भाव शिव को समर्पित है।

संदर्भ ग्रंथ

1. डॉ. मोहनानन्द झा, मिथिला सांस्कृतिक परम्परा में लोकगीत, पृ.-89
2. श्री जायकान्त मिश्र, मैथिली साहित्यक इतिहास, पृ.-39
3. डॉ. मोहन नंद झा, मिथिला सांस्कृतिक परम्परा में लोकगीत, पृ.-189-90
4. श्री मद्भागवत्, कल्याण, पृ. सं, 131, वर्ष 39, अंक-1

शिव गीतों में राग-रस

श्वेता सत्यम

शोधार्थी,
विश्वविद्यालय संगीत विभाग
तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर

मानव जाति के अन्तः करण में निवास करने वाली विशिष्ट भावनाओं के सतोगुण प्रधान परमोत्कर्ष को ही शास्त्राज्ञों ने रस कहा है। श्रव्य काव्य के पठन अथवा श्रवण एवं दृष्य काव्य के दर्शन तथा श्रवण में जो अलौकिक आनन्द प्राप्त होता है, वही काव्य में रस कहलाता है। रस से जिस भाव की अनुभूति होती है वह रस का स्थायी भाव होता है। रस छंद और अलंकार-काव्य रचना के आवश्यक अवयव है।

रस का शाब्दिक अर्थ है–निचोड़। काव्य में जो आनन्द आता है वह ही काव्य का रस है, काव्य में आने वाला आनंद अर्थात, रस लौकिक न हो कर अलौकिक होता है, रस काव्य की आत्मा है, संस्कृत में कहा गया है कि–

"रसात्मक वाक्यं काव्यं"

अर्थात रस युक्त वाक्य ही काव्य है।

यह अन्तःकरण की वह शक्ति है, जिसके कारण इन्द्रियाँ अपना कार्य करती हैं। मन कल्पना करता है, स्वप्न की स्मृति रहती है। रस आनन्द रूप है और यही आनन्द विशाल का, विराट का अनुभव है। यही आनन्द अन्य सभी अनुभवों का अतिक्रमण भी है तो विषयों से अपने आप हट जाता है परन्तु उन विषयों के प्रति लगाव नहीं छूटता। रस का प्रयोग सार तत्व के अर्थ चरक, श्रुति में मिलता है। दूसरे अर्थ में अव्यव तत्व के रूप में मिलता है। सब कुछ नष्ट हो जाए व्यर्थ हो जाए, पर वो भाव रूप है। रस के रूप में जिसकी निष्पति होती है, वह भाव ही है। जब रस बन जाता है तो भाव नहीं रहता। केवल रस रहता है। उसकी भावना अपना रूपान्तर कर लेती है। यह अपूर्व की उत्पति है। नाट्य की प्रस्तुति में सबकुछ पहले से रहता है, ज्ञात रहता है। सुना हुआ या देखा हुआ रहता है, इसके बावजूद कुछ नया अनुभव मिलता है। वह अनुभव दूसरे अनुभवों को पीछे छोड़ देता है।

नाट्यशास्त्र में भरत मुनि ने रस की व्याख्या करते हुए कहा है।

"विभावानुभावव्यभिचारी संयोगाद्र रस निष्पत्तिः"

अर्थात् विभाव अनुभाव व्यभिचारी भाव के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है सुप्रसिद्ध साहित्य दर्पण में कहा गया है हृदय, का स्थाई भाव विभाव अनुभाव और संचारी भाव का संयोग प्राप्त कर लेता है, तो रस रूप में निष्पन्न हो जाता है। रीति काल के प्रमुख कवि देव ने इस की परिभाषा इन शब्दों में की है।

"जो विभाव अनुभाव अस, विभचारिणु करि होई।
थिति की पूरन वासना, सुकवि कहत रस होई।"

इस प्रकार रस के चार अंग है। स्थाई भाव, विभाव, अनुभाव और संचारी भाव।

रस के प्रकार

भरत ने प्रथम आठ रसों में शृंगार रौद्र तथा विभत्स को प्रधान मानकर क्रमशः हास्य, करुण, अद्‌भूत तथा भयानक रस की उत्पत्ति मानी है। शृंगार के अनुकृति से हास्य, रौद्र तथा वीर, कर्म के परिणाम स्वरूप करूण तथा अद्‌भूत एवं विभत्स के कारण भयानक इस उत्पन्न होता है।

सारे विद्वानों ने रस को अलग-अलग ढंग से माना है।

ब्रह्मा के अनुसार

1.	शृंगार रस	-	रति
2	हास्य रस	-	हास्य
3.	करूणा रस	-	शोक
4.	रौद्र रस	-	क्रोध
5	वीर रस	-	उत्साह
6	भयानक रस	-	भय
7	विभत्स रस	-	घृणा, जुगुप्सा
8.	अद्‌भूत रस	-	आचर्य
9.	शान्त रस	-	निर्वेद

अभिनव गुप्त ने भी नौ रस को माना है।

आचार्य भरत ने शान्त रस को नहीं माना है।

रस की ऐसी महत्ता ही संगीत और साहित्य की रीढ़ है। ऐसा ही संगीत साहित्य का समन्वय शिव स्तुति में रस-भाव बनकर उभरता है।

शिव की साधना, उपासना एवं भक्ति में शृंगार रस, रौद्र रस भयानक रस और अद्‌भुत रस की प्राप्ति होती है। यदि शास्त्रीय संगीत में रागों में बंदिशों को सुना जाए तो निश्चय ही अद्‌भुत रस एवं भयानक रस की सृष्टि होगी।

राग मुलतानी (अद्‌भुत रस)

स्थाई–

जाके भ ग छाल ताके, मोतियन की माल
जाके नाद डकरू जाके, सिंगी अधर रे

अंतरा–

डिम डिम डिम डमरू बाजे
जटा जूट गंग छाई
खण्ड, मुण्ड माल जाके
बांधबर पट रे [1]

ध्रुपद

राग शुद्ध कल्याण

स्थाई–

नरहरि शिवशंकर, मुकुटधर जटाधर
रमाधर उमाधर, नंदीधर गरूणधर

अंतरा–

कैलाशधर, बैंकुठधर, पीताम्बर व्याध्रावर
चक्रधर, शूलधर, भस्म धर ललाट पर

राग दरबारी-कान्हड़ा

स्थाई–

चंद्र सजग ललाट पर, त्रैलोचन त्रिपुरारी
नीलकंठ रजाधर, अस्तुति सब तुमरी करत

अंतरा–

व्याध्रांबर धारन कर, बैजनाथ भूतेश्वर
ब्रदिनाथ, विषेश्वर, भवसागर पार करत[2]

राग बंगाल बिलावल

स्थाई–

देवन देव महादेव त्रिशूल खजर डमरू लिए
वाहन बैल ललाट चंद्रमा लिए [3]

ऐसे गीत वास्तव में रस के द्‌योतक है। शिव के सभी गीत चाहे वह शास्त्रीय संगीत के हों या लोक गीत के हो, भयानक रस रौद्र रस एवं अद्‌भुत रस से ही संबंधित होते है।

रस की दृष्टि से निम्नांकित प्रचलित शिव गीत है–

शिव के शृंगार से संबंधित भयानक रस के गीत–

भयानक रस

चलू देखब शिव के शृंगार
हे सहैलियाँ फूलों से सजी
डिमक डिमक को डमरू बाजे
ठुमक ठुमक कर, शंभु नाचे

जहाँ से बहे गंगाधार
हे सहेलियाँ फूलों से सजी
अंग भभूत गले मुण्डमाला
नैना अति विसाल
बाधम्बर कटि कछनी काछे
नाग फरे फुकार
हे सहेलियाँ फूलों से सजी[4]

भयानक रस से संबंधित शिव के प्रचलित स्त्रोत इस प्रकार है–

जटाटवीगज्जल प्रवाहपावित स्थले
गलेडवलम्ब्य लम्बितां भुजंग तुगे मालिकाम्

अर्थात्

शंकर भगवान ने जटारूपी अटवी (वन) से निसृत गंगाजी के गिरते प्रवाह से पवित्र किए गए गले में सर्पो की विशाल माला को धारण किए हुए है।

इस प्रकार यह परिलक्षित होता है कि शिव के विभिन्न गीतों से विभिन्न प्रकार क रस समाहित हैं, जो श्रोताओं को रस की अनुभूति कराते हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. विधिवत् संगीत .ाक्षिण द्वितीय भाग, पं. तेजपाल सिंह, सिंह बंधु, पृ. सं.-95-96
2. राग दर्पण, भाग-3, पं. जगदीश नारायण पाठक, पृ.-158
3. वही, पृ.-19
4. अभिनव गीतांजलि, भाग-3, पं. रामाश्रय झा 'रामरंग', पृ.-227
5. सिद्ध प्रार्थना, योग पब्लिकेशन ट्रस्ट, पृ.-27

शिव योग

डॉ. रैना कुमारी

कुमार रामानन्द स्मारक + 2 विद्यालय
धरहरा, मुंगेर, बिहार

जीवात्म का और परमात्मा का मिलन ही योग है। योग के संबंध में विविध शास्त्रों में विभिन्न बातें लिखी गई है। कुछ लोग योग को कर्म के साथ जोड़ते हैं, कुल लोग आचरण और व्यवहार के साथ जोड़ते हैं और योग को मोक्ष प्राप्ति का साधन बताते हैं। वेद, पुराण, उपनिषद् एवं गीता आदि सभी धर्म ग्रंथों में योग का चमत्कारी रूप हमें देखने को मिलता है।

योग के संबंध में कल्याण में लिखा है कि–

"योग का यथार्थ अर्थ समझना चाहिए। वह है 'श्री भगवान् के साथ युक्त हो जाना', 'भगवान को यथार्थ में पा लेना; या भगवान प्रेम अथवा भगवद्रूप हो जाना। यही जीव का परम ध्येय है। जबतक जीव इस स्थिति में नहीं पहुँच जाएगा, तबतक न उसको त प्ति होगी, न शांति मिलेगी, न भटकना बन्द होगा और न किसी पूर्ण, नित्य, सनातन, आनन्दरूप तत्व के संयोग की अतृप्त और प्रच्छन्न आकांक्षा की पूर्ति होगी। इस पूर्ण के संयोग का नाम ही योग है। यह पूर्ण की प्राप्ति का प्रयत्न जिस क्रिया के साथ जुड़ता है, वही योग बन जाता है। कर्मयोग, ज्ञान-योग, भक्तियोग, ध्यानयोग, सांख्ययोग, राजयोग, मन्त्रयोग, लययोग, हठयोग आदि इसी के नाम हैं।"[1]

इन सभी को भगवत् प्राप्ति का माध्यम माना गया है। योग में वाणी, मन, बुद्धि एवं शरीर का समन्वय होता है।

चित्तवृति का निरोध करने से योग की साधना होती है। ये पाँच प्रकार के हैं–

मंत्रयोग, लययोग, हठयोग, राजयोग और शिवयोग ऊँ एकाक्षरात्मक है। इसकी साधना की जाती है। एक अक्षर, द्वयअक्षर, षड्क्षर और अष्टाक्षर से योग की जा सकती है।

एकाक्षरं द्वयक्षरं वाषड्क्षरमथापि वा।
अष्टाक्षरं वा मोक्षाय मन्त्रयोगी जपेत् सदा ॥

ये मन्त्र इस प्रकार हैं–

ऊँ-एकाक्षरात्मक

हंसः-द्वयक्षरात्मक

ऊँ नमः शिवाय - षडक्षरात्मक

ऊँ ह्रां हीं नमः शिवाय-अष्टाक्षरात्मक

ये मंत्र मोक्षप्राप्ति के लिए जपने का विधान है।

राजयोग–

"जो मनुष्य बाह्य लक्ष्य, मध्य लक्ष्य, अन्तर्लक्ष्यादि से अथवा अन्तर्मुद्राज्ञान से आत्मसाक्षात्कार कर लेता है उसी को मनो व्यापार रहित 'राजयोगी' कहते हैं।

शास्त्रों में कहा गया है कि राज योग और शिवयोग में विशेष रूप से कोई भेद नहीं है।

न भेदः शिवयोस्य राजयोगस्य तत्वतः
शिवार्थिना तथा प्येवमुक्तों बुद्धैः प्रवृद्धये।

अर्थात् शिव के साक्षात्कार की इच्छा रखने वाले को ज्ञान व द्धि के लिए ही 'शिवयोग' है।

शिवयोग के संबंध में यह वर्णन मिलता है कि–

''यम-नियमों से जो युक्त है उसी को 'भक्त' कहते हैं। आसन से जो युक्त हैं उसको महेश्वर कहते हैं। चराचर प्रपंच का जिस लिंग में लय होता है उस लिंग को 'आकाश' कहते हैं, ऐसे आकाश में जो मनुष्य अपने प्राण को लय करता है उसी को 'प्राणलिंगी' कहते हैं। प्रत्याहार से जो युक्त है उसको 'प्रसादी' कहते हैं। शिव परमात्मा को ध्यान धारणादि से जो युक्त है उसी को 'शरण' कहते हैं। समाधि में जिसका मन स्थिर हुआ है और जिसको अद्वैत भाव उत्पन्न हुआ है उसी को 'ऐक्य' कहते हैं। इस प्रकार अष्टांगरूपी षट्स्थलों का आचरण करने वाला सज्जन ही 'वीरशैव' होता है।''[2]

शिवयोग के पाँच प्रकार है–शिव ज्ञान, शिवभक्ति, शिवध्यान, शिवव्रत और शिवपूजा।

वैसे तो कर्मयोग, ज्ञानयोग, एवं भक्तियोग इन तीनों को पारस्परिक संबंध है।

क्रिया योग/कर्मयोग–'तप, स्वाध्याय एवं ईश्वर प्रणिधान ही क्रियायोग है।

तपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः।

अपने कर्मों में कुशलता लाना ही कर्मयोग है। इसे ही सहज योग की संज्ञा दी गई है।

ज्ञानयोग–

ज्ञान, प्रत्येक कर्म की मूलभूत आवश्यकता है। ज्ञान योग से स्वयं की जानकारी मिलती है। ज्ञानयोग का लक्ष्य ही है, कि ज्ञान के माध्यम से ईश्वरीय स्वरूप की जानकारी हो एवं सत्य को समझने की शक्ति हो।

भक्तियोग

भक्तियोग एक ऐसा अवलम्ब है जिसके प्रभाव से ईश्वर भी भक्त के वश में हो जाते हैं। इसके अन्तर्गत श्रवण, कीर्त्तन, स्मरण, पादसेवन अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य और आत्म निवेदन हैं, इन्हें ही नवधा भक्ति कहते हैं।

शिव की महिमा है कि–''जो शिवनाम रूप नौका पर आरूढ़ हो संसाररूपी समुद्र को पार करते हैं, उनके जन्म मरणरूप संसार के मूलभूत ये सारे पाप निश्चय ही नष्ट हो जाते हैं। महामुने! संसार के मूलभूत पातकरूपी पादपों को शिवनामरूपी कुठार से निश्चय ही नाश हो जाता है। जो पापरूपी दावानल से पीड़ित हैं, इन्हें शिव नाम रूपी अम त का पान करना चाहिए। पापों के दावानल से दुग्ध होने वाले लोगों को उस शिव-नामाम त के बिना शांति नहीं मिल सकती। जो शिवनाम रूपी सुधा की वृष्टिजनित धारा में गोते लगा रहे हैं, वे संसाररूपी दावानल के बीच में खड़े होने पर भी कदापि शोक के भागी नहीं होते। जिन महात्माओं के मन में शिवनाम के प्रति बड़ी भारी भक्ति है, ऐसे लोगों की सहसा और सर्वथा मुक्ति होती है।''[3]

शिवनामामृत व्याकरण में वर्णित है कि शिव के साथ जीव की संधि हो सकती है और उसी संधि को 'योग' कहा गया है। यह एक ऐसी संधि की अवस्था है जिसमें जीव, शिव के साथ मिल जाता है, लेकिन फिर भी अस्तित्व प थक ही रहता है। यह शिवयोग, अध्यात्म योग है जो अनिर्वचनीय है।

संदर्भ ग्रंथ

1. कल्याण, योगांक-616, पृ.-101
2. कल्याण-616, पृ.-27
3. कल्याण, शिवोपासनांक, पृ.-145

शिव-ताण्डव

निलेश चन्द्र त्रिवेदी

शोधार्थी स्नातकोत्तर संगीत विभाग, तिलकामांझी भागलपुर, विश्वविद्यालय, भागलपुर

नाट्यशास्त्र में वर्णित है कि भगवान शिव ने तण्डु मुनि को रेचक, अंगहार और पिण्डी बन्धों का सृजन कर समर्पित कर दिया। इसलिए माना जाता है कि तण्डु मुनि के द्वारा ही ताण्डव नृत्य प्रचलन में आया है। इस नृत्य से संबंधित एक शिव स्तोत्र है जिसे "शिव ताण्डव स्तोत्र" कहते हैं, जो निम्नांकित है–

जटाटवीगलज्जवल प्रवाहपावित स्थले
गलेऽवलम्ब्य लम्बितां भुजंगतुंगमालिकाम्
डमड्डमड्डमन्निनादवड्डमर्वयं
चकार चण्ड ताण्डवं तनोतु नः शिव शिवम।

इसका अर्थ है कि–"जिन्होंने जटारूपी अटवी (वन) से निकलती हुई विशाल माला को धारणकर, डमरू के डम-डम शब्दों से मण्डित प्रचण्ड ताण्डव (नृत्य) किया, वे शिवजी हमारे कल्याण का विस्तार करें।"[1]

इस ताण्डव नृत्य के बहुत से प्रकार हैं जो हमें शास्त्रों में प्राप्त होते हैं। भाव-प्रकाश ग्रंथ में ताण्डव के निम्नांकित प्रकार प्राप्त होते हैं।

1. उच्चण्ड–इसमें वेग तथा शक्तिपूर्ण करण, अंगहार, आकाशचारी और भ्रमरियों का प्रयोग किया जाता है, तथा रौद्र, वीभत्स और भयानक रसों को उद्धीप्त किया जाता है।

2. चण्ड–इसमें धीमी गति से नृत्य करते हुए भूमिचारी, करण और अंगहारों का प्रयोग किया जाता है और वीर तथा रौद्र रसों को उद्धीप्त किया जाता है।

3. प्रचण्ड–इसमें वेगपूर्वक उछलने वाले करण, भ्रमरियों का प्रयोग करते हुए रौद्र तथा वीभत्स रस को उद्धीप्त किया जाता है।

4. प्रापण–यह देसी ताण्डव का प्रकार है।

5. प्रेरण–यह भी देसी ताण्डव का प्रकार है।[2]

ताण्डव के संबंध में नन्दि ने इस प्रकार के प्रमुख भेद का वर्णन किया है–

1. सान्ध्य ताण्डव

कहा जाता है कि प्राचीन काल में हिमाच्छादित कैलाश पर त्रिलोकमाता पार्वती स्वर्ण सिंहासन पर विराजमान थीं। सृष्टि, प्रकार और अंधकार के बीच धुल रही थी। माता-पार्वती ने शूलपाणि (शिव) से इस अवसर पर नृत्य करने का अनुरोध किया, तब सरस्वती ने वीणा-वादन किया, इन्द्र ने वंशी-वादन किया, ब्रह्मा ने ताल दी, रमा भगवती ने गायन किया तथा विष्णु ने मृदंग बजाया। अन्य सभी देव चारों ओर एकत्र होकर ईश्वर की स्तुति में निमग्न हो गए। इस प्रकार भगवान शिव ने नृत्य किया। उत्कीर्ण अभिलेख कहते है–यह नृत्य आप सबकी रक्षा करें।" यह सृष्टि की उत्पत्ति का नृत्य था और अभी तक विश्व में किसी आसुरी शक्ति का जन्म नहीं हुआ था।

2. आनन्द ताण्डव

अपने भक्तों एवं अनुचरों की रक्षा के लिए भगवान शिव ने आनन्द ताण्डव किया था। दक्षिण भारत के चिदम्बरम मंदिर में स्थित नटराज की प्रतिमा इसी भाव का प्रतिनिधित्व करती है, प्रतिमा

चतुर्भुजी है जिसके दो हाथों में डमरू और अग्नि है तथा शेष दो हाथों में से सीधा हाथ अभयहस्त मुद्रा में है तथा बायाँ हाथ दण्डहस्त मुद्रा में है, जो अनुग्रह का प्रतीक है। बायाँ पैर कुचित मुद्रा में स्थित है और सीधा पैर मुक्ति के लिए लालायित जीवात्मा पर प्रहाररत है। इसे 'सदा ताण्डव' भी कहते है।

इस नृत्य के दार्शनिक विश्लेषण के अनुसार चिदम्बरम् प्रत्येक मनुष्य का हृदय है जहाँ नटराज भगवान शिव की प्रतिच्छाया आसुरी प्रवृत्तियों से लड़ते हुए माया का उच्छेद करने तथा जीवात्मा को मुक्त करने में निरन्तर प्रयत्नशील है।

3. काली या शक्ति ताण्डव

काली शिव की शक्ति है, जिसे शिव से अलग नहीं किया जा सकता। शंकराचार्य कहते है–शक्ति से संबंध होकर ही शिव में सृटि रचना की क्षमता उत्पन्न होती है और बिना उसके शिव मात्र शव रह जाते है। फिर मुझे जैसा व्यक्ति उस शक्ति के बिना आपके सामने नत्मस्तक होकर स्तुति कैसे कर सकता है।

4. त्रिपुर (या त्रिपुट) ताण्डव

तारक राक्षस के तारकाक्ष, कमलाक्ष तथा विधुन्मालि नाम के 3 पुत्रों का वध करने के पचात् भगवान शिव ने जो नृत्य किया, वह त्रिपुर (त्रिपुट) कहलाया। इन राक्षसों की पत्नियाँ बहुत शुद्ध हृदय वाली थी, जिन्होंने प्रार्थना की थी कि उनके पतियों की कभी मृत्यु न हो। वृद्धावतार के रूप में विष्णु ने समझाया था, कि ये तीनों राक्षस इस विश्व में पैशाचिक प्रवृत्तियों के मूलश्रोत थे, अतः उनकी रक्षा की कामना न करें। इसके बाद राक्षसों का वध करने में पृथ्वी शिव का रथ थी, मेरू पर्वत उनका धनुष था, सूर्य और चंद्र रथ के चक्र थे, आदि शेष उनके धनुष की प्रत्यन्चा थे, विष्णु वाण थे, चारों वेद अव थे और ब्रह्मा मानो सारथी थे। इस प्रकार शिव ने इस त्रिलोकी को पापों से मुक्त किया।

5. सती-शिव-ताण्डव

इस नृत्य में शिव और शक्ति ने मिलकर ताण्डव किया था, जो पुरुष और प्रकृति के मिलन का प्रतीक है। इसमें नृत्य का उद्धत सुकोमल अर्थात ताण्डव और लास्य समाहित है।

6. अर्द्धनारी ताण्डव

यह ताण्डव ईश्वर और प्रकृति की एकता के प्रतीक शिव के आधे अङ्ग समायी हुई पार्वती द्वारा किया गया था। इसीलिए इसे अर्द्धनारी ताण्डव गया है।

7. संहार ताण्डव

कहा जाता है कि पार्वती ने स्वयं को जलाकर राख कर दिया, तब शिव क्रोध में आकर यह उद्धत नृत्य किया जिसके कारण पृथ्वी, आकाश और पाताल सहित सभी देव काँपने लगे। ब्रह्मा, विष्णु और महेश के द्वारा प्रार्थना किए जाने पर ही शिव अपने सामान्य स्वरूप में स्थित हुए।[3]

शिव को सृष्टि का आदि नर्तक माना जाता है। जब वो संध्याकाल में नृत्य करते हैं तो सभी देवतागण उसमें सम्मिलित होते हैं। उस नृत्य की प्रस्तुति के समय ब्रह्मा ताल देते हैं, विष्णु मृदंग वादन करते हैं, तथा सरस्वती वीणा बजाती हैं। इतना ही नहीं सूर्य और चंद्र बाँसुरी वादन करते हैं। नंदी और भृंगी डमरू और मादल बजाते हैं एवं नारद स्वर मिलाते हैं।

ऐसी नृत्यमय व्यवस्था के कारण ही शास्त्रों में कहा गया है "नृत्यमयं जगत्" अर्थात् यह समस्त संसार ही नृत्यमय है। इस नृत्यमय संसार के संचालक शिव ही हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. स्नोत्ररत्नावली, गीताप्रेस, गोरखपुर, पृ.-33
2. भरत नाट्यम अंक-1, लक्ष्मी नारायणगर्ग, संगीत कार्यालय, हाथरस, पृ.-378
3. भरत नाट्यम भाग-1, लक्ष्मी नारायण गर्ग, संगीत कार्यालय हाथरस, पृ.-380-382

शिव शक्ति एवं वैदिक संदर्भ

अंजली दीक्षित

भोपाल (मध्य प्रदेश)

प्रस्तावना :

शिव ही ब्रह्म है। जो बिना वस्त्र के होते हुए भी भक्तों को अपार सम्पत्ति देने वाले हैं, श्मशान भूमि में निवास करते हुए भी तीनों लोक के स्वामी है, योगि-राज होते हुए भी अर्द्धनारीश्वर है, अजन्मा होते हुए भी अनेक रूपों में अवतरित हैं, अतुल रत्नों के मालिक होते हुए भी भभूत लगाते हैं, वे ही इस संसार के संचालक है, वे ही भगवान शिव है– परमब्रह्म है।

सत्-चित-आनन्द रूप ब्रह्म एक है। वह हमेशा पूर्ण और सब कुछ जानने वाले है। उनका अंत नहीं। वह देशकाल से परे है। वह अमर है, निराकार है, निर्गुण है। वह एक होते हुए भी अनेक है। उसी के अलग-अलग नाम शिव, विष्णु, शक्ति, राम, कृष्ण आदि है। वह अनादि काल से असंख्य रूपों में प्रकट हैं।

ऋक, यजुः और अथर्व वेद में शिव के ईश, ईश्वर, ईशान, रूद्र, कपर्दी, शितिकंठ, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान और सर्वभूतेश आदि नाम बताये गये हैं। अकेले ऋग्वेद की 60-70 ऋचाओं में शिव के नाम, काम, प्रभाव और स्वरूपादि का वर्णन है। यजुर्वेद में क्रोधित शिव को शांत करने के लिए रूद्र का स्वतंत्र विधान किया गया है। अथर्व वेद में इनको सहस्त्रचक्षु, तिग्मायुध, व्रजायुध आदि बताया गया है। सामवेद में इनका अग्नि-स्वरूप स्वीकार किया है।

ऋग्वेद में लिंगोपासना की चर्चा मौजूद है। वैदिक साहित्य के बाद इतिहास, पुराण तथा तंत्रों की उपासना की जाती है। वैदिक साहित्य में, संहिताओं में, ब्राह्मणों में और उपनिषदों में रूद्रादि अनेक नामों से और उमा, विद्या आदि अनेक नामों से उमा-महेश्वर के प्रसंग आते हैं। पुराणों में उन्हीं वैदिक विषयों की व्याख्या की गई है।

ब्रह्म की शक्ति ही शिवा है, शिव-शिवा में कोई भेद नहीं। इसलिए शिवा की महिमा के गुणगान में शिव का ही गुणगान विहित है। शक्ति की अराधना का तात्पर्य ब्रह्म की अराधना ही है क्योंकि शक्ति का अस्तित्व शक्ति मात्र के अस्तित्व से पृथक नहीं हो सकता। **'पुल्लिंग सर्वमीशान स्त्रीलिंग भवत्युभा'** अर्थात 'सृटि में जो पुल्लिंग रूप है, वह सब शिव और स्त्रीलिंग है वह सब उमा है। इसका अभिशाप यही है कि शिव-शिवा में लिंगभेद मात्र का है, भेद है, और कोई भेद नहीं है।

वेदों में शिव शक्ति

शिव और शक्ति क्या है? पहले इनका परिचय देना आवश्यक है। क्योंकि **'देवे परिचयो नास्ति वद पूजा कथं भवेत्'**–अर्थात्, यदि देवता के साथ परिचय ही नहीं हुआ तो फिर पूजा कैसे होगी? परंतु उनकी कृपा के बिना उनका परिचय किसको मिल सकता है? तथापि उनको समझने की जो चेष्टा है वह उन्हीं की करुणा-प्राप्ति की चेष्टा मात्र है।

शिव शब्द का धातुगत अर्थ क्या है? **'शीङ्'** धातु का अर्थ है शयन करना। जिसमें सब शयन करते हैं वही शिव हैं। वही निर्गुण ब्रह्म है। शिव जब अपने स्वरूप में रहते है, जब वह अपनी शक्ति को क्रोडीभूत करके (गोद में लेकर) एक होकर रहते है, तब सृष्टि नहीं होती। वह जब अपनी माया को, अपनी शक्ति को अस्वीकार करते है तब वह उस समय अपने स्वरूप में स्थिर रहते हुए ही सगुण-भाव धारण करते हैं। सगुण अवस्था में वही विश्परूप हो जाते हैं। इस विश्वरूप अवस्था में, जगत में ऐसी कोई वस्तु ही नहीं जो भीतर से विधृत न हो और बाहर शक्ति क्रीड़ा न करती हो। समस्त देवता यही शिव-शक्ति है।

रूद्रहृदयोपनिषद् में शिव-शक्ति के संबंध में जो कहा गया है, सीताराम, राधाकृष्ण–सभी शक्तिजड़ित शक्तिमान के संबंध में भी वही बात पायी जाती है। इसके अतिरिक्त कहते है कि संसार में जो कुछ देखा जाता है, सुना जाता है, स्मरण किया जाता है सभी शिव-शक्ति है। रूद्र नर है, उमा नारी है, रूद्र ब्रह्म है, उमा वाणी है, रूद्र विष्णु है, उमा लक्ष्मी है, रूद्र सूर्य है, उमा छाया है, रूद्र सोम है, उमा तारा है, रूद्र दिन है, रमा रात्रि है, रूद्र यज्ञ है, उमा वेदी है, रूद्र वहि हैं, उमा स्वाहा है, रूद्र वेद हैं, उमा शास्त्र हैं, रूद्र अर्थ है, उमा अक्षर है, रूद्र लिङ्ग हैं, उमा पीठ हैं।

शिव 'इ' कारशून्य होने पर शव हो जाते हैं और शक्ति का अस्तित्व भी शिव अथवा चेतना के बिना नहीं रह जाता। शक्ति जब शिव के साथ मिल जाती है तब वही ब्रह्म और वही ब्रह्ममयी है। शक्ति आत्मा की अस्पन्दस्वरूपिणी है। शक्ति जब स्पन्दस्वरूपिणी होती है तब वही जगत का आकार धारण करने वाली विश्वरूपिणी बनती है। इस प्रकार शक्ति स्पन्दस्वरूपिणी है और अस्पन्दस्वरूपिणी हैं।

शिव और शक्ति–ये परम शिव अर्थात् परम तत्व के दो रूप हैं। शिव कूटस्थ तत्व है और शक्ति परिणामिनी है। संसार के शक्ति का आधार एवं अधिष्ठान शिव है। शिव अव्यक्त, अदृश्य एवं अचल आत्मा है। शक्ति त्रय, चल एवं नामरूप के द्वारा व्यक्त सत्ता है। शक्ति-नटी शिव के अनन्त, शांत एवं गंभीर वक्षःस्थल पर अनन्त कोटि ब्रह्माण्डों का रूप धारण कर तथा उनके अंदर संहार की लीला करती हुई नृत्य करती रहती है।

शिव और शक्ति एक दूसरे से उसी प्रकार अभिन्न है जिस प्रकार सूर्य और उसका प्रकाश, अग्नि और उसका ताप। शिव की अराधना शक्ति की अराधना है और शक्ति की उपासना शिव की उपासना है। इन दो परस्पर विरोधी एवं प्रतिद्वंदी प्रतीत होने वाले तत्वों, शिव और शक्ति की विषमता एवं विरोध का सामंजस्य ही परमात्म तत्व का रहस्य है।

वेद ने विश्व को जो महत्वपूर्ण तथ्य दिये हैं, उनमें एक यह है कि वह परब्रह्म को माता के रूप में प्रस्तुत करता है। परब्रह्म का यह मात स्वरूप मानवों के लिए अद्भुत सहारा बन गया है, क्योंकि सांसारिक प्रेमों में माता का प्रेम ही सबसे सहज माना जाता है। माता से बढ़कर और कोई निःस्वार्थ प्रेम कर नहीं सकता।

पराम्बा कहती है कि समस्त प्राणियों को में ही उत्पन्न करती हूँ। इसके लिए किसी की सहायता अपेक्षित नहीं। जिस तरह वायु किसी दूसरे की सहायता के बिना ही स्वयं बहती रहती है, उसी तरह मैं भी बिना किसी दूसरे की प्रेरणा के स्वेच्छा से सृष्टि-रचना में प्रवृत्त होती हूँ। स्वर्ग के वासी मेरी दिव्य संतना है। मेरे ये पुत्र मेरी सृष्टि की रक्षा में निरंतर लगे रहते हैं। इन देवताओं में प्रधान है– आठ वसु, ग्यारह रूद्र, विष्णु आदि बाहर आदित्य, अग्नि, इन्द्र, अश्विनी कुमार, सोम, त्वष्टा, पूषण और मग यह सभी भिन्न-भिन्न स्थानों पर मेरे लिए ही कार्य करते हैं। शक्ति वस्तुतः ब्रह्म की है। प्रकृति और माया की अभिन्नता का निरूपण करते हुए कहा गया है कि प्रकृति ही माया है और महेश्वर उसके अधिष्ठाता है।

शिवतत्व अर्थात् विश्व मात्र का मूलतत्व परम प्रकाश। जिस प्रकार अग्नितत्व शमी, अरणी आदि पदार्थों में गुप्त है उसी प्रकार शिवतत्व भी चितूस्वरूप में प्रकाशमय होते हुए भी विश्व मात्र में निगूढ़ है। यह निगूढ़ चिति-शक्ति अर्थात् एक दिव्य अप्रकट बल (Divine Potential Energy) है। जिस प्रकार उत्तर और अधर अरणि के मंथन के द्वारा गुप्त अग्नि प्रकट होती है उसी प्रकार शिवतत्व के 'तपस्' के प्रभाव से उसमें मंथन शुरू होता है और आद्याशक्ति महाविस्फुलि के रूप में प्रकट होती है।

शिवतत्व परिपूर्ण अग्नि है, शक्ति उस अग्नि की प्रज्वलित अवस्था का एक महाविस्फुलिङ्ग है अर्थात् शिव चित् है शक्ति चैतन्य है। शिव और शक्ति अविभक्त रूप से भजनीय है। शिव और शक्ति एक ही तत्व के दो महास्वरूप है। चित् के बिना चैतन्य नहीं। चैतन्य क बिना चिति अनुभव में नहीं आती। जैसे चिति के बिना चैतन्य नहीं, वैसे ही शिव के बिना शक्ति भी नहीं। चैतन्य बिना तपस तथा शक्ति के बिना, परम प्रकाश शिव, स्वयम्भू-ज्योति जिसका लिङ्ग अर्थात् चित है वह ज्योतिर्लिङ्ग रूप चिति, प्रकाश रूप शिव, अनुभवगम्य नहीं होता।

अतः शिव के स्वरूप को समझने क लिए 'शक्ति' की उपासना अनिवार्य है और 'शिव' के सान्निधय के बिना 'शक्ति' की उपासना भी नहीं फलती। इसलिये मन्त्रशास्त्र में भी साधकों ने 'शिक्ति' की साधना के लिए 'शिवालय' में—साधन सिद्ध करने का आदेश किया है। तांत्रिक भी इस परम रहस्य का ही अनुसरण करते हैं। शिव और शक्ति अभिभक्त रूप मे ही भजनीय है। साम्व सदाशिव के रूप में ही चिंतनीय है, अर्द्धनारी-नटेश्वर रूप में ही व्यवहरणीय है। साम्ब सदाशिव ही विश्वरूप में विराजते हैं।

चिति निष्फलस्वरूप में शिवतत्व है, सकल रूप में शक्तिरूप है। शिव रूप—आध्यात्म शक्तिरूप अधिदैव बनकर विलास करते हैं। जगतमात्र साम्ब सदाशिव की लीला है, अर्द्धनारी-नटेश्वर की नृत्यकला है।

वस्तुतः चिति-चैतन्य अभेद है। शिव ही जीव है, जीव और शिव में अभेद है।

शिव-शक्ति की जय हो।
साम्ब सदाशिव को नमस्कार हो ॥
ऊँ नमः शिवाय शक्तिरूपाय।

संदर्भ ग्रंथ

1. शिव दर्शन एवं महिमा
2. शक्ति उपासनांक कल्याण संख्या-1 वर्ष 31
3. कल्याण शिवाङ्क (आठवें वर्ष का विशेषांक) संपादक हनुप्रसाद पोद्दार
4. वेद कथाङ्क कल्याण वर्ष 73

विश्व के प्रमुख शिव शक्ति मन्दिर

सुश्री अंजना चौहान

शा. कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्ट महाविद्यालय, दशहरा मैदान,
उज्जैन विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

भारतवर्ष आस्था व विश्वास की पावन भूमि माना जाता है हमारे यहाँ भगवान शिव को आदिनाथ माना जाता है जो मानव कल्याण के अधिष्ठता देव हैं। पुराणों में मान्यता है कि देश-विदेश के जिन-जिन पावन स्थलों पर भगवान शिव स्वयंभू रूप में प्रकट हुए वहाँ साक्षात् शिव का वास माना जाता है। इसी प्रकार बारह स्थानों पर भगवान शिव के पावन ज्योतिर्लिंगों की पूजा सनातन काल से होती आ रही है–

सौराष्ट्रे सोमनाथं च श्रीशैले मल्लिकार्जुनम्।
उज्जयिन्यां महाकालं ओंकारे ममलेश्वरम् ॥1॥
परल्यां वैद्यनाथ च डाकिन्वां भीमशंङ्करम्।
सेतुबन्धे तु रामेशं नागेशं दारुकावने ॥2॥
वाराणास्यां तु विश्वेषं यम्बकं गौतमीतते।
हिमालये तु केदारं घुश्मेषं च शिवालये ॥3॥
एतानि ज्योतिर्लिंगानि सायं प्रातः पठेन्नरः।
सप्तजन्मकृतं पापं स्मरणेन विनश्यति ॥4॥

अर्थात् सौराष्ट्र में सोमनाथ और श्री शैल पर्वत पर मल्लिकार्जुन, उज्जैन में महाकालेश्वर, ओंकारेश्वर में ममलेश्वर। पर्लिगाम के निकट श्री वैद्यनाथ और डाकिनी शिखर पर भीमाशंकर, सेतुबंध में रामेश्वर और द्वारुकावन द्वारका में स्थित है नागेश्वर। वाराणसी में विश्वनाथ के रूप में, गोमती नदी के तट पर यम्ब के रूप में, हिमालय पर केदारनाथ और आखिरी ज्योतिर्लिंग शिव रूप में घृष्णेश्वर के रूप में विराजमान है। भौगोलिक रूप में यदि हम इन ज्योतिर्लिंगों की उत्पत्ति देखें तो गुजरात, आंध्रप्रदेश, मध्यप्रदेश, झारखण्ड, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, उत्तरप्रदेश और उत्तराखण्ड में विद्यमान ये ज्योतिर्लिंग मानव मात्र के कल्याण और मनोकामना पूर्ण करने वाले हैं। इनके दर्शन मात्र से ही प्राणियों के सारे दुःख-कष्ट मिट जाते हैं। भगवान शिव के इन द्वादश ज्योतिर्लिंगों के दर्शन-पूजन तथा आराधना से भक्तों के जन्म जन्मान्तर के पाप व कष्ट मिट जाते हैं। शिवपुराण की कोटिरुद्रसंहिता में उल्लेख मिलता है कि भगवान भोलेनाथ प्राणियों के कल्याण और उनके उद्धार के लिए जगह-जगह तीर्थों में समय-समय पर भ्रमण करते हैं।

शिव उपासकों ने इन लिंगों के माध्यम से भगवान शिव के स्थायीवास को ही एक प्रकार की मान्यता दी है। शिव के आराधक केवल मनुष्य ही नहीं बल्कि देवता, असुर, गंधर्व व राक्षस भी माने जाते हैं। अपने भक्तों को अपनी उपस्थिति का आभास कराने के लिए ही शिव लिंग रूप में विभिन्न तीर्थस्थलों व पर्वतों पर विभिन्न रूपों में विराजमान रहते हैं।

ऐसा माना जाता है कि देवों के देव आदिदेव भगवान शंकर ने जब ज्योतिर्लिंग में स्वयं को देवताओं के सम्मुख प्रकट किया तो सृष्टि के रचयिता ब्रह्मा और पालनकर्ता भगवान विष्णु ने शिव स्तुति की, इससे प्रसन्न होकर भगवान शंकर ने उनको अपने वास्तविक दर्शन दिए। इसके बाद

ऐसी मान्यता है कि भगवान शिव का निर्गुण स्वरूप तीन रूपों में बंटकर अलग-अलग गुणों से युक्त दिखाई देता हैं उनके दाहिने भाग में ब्रह्मा और बाएँ भाग में विष्णु विराजमान रहते हैं।

इसी प्रकार भगवान शिव के इन द्वादश ज्योतिर्लिंगों में अलग-अलग दृष्टान्त जुड़े हुए हैं। सोमनाथ ज्योतिर्लिंग को स्वयं चन्द्रमा द्वारा पूजित माना जाता है। इसी प्रकार मध्यप्रदेश में स्थित महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग एक मात्र दक्षिणमुखी ज्योतिर्लिंग है यहाँ की भस्म आरती विश्वभर में प्रसिद्ध है। काशी स्थित विश्वनाथ ज्योतिर्लिंग के विषय में मान्यता है कि प्रलय आने पर भी यह स्थान सुरक्षित रहेगा।

इन द्वादश ज्योतिर्लिंगों के अतिरिक्त भगवान शंकर पूरे देश में एक व्यापक क्षेत्र में श्रद्धालुओं द्वारा पूजे जाते हैं। बारह ज्योतिर्लिंगों के साथ-साथ भगवान शिव का वास कहे जाने वाले नेपाल के पशु-पतिनाथ मंदिर, जम्मू-कश्मीर में स्थित अमरनाथ मंदिर और तिब्बत में स्थित कैलाश मानसरोवर की अपनी महत्वता है जहाँ प्रतिवर्ष हजारों श्रद्धालु सारे जोखिम उठाकर बम-भोले के नारों से स्थितियों को अपने अनुकूल बनाते हैं। भगवान शिव के सिद्धपीठ हिमालयी क्षेत्रों में सर्वत्र मिलते हैं।

भारतवर्ष में यूं तो 12 ज्योतिर्लिंगों का वर्णन किया गया है जिसमें से 10 ज्योतिर्लिंग तो सामान्य हैं। बाकी दो ज्योतिर्लिंग की मान्यता अलग-अलग है। श्री नागेश्वर और वैद्यनाथ धाम जो महाराष्ट्र में स्थित है। औंढ़ा, नागनाथ, महाराष्ट्र के मराठवाड़ा क्षेत्र में स्थित हिंगोली जिले के औंढा नामक तालुका (तहसील) में स्थित है, तथा यहाँ पर एक अति प्राचीन तथा सुन्दर मंदिर में भगवान भोलेनाथ के बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक आठवें क्रम के ज्योतिर्लिंग बागेशं दारूकावने स्थित हैं, और इसी वजह से इस स्थान का महत्व प्राचीन धर्म ग्रन्थों तथा पुराणों में भी मिलता है।

महाराष्ट्र राज्य के मराठवाड़ा में पटली बीड जिले में एक प्रसिद्ध ग्राम है। पटली कंटिपुर, मध्यरेखा वैजयंती या जयंती के रूप में भी जाना जाता है। यह बीड जिले में अंबेजोगोई से 26 किलोमीटर दूर है। पटली ज्योतिर्लिंग के कारण प्रसिद्ध हैं, जिसका नाम वैद्यनाथ मंदिर (वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग) है। भारत के नक्शे पर कन्याकुमारी से उज्जैन के मध्य एक रेखा खिंची जाए तो उस रेखा पर आपको पटली ग्राम मिलेगा, यह ग्राम मेरूपर्वत अथवा नागनारायण पहाड़ की एक ढलान पर बसा है। ब्रह्मा, वेणु एवं सरस्वती नदियों के आस-पास बसा पटली प्राचीन ग्राम है। इस ग्राम का क्षेत्र पुराणकालीन घटनाओं का साक्षी है।

दो अन्य धाम जिनमें से एक वैद्यनाथ धाम जो झारखण्ड में है तथा दूसरा नागेश्वर धाम गुजरात में है। वैद्यनाथ मन्दिर, देवघर द्वादश ज्योतिर्लिंग में एक पुराणकालीन मन्दिर हैं जो झारखण्ड के देवघर नामक प्रसिद्ध स्थान पर अवस्थित है। पवित्र तीर्थ होने के कारण लोग इसे वैद्यनाथ धाम भी कहते हैं। जहाँ पर यह मन्दिर स्थित है उस स्थान को देवघर अर्थात् देवताओं का घर कहते हैं। वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग स्थित होने के कारण इस स्थान को देवघर नाम मिला है। यह ज्योतिर्लिंग एक सिद्धपीठ है। कहा जाता है कि यहाँ पर आने वाले भक्तों की सारी मनोकामनाएँ पूर्ण होती है, इस कारण इस लिंग को कामना लिंग भी कहा जाता है।

नागेश्वर मन्दिर एक प्रसिद्ध मन्दिर है जो भगवान शिव को समर्पित है। यह द्वारका, गुजरात के बाहरी क्षेत्र में स्थित है। यह शिवजी के बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक है। हिन्दू धर्म के अनुसार नागेश्वर अर्थात् नागों का ईश्वर होता है। यह विष आदि के बचाव का सांकेतिक भी है। रूद्र संहिता में इन भगवान को दारूकावने नागेा कहा गया है। भगवान शिव का यह प्रसिद्ध ज्योतिर्लिंग गुजरात प्रांत में द्वारका पुरी से लगभग 17 मील की दूरी पर स्थित है। इस पवित्र ज्योतिर्लिंग के दर्शन की शास्त्रों में बड़ी महिमा बताई गई है। कहा गया है कि जो श्रद्धापूर्वक इसकी उत्पत्ति और माहात्म्य की कथा सुनेगा वह सारे पापों से छुटकारा पाकर समस्त

सुखों का भोग करता हुआ अंत में भगवान शिव के परम पवित्र दिव्य धाम को प्राप्त होगा।

इसके अतिरिक्त पशुपतिनाथ जी नेपाल में, अमरनाथ जी जम्मू-कश्मीर तथा कैलाश मानसरोवर तिब्बत में स्थित है। उत्तराखण्ड के टिहरी जनपद में चीन की सीमा पर ओम पर्वत व खतलिंग महादेव सुरम्ध म्लेशियरों के बीच में स्थित हैं। खलिंग को उत्तराखण्ड में इसी मानयता के चलते शिव के पाँचवें धाम के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है।

इसी प्रकार हिन्दू पुराणों के अनुसार जहाँ-जहाँ सती के अंग के टुकड़े, धारण किए वस्त्र या आभूषण गिरे, वहाँ-वहाँ शक्तिपीठ अस्तित्व में आया। ये शक्तिपीठ पूरे भारतीय महाद्वीप पर फैले हुए हैं। देवी पुराण में 51 शक्तिपीठों का वर्णन है। हालांकि देवी भागवत में जहाँ 108 और देवी गीता में 72 शक्तिपीठों का वर्णन मिलता है, वही तन्त्रचूरामणि में 52 शक्तिपीठ बताए गए है। देवी पुराण में 51 शक्तिपीठों की ही चर्चा की गई है। इन 51 शक्तिपीठों में से कुछ विदेश में भी है। वर्तमान में भारत में 42, पाकिस्तान में 1, बांग्लादेश में 4, श्रीलंका में 1, तिब्बत में 1 तथा नेपाल में 2 शक्तिपीठ है। जिनका वर्णन इस प्रकार है–

(1) किरीट शक्तिपीठ (पश्चिम बंगाल)–किरीट शक्तिपीठ, पश्चिम बंगाल के हुगली नदी के तट पर लालबाग कोट पर स्थित है। यहाँ सती माता का किरीट यानी शिराभूषण या मुकुट गिरा था।

(2) काव्यायनी शक्तिपीठ (वृन्दावन, मथुरा)–वृन्दावन, मथुरा के भुतेश्वर में स्थित है काव्यायनी वृन्दावन शक्तिपीठ जहाँ सती का केशपाश गिरा था।

(3) करवीर शक्तिपीठ (कोल्हापुर, महाराष्ट्र)–महाराष्ट्र के कोल्हापुर में स्थित है यह शक्तिपीठ, जहाँ माता का त्रिनेत्र गिरा था। यहाँ महालक्ष्मी का निज निवास माना जाता है।

(4) श्री पर्वत शक्तिपीठ–इस शक्तिपीठ को लेकर विद्वानों में मतान्तर है कुछ विद्वानों का मानना है कि इस पीठ का मूल स्थान लद्दाख है जबकि कुछ का मानना है कि यह असम के सिलहट में है जहाँ माता सती का दक्षिणतल्प यानी कपाल गिरा था।

(5) विशालाक्षी शक्तिपीठ (वाराणसी, उत्तर प्रदेश)–उत्तरप्रदेश, वाराणसी के मीरघाट पर स्थित है शक्तिपीठ जहाँ माता सती के दाहिने कान के मणि गिरे थे।

(6) गोदावरी तट शक्तिपीठ–आंध्रप्रदेश के कब्बूर में गोदावरी तट पर स्थित है यह शक्तिपीठ, जहाँ माता का वामगण्ड यानी बाचां कपोल गिरा था।

(7) शुचीन्द्रम शक्तिपीठ (कन्याकुमारी, तमिलनाडु)–तमिलनाडु, कन्याकुमारी के त्रिसागर संगम स्थल पर स्थित है। यह शक्तिपीठ जहाँ सती के उकध्वदन्त गिरे थे।

(8) पंच सागर शक्तिपीठ–इस शक्तिपीठ का कोई निश्चित स्थान ज्ञात नहीं है लेकिन वहाँ माता के नीचे के दन्त गिरे थे।

(9) ज्वालामुखी शक्तिपीठ (काँगड़ा, हिमाचल प्रदेश)–हिमाचल प्रदेश के काँगड़ा में स्थित है यह शक्तिपीठ, जहाँ सती की जिह्वा गिरी थी।

(10) भैरव पर्वत शक्तिपीठ–इस शक्तिपीठ को लेकर विद्वानों में मतभेद है। कुछ गुजरात के गिरीनार के निकट भैरव पर्वत को तो कुछ मध्यप्रदेश के उज्जैन के निकट क्षिप्रा नदी तट पर वास्तविक शक्तिपीठ मानते हैं, जहाँ माता का उफध्व ओठ गिरा है।

इसी प्रकार देश-विदेश में माँ शक्ति के मन्दिर के नाम इस प्रकार है–अह्यास शक्तिपीठ (लाबपुर, पश्चिम बंगाल), जन-स्थान शक्तिपीठ (महाराष्ट्र, नासिक), महामाया शक्तिपीठ (अमरनाथ, जम्मू-कश्मीर), नन्दीपुर शक्तिपीठ (सैन्धया, पश्चिम बंगाल), श्री शैल शक्तिपीठ (कुर्नूल, आंध्रप्रदेश), नलहटी शक्तिपीठ (बोलपुर, पश्चिम बंगाल), मिथिला शक्तिपीठ (नेपाल, जनकपुर), रत्नावली शक्तिपीठ

(चेन्नई), अम्बाजी शक्तिपीठ (गिरनार पर्वत, गुजरात), जालंधर शक्तिपीठ (जालंधर, पंजाब), रामगिरी शक्तिपीठ (उत्तरप्रदेश), वैद्यनाथ शक्तिपीठ (गिरीडीह, झारखण्ड), वक्त्रोवर शक्तिपीठ (सैन्धया, पश्चिम बंगाल), कण्यकाश्रम कन्याकुमारी शक्तिपीठ (कन्याकुमारी, तमिलनाडु), बहुला शक्तिपीठ (केतुग्राम पश्चिम बंगाल), उज्जयिनी शक्तिपीठ (उज्जैन, मध्यप्रदेश), मणियेविका शक्तिपीठ (पुष्कर, राजस्थान), प्रयाग शक्तिपीठ (इलाहाबाद, उत्तरप्रदेश), विरजाक्षेत्रा उत्कल शक्तिपीठ (उड़ीसा), कांची शक्तिपीठ (कांचीवरम, तमिलनाडु), कालमाध्य शक्तिपीठ, शोण शक्तिपीठ (अमरकंटक, मध्यप्रदेश), कामाख्या शक्तिपीठ (गुवाहाटी, असम), जयन्ती शक्तिपीठ (मेघालय), मगध् शक्तिपीठ (पटना, बिहार), त्रिस्तोता शक्तिपीठ (शालवाड़ी गांव, पश्चिम बंगाल), देवीकूप पीठ कुरूक्षेत्र शक्तिपीठ (कुरूक्षेत्र, हरियाणा), युगाद्या शक्तिपीठ, क्षीरग्राम शक्तिपीठ (बर्दमान, पश्चिम बंगाल), विराट का अम्बिका शक्तिपीठ (जयपुर, राजस्थान), कालीघाट शक्तिपीठ (पश्चिम बंगाल, कोलकाता), मानस शक्तिपीठ (तिब्बत), लंका शक्तिपीठ (श्रीलंका), गण्डकी शक्तिपीठ (गण्डकी नदी, नेपाल), मुद्येवरी शक्तिपीठ (काठमाण्डू, नेपाल), हिंगलाज शक्तिपीठ (ब्लूचिस्तान, पाकिस्तान), सुगंध शक्तिपीठ (खुलना, बांग्लादेश), करतोयाघाट शक्तिपीठ (भवानीपुर, बांग्लादेश), चट्टल शक्तिपीठ (चटगांव, बांग्लादेश), यशोट शक्तिपीठ (जैसोर, बांग्लादेश)।

इस प्रकार विश्व में शिव-शक्ति मन्दिर की जो जानकारी मुझे मिल पाई, वह मेरे द्वारा इस शोध-पत्र में बताई गई है।

संगीत में शिवशक्ति

अरुण कुमार

शोधार्थी, संगीत (गायन)

राजा मानसिंह तोमर संगीत एवं कला विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

पुराणादि ग्रन्थों में अनेक देवी-देवताओं के जो वर्णन मिलते हैं उनसे यह निष्कर्ष निकलता है कि इनका विशेष आध्यात्मिक रहस्य है और ये जीवन के उच्च आदर्शों के प्रतीक हैं इसके लिए विभिन्न विद्वानों ने अपने स्तर से वर्णन किया है इससे यह प्रतीत होता है कि आदिकाल से दो भिन्न प्रकार के "आदर्श" मनुष्य को प्रेरित करते रहे है—पहला शिव और दूसरा विष्णु। शिव इस आदर्श के प्रतीक माने जाते हैं जब ज्ञान के द्वारा मनुष्य का कल्याण संभव है इसके विपरीत विष्णु जो कर्म द्वारा विशेषकर या याज्ञिक अनुष्ठानों द्वारा पूर्व कल्याण संभव है। शैव आदर्श भौतिक सम्पत्ति को हेय मानता है इसलिए पूर्ण वैराग्य को प्रश्रय देता है इसलिए शिव का स्थान श्मशान में जीवन के भौतिक भाग (शरीर) का अन्त होता है और वहां लोगों को वैराग्य के प्रति आकर्षित होते देखा गया है। शिव का अर्थ ही है कल्याण स्वरूप।

मानवीय भाषा में शिव का यह जो 'करना' व 'होना' है उसकी जो अभिव्यक्ति है वही उसकी शक्ति है उसी पृष्ठभूमि में बदलाव की प्रतीत शक्ति है अतः कह सकते है कि शिव और शक्ति कोई दो अलग-अलग सत्ताएं नहीं हैं जब शिव अभिव्यक्ति होता है तो शक्ति हो जाता है और जब शक्ति अभिव्यक्त समेट ले तो शिव हो जाती है। नटराज रूप में हमें शिव और शक्ति का साथ मिल जाते हैं। नटराज में नृत्य का जो रूपक है वह नाद से भी जुड़ा है बिना संगीत के नृत्य संभव नहीं है नट और नाट्य शब्द दोनों एक ही धातु से बने हुए है भरतमुनि के अनुसार नाट्य में संगीत तो अनिवार्य ही है। शिव और शक्ति के एकीकरण को हृदय में धारण करने के लिए चैतन्य के नाद से स्वयं को जोड़ना होगा यह नाद केवल ध्वनि मात्र नहीं है बल्कि ये चेतना की गूँज है। यह नाद है प्रेम का जो अविभाजित चैतन्य की ओर ले जाता है जहाँ कोई दूसरा नहीं होता, भेद नहीं होता जहाँ सिर्फ अपनत्व होता है उस हृदय में नाद स्वंय बज उठता है नटराज का नृत्य थिरक उठता है और शिव उठता है।

धार्मिक मान्यताओं के आधार पर संगीत में शिव-शक्ति का विभिन्न रूपों में योगदान देखने को मिलता है। कुछ विद्वान आज भी संगीत की उत्पत्ति ओम से मानते हैं यह अपने अन्दर तीन शक्तियों को समाहित किये हुए है जिसे 'अ' शब्द जन्म का उत्पत्ति का प्रतीक है 'उ' शब्द धारक पालक व रक्षा का प्रतीक है। 'म' शब्द विलय व शक्ति का प्रतीक है। अतः ओम के यह शब्द शक्तियों के प्रतीक माने जाते हैं अतः ओम वेदों के बीज मंत्र हैं। इसी बीज मंत्र से सृटि की उत्पत्ति मानी गई है और इसी से नाद की भी उत्पत्ति मानी गई है इस प्रकार शब्द और स्वर दोनों की उत्पत्ति 'ओम' से मानी गई है 'ओम' ही संगीत के जन्म का मुख्य आधार है यह सत्य तो पाश्चात्य विद्वान भी मानते है। इन्होंने

'ओम' शब्द को एक शक्ति के रूप में माना है एवं इस शब्द के बोलने से शरीर में एक विशेष प्रकार का स्पंदन होता है।

एक अन्य मत के अनुसार 'शिव' ने पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण तथा आकाश की ओर के अपने पाँचों मुखों से पांच राग भैरव, हिण्डोल, मेघ, दीपक राग बनाया तथा पार्वती ने छठा राग कौशिक बनाया।

संगीत प्रकृति के हर कण में मौजूद है। भगवान 'शिव' को संगीत का जनक माना जाता है 'शिव महापुराण' के अनुसार 'शिव' के पहले संगीत के बारे में किसी को भी जानकारी नहीं थी वाद्य यंत्रों को बजाना और गाना उस समय कोई नहीं जानता था क्योंकि 'शिव' ही इस ब्रह्माण्ड शक्ति में सर्वप्रथम आये हैं। पुराणों के अनुसार सृष्टि के आरंभ में ब्रह्मानंद से जब 'शिव' प्रकट हुये तो उनके साथ 'सत' 'रज' तथा 'यम' ये तीनों गुण भी जन्में थे यही तीनों गुण शिव के तीन शूल यानी त्रिशूल कहलाये। भगवान 'शिव' दो प्रकार से ताण्डव करते थे जब वो गुस्सा करते हैं तब बिना डमरू के ताण्डव करना तथा बिना गुस्से में डमरू के साथ ताण्डव नृत्य करते थे, लेकिन वो शांति की अवस्था में होते थे तब नाद करते थे नाद और भगवान शिव का अटूट सम्बंध है क्योंकि नाद एक ऐसी ध्वनि है जिसे 'ओम' कहा जाता है पौराणिक मत है कि 'ओम' से ही भगवान शिव का जन्म हुआ है। संगीत के सात स्वर तो आते जाते रहते हैं लेकिन उनके आधार नाद ही हैं। नाद से ध्वनि और ध्वनि से वाणी की उत्पत्ति मानी गई है।

नटराज भगवान शिव का ही रूप है जब शिव ताण्डव करते हैं तब उनका यह रूप नटराज कहलाता है 'नट' का अर्थ है 'कला' और 'राज' का अर्थ है 'राजा'। अज्ञानता को सिर्फ ज्ञान, संगीत और नृत्य से ही दूर किया जा सकता है। शिव-पुराण के अनुसार शिवशक्ति का संयोग ही परमात्मा है शिव की जो पराशिक्त है उससे चित शक्ति प्रकट होती है चित शक्ति से आनंद शक्ति का प्रार्दुभाव हुआ, आनंद शक्ति से इच्छा शक्ति, इच्छा शक्ति से ज्ञानशक्ति, ज्ञानशक्ति से क्रियाशक्ति प्रकट हुई यहीं से कलाओं की उत्पत्ति हुई। चि ाशक्ति से नाद और आनंदशक्ति से बिन्दु का प्रकाटङ्क बताया गया है। इच्छाशक्ति से 'म' कार, ज्ञानशक्ति से पांचवा स्वर 'उ' कार उत्पन्न हुआ और क्रियाशक्ति से 'अ' कार की उत्पत्ति हुई। शिव से इन्सान, इन्सान से तत्पुरुष, तत्पुरुष से अघोर, का अघोर से वामदेव की उत्पत्ति हुई। ज्ञान और क्रिया इन दो शक्तियों में जब ज्ञान का आधिक्य हो तब उसे सदाशिवशक्ति समझना चाहिये तथा जब ज्ञान और क्रिया दोनों शक्तियां समान हों तब उसे शुद्ध विद्यमान तत्व समझना चाहिये। जब शिव अपने रूप को माया से निग्रहीत करके सम्पूर्ण पदार्थों को ग्रहण करने लगता है तब उसका नाम पुरुष होता है।

सत्यम, शिवम, सुन्दरम् का आश्रय लेते हुये हम यह कह सकते हैं कि शिव और शक्ति एक दूसरे से उसी प्रकार अभिन्न है जिस प्रकार सूर्य और उसका प्रकाश, अग्नि और उसका ताप तथा दूध और उसकी सफेदी। शिव में 'इ' कार की ही शक्ति है। शिव से 'इ' कार निकल जाने पर शव ही रह जाता है। शास्त्रों के अनुसार बिना शक्ति की सहायता से शिव का साक्षात्कार नहीं होता।

शिव और शक्ति, साहित्य और कला में

डॉ. अरुण वर्मा

39, अलकापुरी, उदयन मार्ग, उज्जैन (म.प्र.)

ई-मेल : drarunvermaujjain@gmail.com

शिव अुर शक्ति की आराधना का प्रमाण सभी प्राचीन सभ्यताओं में मिलता है। देवी प्रतिमा का सबसे पुराना पुरातात्विक साक्ष्य सिंधु घाटी की सभ्यता की खुदाई में 1924 में मिला था। भारतीय परम्परा में शिव को आदिदेव और उनकी अर्धांगिनी पार्वती को आदि शक्ति माना गया है। हिमालय ही शिव और शक्ति की जीवन लीला का केन्द्र है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी मानते हैं कि अगर हिमालय ना होता तो शिव की कल्पना भी असम्भव थी कारण यह कि शिव की अलकों (जटाजूट) से ही गंगा निकलती है ओर उनके मस्तक पर चन्द्रमा विराजमान है। लोक और शास्त्र दोनों परम्परा में शिव और पार्वती सर्वांग पूज्य माने गये हैं, भारत में आज भी कुंवारी कन्याएं श्रेष्ठवर पाने के लिये हर गोरी का व्रत और अनुष्ठान करती हैं। हिमालय का कैलाश पर्वत शिखर शिव का स्थायी धाम है, और पौराणिक एवं शास्त्रीय परम्परा के अनुसार पार्वती स्वयं हिमालय की पुत्री है। शिव पार्वती की इस अनूठी गाथा को महाकवि कालिदास ने अपने महाकाव्य कुमार सम्भवम् में अमर कर दिया है। अनेक विद्वान वैदिक काल में शिव, शक्ति और उनके पुत्र गणपति को शाब्दिक रूप से खोजने का प्रयत्न करते हैं लेकिन इस मान्यता का अनेक विद्वान खण्डन कर चुके हैं। शिव महिमा का सबसे पड़ा प्रमाण हमें समुद्र मंथन की पौराणिक गाथा में मिलता है जहाँ सुर और असुरों के वीच अमृत के लिये संघर्ष है। समुद्र मंथन से जो 14 रत्न मिले हैं उनमें हलाहल भी एक था। उसे किसी ने ग्रहण नहीं किया लेकिन देवाधिदेव महादेव ने अपनी तपस्या और समाधि की शक्ति से उस गरल को पिया और अपने कण्ठ में ही रोक लिया। इसीलिये शिव को नीलकण्ठ भी कहा जाता है।

आदिम समाज की भौतिकवादी खोज करने वाले भारतीय विद्वान डॉ. देवीप्रसाद चटोपाध्याय ने अपने ऐतिहासिक ग्रन्थ लोकायत में शिव, गौरी और गणेश अध्यायों में आदिम समाजों में पूज्य आदिदेव शिव और उनके परिवार की विस्तृत चर्चा की है। यदि हम सम्पूर्ण हिमालय का भ्रमण करें तो धार्मिक रूप से शिव, शक्ति और भगवान बुद्ध के पूजा स्थल ही हमें दिखाई देते हैं। शिव के कई कथानकों से बुद्ध के कथानकों का साम्य है। बुद्ध का संन्यास और मारविजय (शिव का मदन दहन) जैसे प्रसंग जुड़ जाते हैं। भारत में उत्तर से दक्षिण तक शिव की आराधना के महत्वपूर्ण स्थल के रूप में द्वादश ज्योतिर्लिंगों के अलावा चिदम्बरदम के नटराज भी प्रमुख है। दर्शन और आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से शिव और शक्ति चेतना और ऊर्जा के प्रतीक हैं। शक्ति के बिना शिव निष्क्रिय शव के समान हैं।

भारतीय परम्परा में शिव को नाद शब्द, संगीत, नृत्य और नाटक का आदिदेव भी माना गया है। वैयाकरण पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी में व्याकरण के सूत्रों को 'इति महेश्वराणि सूत्राणि सन्ति' कहा है। नाट्य शास्त्र के रचयिता भरतमुनि ने शिव की महिमा में निम्नांकित श्लोक के माध्यम से समूचे

ब्रह्माण्ड को ही नाट्य शाला मानते हुए उसका परम आधार भगवान शिव को माना है–

"आङ्गिकंभुवनंयस्य वाचिकं सर्ववाङ्गमयम्।
आहार्यं चन्द्रतारादि तं नमः सात्विकं शिवम्॥"

(समूचा भुवन ही जिसका आंगिक अभिनय है, संपूर्ण साहित्य ही वाचिक अभिनय है और चन्द्र तारादिगण जिसके आहार्य अभिनय है ऐसे सात्विक अभिनय के परमदेवता शिव को मैं नमन करता हूँ।)

कश्मीर के दार्शनिक चिन्तन की परम्परा में प्रत्यभिज्ञा दर्शन की महत्वपूर्ण चर्चा आचार्य अभिनव गुप्त ने अपने ग्रन्थ तीनोंलोक में की है। जैसे शंकराचार्य जीव जगत और ब्रह्म का दर्शन देते है वैसे ही कश्मीरी शैव दर्शन, पशु, पाश और पशुपति की व्याख्या करता है। पशुपति नाथ के रूप में शिव कालिदास के अभिज्ञान शाकुन्तलम के मंगलाचरण में अष्टमूर्ति के रूप मौजूद हैं। विगत कुछ दशकों पहले वह मूर्ति मन्दसोर में पुरातात्विक खुदाई के दौरान प्राप्त हो चुकी है। पशुपति के रूप में शिव का दूसरा मुख्यधाम काठमाण्डू नेपाल का पशुपतिनाथ मन्दिर है। शिव और शक्ति के संयुक्त रूप की बहुत ही महत्वपूर्ण परिकल्पना भारतीय कवियों और दार्शनिकों ने अर्धनारीश्वर के रूप में की है। सबसे पहले कालिदास ने अपने महाकाव्य रघुवंश के मंगलाचरण में लिखा है–

वागर्था विव सम्पक्तौ वागर्थ प्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वती परमेश्वरौ।।

तात्पर्य यह कि शिव और शक्ति की यह युति जो अर्धनारीश्वर है वह ही संयुक्त है जैसे काव्य में वाणी और अर्थ सम्पृकृत रहता है। जिसे हम अलग नहीं कर सकते। इसी भाव को तुलसीदास ने भी अपनी रामचरितमानस् में व्यक्त किया है। शिव से सम्बन्धित पुराणों और धार्मिक ग्रन्थों में जो मदन दहन का प्रसंग है वह महाकवि कालिदास के कुमार सम्भव से ही ग्रहण किया गया है। मदन दहन का प्रसंग कालिदास की अपनी मौलिक कल्पना है। उसी घटना क्रम के बाद रूप गर्विता पार्वती कठोर तपस्या के पश्चात शिव को प्रसन्न कर अपने जीवन साथी के रूप में विवाह प्रसंग के माध्यम से प्राप्त करती है।

शिव की आराधना और उपासना भारतीय परम्परा में सर्वा लिंग रूप में की जाती है। द्वादश ज्योतिर्लिंग भी लिंगपूजा के ही केन्द्र हैं लेकिन मध्यकालीन परम्परा में लगभग सातवीं शताब्दी से लेकर 15वीं शताब्दी तक शिव पार्वती का मूर्तन उमामहेश्वर, शिव परिवार, महिषासुरमर्दनी, रावण के द्वारा शिव की तपस्या के फलस्वरूप अपनी भुजाओं से कैलाश पर्वत उठाना जैसे अंकन भारतीय मूर्ति कला के प्राण हैं। इन समस्त मूर्ति शिल्पों का हम अजंता, एलोरा, एलिफेन्टा, महाबलीपुरम तथा उत्तर-दक्षिण भारत के सैकड़ों मन्दिरों में देख सकते हैं। उमा माहेश्वर को हिंगलाजगढ़ ली और परमार कालीन मूर्ति शिल्प में सारे उत्तर और मध्य भारत में देखा जा सकता है। भारतीय कला के उद्धारक आनंद कुमार स्वामी ने अपनी विश्वप्रसिद्ध पुस्तक "डांस आफ शिवा" के माध्यम से शिव की नटराज मूर्ति का बहुत ही शानदार विवेचन किया है। शिव प्रलय के देवता हैं। इसीलिये वे ताण्डव करते हैं लेकिन भगवती शक्ति सृटि के सृजन के लिये लास्य नृत्य करती है। भारतीय मूर्ति कला का विश्लेषण करते हुए आनंद कुमार स्वामी ने कहा कि भारतीय मूर्ति शिल्प ने दो प्रतीक मोटिफ दुनिया के दिये हैं। पहली मूर्ति है अजंता में शयन मुद्रा में ध्यानस्थ बुद्ध जो शान्ति और सद्भाव के साथ मानवता का सन्देश देते हैं। दूसरी मूर्ति नटराज शिव की है जो चिदम्बरम और तन्जौर के अलावा दक्षिण भारत के कई मन्दिर में उपलब्ध है। वस्तुतः शिव का ताण्डवरूप सृष्टि के प्रलय और विलय का संकेत देता है लेकिन इससे बढ़कर यह मूर्ति हमें ब्रह्माण्ड के निरन्तर परिवर्तन और गति का भी अर्थबोध कराती है।

शिव के कई अर्थ है जिनमें कल्याण, मंगल और शुभ भाव प्रमुख है। शिव के उपासक शिव संकल्प मस्तु मंत्र को दोहराते हैं। शिव का जीवन समाधि और तपस्या के साथ है। त्याग और अपरिगृह का प्रतीक है। वे स्वयं महादेव के साथ ही महाकाल भी है और मसान में वासकर शवों की भस्मी से अपने शरीर का शृंगार करते हैं। राग और भोग को शिव तब ही स्वीकार करते हैं जब वह तपस्या की अग्नि में तपकर कुन्दन हो जाता है। पार्वती के द्वारा रूप की शक्ति से शिव को रिझाने का सारा यत्न धूमिल हो जाता है और इस षडयंत्र में शामिल कामदेव को महादेव अपने तीसरे नेत्र से भस्म कर

देते हैं। शिव के जीवन की संपूर्ण सार्थकता शक्ति में ही केन्द्रित है। उसके बिना वे निष्क्रिय ही बने रहते हैं। शक्ति का चिद् विलास जो कि स्वयं ब्रह्माण्ड की ऊर्जा है शिव की अनादि चेतना को निरन्तर जाग्रत रखता है। शास्त्र और पुराण में उन्हें भोलेनाथ कहा गया है, वे सुरों और असुरों की तपस्या से प्रसन्न होकर वरदान भी दे देते हैं। शिव का परमभक्त रावण इस प्रसंग में उल्लेखनी है। प्रलय का यह देवता अपने क्रोध के लिये भी प्रसिद्ध है लेकिन शिव का सात्विक क्रोध अहंकार को नष्ट करने और मानवता का कल्याण करने के लिए ही सार्थक होता है। दक्ष प्रजापति के यक्ष का विध्वंसा शिव और उनके गण इसलिये करते हैं कि प्रजापति ने अपने यज्ञ में शिव को ससम्मान आमंत्रित नहीं किया था। दक्ष की पुत्री सती जो कि शिव की पत्नी है वह भी पति उपेक्षा से रूष्ठ होकर यज्ञशाला में आत्मदाह कर लेती है। इस सूचना के बाद तो शिव के क्रोध से समूची सृष्टि कांप उठती है और वे सती के शव को कन्धों पर लादे चारों दिशाओं में भ्रमण करते हैं। जहाँ-जहाँ सती के अंग गिरते हैं पुराणों की मान्यता के अनुसार उन्हें शक्तिपीठ की संज्ञा दी गयी है। अगले जन्म में सती ही हिमालय की पुत्री पार्वती के रूप में जन्म लेकर शिव का वरण करती है।

लोक जीवन में शिव और शक्ति मानव कल्याण और मनोकामना की पूर्ति के देवी और देवता हैं। आदिवासी अंचलों से लेकर जनपदों, नगरों, महानगरों तक शिव की पूजा का अनुष्ठान होता है। यह भी कम आश्चर्यजनक नहीं है कि अन्य देवताओं की जन्म जयंती मनायी जाती है लेकिन शिव और पार्वती के मिलन की रात्रि को पूरा देश महाशिवरात्रि के रूप में मनाता है। यह भी एक अद्भुत संयोग है कि शिव के दोनों पुत्र गणेश और कार्तिकेय के प्रभाव को हम क्रमशः उत्तर और दक्षिण भारत में देख सकते हैं। कालिदास के साहित्य में गणेश का कहीं उल्लेख नहीं है इससे यह सिद्ध होता है कि अग्र पूज्य गणपति हमारे देव मण्डल में पाँचवी छठी शताब्दी के बाद आते हैं। उत्तर भारत में गणेश प्रतिमाएं और दक्षिण भारत में कार्तिकेय की प्रतिमाएं और मन्दिर सभी जगह पाये जाते हैं।

आधुनिक विज्ञान में ब्रह्माण्ड और ईश्वर की उपस्थिति को लेकर अनेक अनुसंधान और प्रयोग किये गये हैं। भारतीय दर्शन में जिस प्रकार ब्रह्म अथवा ईश्वर को अनादि अनंत कहा गया है वैसा ही वैज्ञानिक सिद्धान्त महान वैज्ञानिक अल्बर्ट आइंस्टीन अपने सापेक्षता के सिद्धान्त में वर्णन करते हुए कहते हैं कि काल और अन्तराल और ये ब्रह्माण्ड भी अनादि और अनंत है। ईश्वर को अगर जानना है तो काल और अन्तरिक्ष के सिद्धान्त से उसे समझ सकते हैं लेकिन दार्शनिकों की परम्परा ब्रह्म को काल और अन्तरिक्ष से भी परे मानती है। वैज्ञानिक कहते है कि समूचा ब्रह्माण्ड पदार्थ और ऊर्जा के मिश्रण का परिणाम है। इस कॉस्मिक पॉवर को किसी ईश्वर ने नहीं बनाया अपितु यह अनंत काल से स्वतः चलित है। शिव और शक्ति के दर्शन को हम चेतना और ऊर्जा के अर्थ में समझ सकते हैं जैसा कि हमने पूर्व में भी इस आलेख में उल्लेख किया है। तात्पर्य यह कि वैज्ञानिक बोध और दृष्टि से भी सृटि के रहस्यों को समझने के लिये शिव और शक्ति का संकल्प और विचार आधुनिक युग में भी हमें मार्गदर्शन दे सकता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. सिन्धु घाटी की पुरातात्विक खोज–मार्शल एवं बैनजी
2. आलोक पर्व–आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
3. कुमार सम्भव–कालिदास
4. वैदिक संहिताएं
5. लोकायत–डॉ. देवीप्रसाद चटोउपाध्याय
6. नाट्यशास्त्र–आचार्य भरतमुनि
7. शिव पुराण
8. स्कन्द पुराण
9. तन्त्रालोक–अभिनव गुप्त
10. अभिज्ञान शाकुन्तलम–कालिदास
11. रघुवंशम–कालिदास
12. रामचरित मानस–तुलसीदास
13. भारतीय कला की भूमिका–डॉ. भगवतशरण उपाध्याय
14. डांस ऑफ शिवा–आनंद कुमार स्वामी
15. गणेश–डॉ. सम्पूर्णानंद

शिव और संगीत

डॉ. अश्विनी कुमार सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर, फैकल्टी ऑफ परफोर्मिंग आर्ट्स

एम.एस. यूनिवर्सिटी, बड़ौदा,

ईमेल : ashwinikumarsingh338@gmail.com

भारतीय परंपरा में सर्व प्रथम संगीत के प्रारंभ के संबंध में मुख्यतः दो देवताओं को माना गया है– महादेव, शिव, शंकर और सृष्टिकर्ता ब्रह्मा। संगीताचार्य पं. भरतमुनि ने संगीत को पंचमवेद की संज्ञा दी है। लौकिक संकृत साहित्य में अन्य आचार्यो एवं विद्वानों ने भी संगीत विद्या को शंकर और पार्वती की शक्तियों से इस विद्या का सृजन (उत्पत्ति) माना गया है द्य संगीत को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पुरुषार्थो की प्राप्ति में सर्वोतम साधना संगीत को ही माना गया है–

तस्य गतिस्य महात्म्यं के प्रशंसितुमिशते।
धर्मार्थकाममोक्षाणामिदमेतैकसाधनम ॥

संत तुलसीदास ने इसीलिए श्रद्धा एवं विश्वास के रूप में भवानी-शंकर की वंदना करते हुए कहा है कि इसके योग बिना सिद्ध पुरुष भी अपने अन्तः करण में विराजमान ईश तत्व का साक्षात्कार नहीं कर पाते–

भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरुपिणौ।
याम्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तः स्थमीश्वरम ॥

प्रकृति के हर कण कण में संगीत मौजूद है। भगवान शिव को संगीत का जनक माना गया है। शिवमहापुराण के अनुसार शिव के पहले संगीत के बारे में किसी को भी पता नहीं था। गायन वादन एवं नृत्य के विषय में किसी को भी जानकारी नहीं थी। क्योंकि शिव ही इस ब्रह्मांड में सर्वप्रथम आए है द्य पुराणों के अनुसार सृष्टि से आरंभ में ब्रह्मानंद से जब शिव प्रकट हुए तो उनके साथ 'सत', 'रज' और 'तम' ये तीनों गुण भी जन्में थे। यही तीनों गुण शिव के तीन शूल यानि 'त्रिशूल' कहलाए। ऐसा कहा जाता है की ध शब्द से ही शिव की उत्पत्ति हुई है। नाद से ध्वनि और ध्वनि से ही वाणी की उत्पति हुई है। नटराज भगवान शिव का प्रतीक है। नटराज दो शब्दों के मेल से बना है 'नट' और 'राज' नट का मतलब कला और राज का अर्थ 'राजा'। यानी भगवान शिव का नटराज रूप इस बात की ओर सूचित करता है कि 'अज्ञानता को सिर्फ ज्ञान यानी संगीत और नृत्य से ही दूर किया जा सकता है जिसमे शिव का संगीत के प्रति स्नेह की बारे में विस्तार से वर्णन किया गया है। मूलतः संगीत की उत्पत्ति शिव से मणि गई है।...

(नृत्य) संगीत मनोरंजन का मुख्य साधन था। शर्वाणी (पार्वती) ने लास्य या सुकुमार नृत्य का संयोजन किया था, जबकि देवाधिदेव महादेवने ताण्डव नृत्य का।

धनज्जय ने बताया है कि–

उदधुत्योदधृत्य सारं यमखिलनिग्मान्नट्यवेदं विरञ्चिश्चक्रे यस्य प्रयोगं मुनिरपि भरतस्ताण्डवं शर्वाणी लास्यमस्य प्रतिपदमपरं लक्ष्म कः कर्तुमिष्टे[3]

संसार के दुःखो से दग्ध व्यक्तियों के जीवन में आनंद के संचार के लिए भगवान शिव (शंकर) ने स्वयं ही संगीत को प्रकाशित किया है। यह संगीत

परमानन्द है। समस्त प्राणियों के चित्र का हरण करनेवाला है और संसारबन्ध से विमुक्ति का बीज है–

संगीतकेन रम्येण सुखं लस्य न चेतसि।
मनुष्यवृषभो लोके विधिनैव स वञ्चितः ॥
संसारदुः खदग्धानामुत्तमानामनुग्रहाता।
प्रभुणा शंकरेपात्र गीतवाद्यं प्रकाशितम ॥
परमानन्दविवर्ध नमभिमतफलं वशिकरम।
सकलजनचित्तहरणं विमुक्तबीजं परं गीतम ॥

सत्य, शिव और सुंदर के अद्रश्य रूप को द्रश्य बनाता है। अपनी कृति में सत्य, शिव और सुंदर का पोषण करता है। संगीत रूपी वृक्ष के तने से जो शाखाएँ फैलती है, वे संगीत के विभिन्न भाव है। नौ रस इसकी स्थूल शाखाएँ है। आलम्बन और उद्दीपन संगीत की प्रशाखाएँ है। यहाँ मैं शंकराचार्य रचित आत्मषटक आप विद्वानों के समक्ष पेश करना चाहता हूँ जो राग दरबारी में निबद्ध है–

मनोबुद्धयहंकारचिन्तानि नाहं न च श्रोत्र
जिहवे न च घ्राणनेत्रे ॥
न च व्योमभूमी न तेजो न वायुश्चिदानन्द-रूपः
शिवोऽहं शिवोऽहम ॥
अहं प्राणवर्गो न पन्चानिलो मे न तोयं
न मे धातबो नैव व्योमः ॥
न वाकपाणीपादौ न चोपस्थपायू चिदानन्द रूपः
शिवोऽहं शिवोऽहम ॥
न में द्वेषरागौ न मे लोभमोहौ मदो नैव
मे नैव मात्सर्यभावम ॥
न धर्मो न चार्थो न कामो न मोक्षचिदानन्द रूपः
शिवोऽहं शिवोऽहम ॥
न पुण्यं न पापं न सौख्यं न दुखं
न मंत्रो न तीर्थं न वेदा न यज्ञाः ॥
अहं भोजनं नैव भोज्यं न भोक्ता चिदानन्द रूपः
शिवोऽहं शिवोऽहम ॥
न मे मृत्युशंका न मे जातिभेदः
पिता नैव मे नैव माता न जन्म ॥
न बन्धुर्न मित्रं गुरुनैव शिष्यश्चिदानंद रूपः
शिवोऽहं शिवोऽहम ॥
अहं निर्छवकल्पो निराकार रूपो विभुर्व्याप्य सर्वत्र सर्वेन्द्रियाणी ॥
सदा मे समत्व न मुक्तिर्न बंधश्चिदानंद रूपः शिवोऽहं शिवोऽहम ॥[4]

राग दरबारी कान्हडा ताल तीनताल

स्थायी

13	14	15	16	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
															ग
															म
रे	–	रे	रे	सा	सा	सा	सा	ध	-	नि	नि	सा	सा	सा	सा
नो	ऽ	बु	द्ध	य	हं	का	र	चि	ऽ	त्ता	नि	ना	ऽ	हं	न
रे	–	ग	ग	म	रे	रे	रे	सा	ध	–	नि	सा	–	सा	म
च	श्रो	ऽ	त्र	जि	ह	वे	न	च	घ्रा	ऽ	ण	ने	ऽ	त्रे	न
3				X				0				2			
प	ध	–	नि	सां	-	सां	सां	ध	–	नि	प	प	प	–	ग
च	व्यो	ऽ	म	भू	ऽ	मी	न	ते	ऽ	जो	न	वा	यु	ऽ	श्चि
म	–	रे	रे	सा	–	सा	नि	सा	सा	सा	नि	सा	–	सा	सा

दा	ऽ	नं	द	रू	ऽ	पः	शि	वो	ऽ	हम	शि	वो	ऽ	ह	म
3				X				0				2			

अंतरा

															म
															अ
प	–	नि	प	सां	सां	सां	–	सां	ध	–	नि	सां	सां	–	सां
हं	ऽ	प्रा	ण	व	र	गो	ऽ	न	पं	ऽ	चा	नि	लो	ऽ	मे
सां	रे	रें	–	सां	रें	–	सारें	गं	–	गं	मं	रें	सां	–	सां
न	तो	यं	ऽ	न	मे	ऽ	घात	बो	ऽ	नै	ऽव	व्यो	मः	ऽ	न
गं	-गं	रें	रें	सां	–	सां	सां	ध	–	नि	प	म	–	म	ग
वा	ऽक	पा	णी	पा	ऽ	दौ	न	चौ	ऽ	प	स्थ	पा	ऽ	यू	चि
सा	–	ध	नि	सा	–	सा	नि	सा	–	सा	नि	सा	–	सा	ग
दा	ऽ	नं	द	रू	ऽ	पः	शि	वो	ऽ	हम	शि	वो	ऽ	ह	म
3				X				0				2			

संदर्भ ग्रंथ

1. वैदिक साहित्य में संगीत, प्रो. सतीशचन्द्र झा, आलेख से पृ.49-50
2. शब्द ब्रह्म नाद ब्रह्म पं. श्री राम शर्मा आचार्य वांग्मय पृ.-1.40
3. By Internet, Source: Google
4. शंकराचार्य के पुस्तक से लिया गया है।

संगीत में शिवशक्ति

डॉ. भाग्यश्री मोकासदार

जगदंबा महाविद्यालय, अचलपूर

प्राचीन भारतीय साहीत्य मे नाद के विषय में इतने मत दिये गये है परंतु फिर भी संगीत कला की उत्पत्ति अब तक एक रहस्य है भारत ही नहीं संपूर्ण विश्व मे संगीत को विशिष्ट एवं सन्माननीय स्थान प्राप्त है परंतु इस कला का जन्म कहाँ, कैसे, कब व किसके द्वारा हुआ इस विषय में अनेक विचारकों व विद्वानों के भिन्न-भिन्न मत हैं। यदि इन मतों को हम विभाजित करना चाहें तो इन्हें धार्मिक, पौराणिक ऐतिहासिक, वैज्ञानिक, अध्यात्मिक, मनोवैज्ञानिक एवं प्राकृतिक आदि अनेक दृष्टिकोणों में विभाजित करके समझ सकते हैं।

संगीत का निर्माण मानव द्वारा नहीं बल्कि प्रकृति द्वारा स्वतः ही हुआ जीवन के साथ ही संगीत भी पृथ्वीवर अवतरित हुआ एक मत के अनुसार संगीत ईश्वर प्रदत्त है। इस ईश्वरीय कला के प्रचार-प्रसार का कार्य मनुष्यों ने किया।

आर्यों के आदि देवता ब्रह्मा विष्णु और महेश हैं। इनमे ब्रह्माजी जगत को उत्पन्न करनेवाला, विष्णु भगवान को जगत का पालन करनेवाला और महेश को संसार का संहारकर्ता कहा गया है। विष्णु भगवान के हाथ में शंख, शंकर भगवान ने 'पिनाक' का अविष्कार किया। इसे तंत्र वादयों का पिता माना गया है।

ततं वादय तु देवानां, गंधर्वाणांचोशिरम।
अवनध्दम, राक्षसानातुं, किन्नराणां धनं विदुः॥

इसका मतलब तंतू वादय देवता,सुाीर वादय-गंधर्व अवनध्द वादय-राक्षसूं, और न वादय किन्नर इनसे संबंधीत है।

ऊँ से संगीत का जनम

संगीत के सिध्दांत को विश्लेषण करने के लिए उसे अवगत करने के लिए भगवान शिवजी ने नृत्य के अंत अपने डमरू से चोदह सुत्रों से उत्पन्न किया। इस चौदह सूत्रों से समस्त ऋषि मुनि ने अपने अपने शास्त्र की रचना की है।

नृत्यावसाने नटराजराजो ननाद ढकका नवपंचवारम।
उध्दर्तुकामः सनकादिसिध्दा नेनव्दिमर्शे शिवसुत्र जालम ॥

इस चौदह सूत्रों से पहिला सूत्र अ इ उ ण इस सूत्र का प्रारंभिक अक्षर है।

ताल शब्दों की उत्पत्ति उनको ग्रंथों से मिलती है, परंतु सभी ग्रंथ में एक ही भाव है।

एतकारे शंकरः भक्तो लकारे पार्वतीस्मृता।
शिवशक्तीः समायोगात ताल इत्याभिधीयते॥

भरतमुनि के अनुसार कालमापन के साधनों को ताल ऐसा कहा जाता है। संगीतार्णव नाम के संस्कृत ग्रंथ के अनुसार तांडव पुरुष नृत्य से **ता** और लास्य स्त्री नृत्य से **ल** ये वर्ण के संयोग से ताल शब्द तैयार हो गया है। संगीत दर्पण ग्रंथ में ताल

शब्द ताकार शिव और लकार (शक्ति) ती इस संयोग से तयार हुआ है।

तांडव नृत्य करनेवाला महादेव के हाथ में डमरू लेकर विष्णुजी मृदंग बजा रहे हैं।

महादेव यानि देवों के देव आदि और अंत यानि महादेव मनुष्य के चेतने का कारक यानि शिव मुर्ति और लिंग दोनों स्वरूप में शंकरजी की पूजा की जाती है। शिव यानि कल्याण करनेवाला पर शिव में लय ओर प्रलय दोनों का वास रहता है बसते है।

इसीलिए ये देव अनोखा माना जाता है शिवजी को प्रसन्न करने के लिए भक्त अनेक उपाय करते हैं पर सच्ची आवश्यकता (गरज) है तो शिवजी का मूलरूप जानने कीए शिव यानि सृष्टि इसका ज्ञान है गया की बाह्य उपायों की आवश्यकता नहीं रहती शिवजी को समझने यानि खुद के जीवन के मर्म को जानने वाली बात जैसी है।

त्रिनेत्र होने के कारण शिवजी की यांत्रिक कहा जाता है। शिवजी की तीसरे आँख का अलग महत्व है। ये तीसरी आँख बोझ का प्रतीक माना जाता है। जीवन का नया अर्थ जानने के लिए इस तीसरे नेत्र की आवश्यकता होती है। पर ये तिसरी आँख उस पार देख सकती है। नंदी शंकरजी का वाहन है। ये नंदी धैर्य का प्रतीक माना जाता है। अपने जीवन मे धैर्य को अनन्य साधारण महत्व है।

शिवजीका त्रिशूल याने रुद्र हर और सदाशिव का प्रतीक ये तीनों गुणों का जीवन मे बहुत महत्व है।

एक बार नारदजी को इस बात का अहंकार हो गया था, कि उन्होंने संगीत का पूर्ण अध्ययन कर लिया है। इस अहंकार को नष्ट करने के लिए भगवान विष्णु उन्हे अपने साथ स्वर्ग में भ्रमण कराने के लिये ले गये। मार्ग में उन्हें एक विशाल भवन मिला जिसमे उन्होंने अनेक पुरुष व स्त्रियों को टूटे अंगों की पीड़ा के कारण विलाप करते हुए देखा, भगवान विष्णु वहां ठहरे और उनके विलाप का कारण जानना चाहा, उन्होंने उत्तर दिया कि वे सब भगवान शंकर द्वारा उत्पन्न राग व रागनियाँ हैं। नारद नामक कोई ऋषि है, जो न तो गाना जानते हैं और न तो बजाना। उन्हीं के बेढंगे गायन वादन ने हमारी यह अंगहीन स्थिति पैदा की है, जब तक स्वयं भगवान शिव कोई शुद्ध राग गाकर, इन अशुद्ध रागों को शुद्ध न कर दें तब तक पुनः हमारे अंगों की पूर्व स्थिति होना कठिन है। इस बात को सुनकर नारदजी ने माफी मांगी और अपने अंहकार को नष्ट कर दिया।

इस प्रकार कहते है कि भारतीय संगीत के अन्तर्गत राग-रागनियों का जन्मदाता शंकर भगवान को माना गया है।

प्राचीन संस्कृति-साहित्य में ग्रंथ की निर्विघ्न समाप्ति की कामना से सभी ग्रंथकार ग्रंथ आरंभ करने से पूर्व अपने इष्ट देवता का स्मरण करते हैं। संगीत रत्नाकर में शारंगदेव ने भगवान शंकर की वंदना इस प्रकार की है–

ब्रह्मग्रंथिजमारुतानुगुनिता चित्तेन हृत्पंकजे।
सुरीणामनुरंजकः श्रुतिपदं योयं स्वयं राजते।
यस्मात् ग्रामविभगवर्णरचनौलंकार जातिक्रमो।
वंदे नादतनुं तमुद धुरज गद्गीतं मुदे शंकरम॥

इसका अर्थ इस प्रकार-निरपेक्ष आनंद के लिए उस शंकर को नमस्कार है। जो ब्रह्मग्रंथि से उठने वाली वायु की गति का अनुसरण करने वाले चित्त के द्वारा प्रणव आदि वाचक पदों के श्रवण के बाद श्रुतियों का आश्रयरूप है, जो योगियों के हृदय-कमल मे रंजक रूप से अर्थात अपने से अलग पदार्थ को अपने मे अंतर्भूत करता हुआ स्वयं प्रकाशित होता है। जिससे ग्राम, धनं, धान्यादी का विभाजन जातियाँ तथा उनकी व्यवस्था बनती है। नाद अथवा आकाश ही जिसका शरीर है तथा जो जगत के द्वारा उत्कृष्ट रूप से गाया जाता है।

संगीत पक्ष के अनुसार इसकी व्याख्या की जा सकती है। उस सुखदायक स्वर को या स्वर संदर्भ-रूप-गीत को नमस्कार है। जो संगीत तत्वज्ञों के हृदयरूप में ब्रह्मग्रंथी से उठने वाली वायु की गति का अनुसरण करनेवाले चित्त के द्वारा रंजकता

के कारण स्वयं प्रकाशित होता है। जिससे मुनिदि का आश्रय रूप ग्राम, षड्ज मध्यमादि ग्राम, विभाजन स्थायी आदि वर्ग, उनका विनियोग प्रसन्नादि अलंकार षड्जी आदि जातियों और उन सबकी व्यवस्था उत्पन्न होती है जो नाद स्वरूप ही है, जिसके व्दारा जगत में उत्कृष्ट रूप से गान होता है। अर्थात जो मोक्ष प्रदान करता है।

शंकर उस ब्रह्म का सगुण रूप माना गया है, जिसकी उपासना नादब्रह्म या अक्षर ब्रह्म कहकर भी की जाती है। ग्रंथकार ने नादतनू विशेषण का प्रयोग करके सगुण शंकर द्वारा उसी नादब्रह्म के प्रति (जो मोक्ष प्रदान करने वाला है) मंगलाचरण किया है।

पंतजली ऋषिमुनी के अनुसार माहेश्वर सूत्र के अनुसार शिव के डमरू से केवल अ, ई, उ, ण्, ऋ, लृ, क् आदि वर्ण नहीं निकले तो वेदों में वर्णना अनुसार षड्ज, मध्यम, पंचम और आदि स्वरों की भी उत्पत्ति हुई है। उस स्वर के ध्वनि लहरी से जग का सर्जन हुआ है।

कुछ ग्रंथकारों के मत से शिवजी ने अपने पूर्व-पश्चिम-उत्तर-दक्षिण और आकाशोन्मुख होने पर क्रमशः भैरव-हिंडोले-मेई-दिप और श्री ये पाँच राग प्रकट किये। भारतीय संस्कृति में देवताओं का बड़ा महत्व है। उनके स्वरूपों की कल्पना करते समय प्रत्येक देवता के हाथों में कुछ आयुद्ध त्रिशूल, खड्ग, चक्र, कुश, गदा इत्यादि दे दी गई है अथवा उनकी कुछ मुद्राएँ और वाहन भी निश्चित कर दिए गए है।

भारतीय संस्कृति में अध्यात्म का विशेष महत्व है। मानव ने हर वस्तु का संबंध ईश्वर से जोड़ा है। हर कला हर क्षेत्र को ईश्वर से जोड़ा है। राग जो संगीत में प्रधान है। को ईश्वर से सम्बन्धित किया गया।

संगीतोपनिषत्सारोव्दार (14 ई.) नामक ग्रंथ में सबसे पहले 7 स्वरों, 6 रागों तथा 36 भाषाओं का ध्यान वर्णित हुआ है।

शिव के स्वरुप में

भैरव : श्वेतवर्ण स्यादेक वस्त्रोष्ट हस्तभक्
वशमानःकृतिवासा कालभैरव रुपध त्
सर्व त्रिशूलखट् वाग्जपमालाभि रन्ति तैः
वीणा पाराकलाजैश्च पाणिभि दुशितोछायाम्

इस ध्यान में भैरवराग का वर्णन किया है उसमे शिव के स्वरूप का वर्णन है जैसे की भैरव श्वेत रंग का है पर उसके त्रिशूल खड्ग आदि हैं।

पंडित अहोबल ने भी रागों के ध्यान रचे हैं। उनके द्वारा वर्णित भैरव राग का ध्यान निम्न है जिसमें शिवजी का वर्णन किया है।

गंगाधरः शशिकला तिलकः स्त्रिनेत्रः
सर्वेविद्रूशिततनुर्गजिकृत्तिवासाः
भास्वत् त्रिशूलकर एवं नृमंड धारी
शुभ्राम्बरो जयति भैरव आदिरागः

इसका अर्थ हे जिसके सर पर गंगा है माथे पर चांद है शरीर मे सर्प है हाथी की खाल पहने हुए है, हाथ में चमकता त्रिशूल है। गले में मुंड की माला है, सफेद वस्त्र पहने हुए है ऐसे आदि राग भैरव की जय है।

तांडव नृत्य कि उत्पति भगवान शंकर द्वारा मानी जाती है। भगवान शंकर किसी भी लीला प्रदर्शन के समय अथवा उपरान्त जो पुरोचित करणों तथा अंगहारों का प्रयोग करते हुए नृत्य करते थे, उसे ही तांडव की संज्ञा दी जाती है।

भगवान शंकर ने इस नृत्य शिक्षा सर्वप्रथम तंडमुनि की दी और यही नृत्य तदोपरांत भरतमुनि व उनके शिष्यों तक पहुंचा।

तांडव नृत्य में वीर-भद्र, बीभत्स, आनंद और करुणा जनित क्रोध का समावेश रहता है, इसी कारण इसमे अंगों का अत्यत विकट रूप से तोड़ा व मरोड़ा जाता है जो कि स्त्रियों के लिए उचित नहीं होता। नृत्य के समय वैसा प्रतीत होता है जैसे कोई क्रोधाग्नि भभकने लगती है धरती काँपती सी प्रतीत होती है। मानो संपूर्ण विश्व में संहार क्रिया हो रही है।

तांडव नृत्य में बजनेवाले वाद्य अधिक गुंजायमान और नादप्रधान होते है। जैसे कि ईडियाल, झांजा, डमरू, मृदंग, चंग आदि।

तांडव नृत्य के सात उपभेद होते हैं–त्रिपुर तांडव, आनंद तांडव, गोरी तांडव, कलिका तांडव, संध्या तांडव, उमा तांडव, संहार तांडव।

त्रिपुरासुर राक्षस के वध के उपरान्त भगवान शंकर के क्रोध को शांत करने हेतु भगवती उमा ने जो सुकोमल शृंगारिक नृत्य किया उसे **लास्य** नृत्य कहते है, इस नृत्य की शिक्षा भगवती उमा ने वागासुर की पुत्री उषा को दी जिसने इस नृत्य को वृंदावन क्षेत्र में प्रचलित किया।

पं. दामोदर ब्रह्मदेव द्वारा संगीत का जन्म मानते हैं तो ब्रह्मदेशी में मंतग मुनी ने महादेव को इसका श्रेय देते हुए लिखा है कि **महादेव मुखोदभूतान देशी मार्गेच संस्यितानाा'** आचार्य मातंग शिव भगवान को मार्गी तथा देशी संगीत का उत्पतिकर्ता मानते हैं। मार्गी संगीत को वैदिक संगीत भी कहते हैं यह अनादि, नियमबद्ध और अपरिवर्तनीय है। मार्गी संगीत का उद्देश आत्मानुभूति था।

शिवजी जो ध्यानस्थ मुद्रा मे लीन हैं। तथा जिनका संपूर्ण शरीर ही योग है। अध्यात्म, दर्शन एवं लोक को प्रतिम्बित करता हुआ है। जो मिथ्या जगत का त्याग कर वास्तविक जगत का दर्शन करने वाले त्रिनेत्र धारी है जो ज्ञान रहस्य व समस्त उर्जाशक्ति के संचालक हैं। तथा शक्ति ब्रह्मी द्वारा सृजन, विष्णुद्वारा पालन व शिव द्वारा संहार की प्रेरणा शक्ति है जो विभिन्न रूपों में सृष्टि के समस्त तत्वों में व्याप्त है। जब पुरुष रूप मे उपास्य हुई तो ईश्वर, शिव भगवान नाम से संज्ञापित हई और जब स्त्री रूप में पूज्य हुई तो ईश्वरी दुर्गा व भगवती कही गई इस प्रकार अभेद्य इन्हें **शिव अभ्यान्तरे शकतीः शक्ति अभ्यान्तरे शिव'** कहा गया जो समस्त सृष्टि की संचालक व निवृत्त कलाओं के जनक हैं। इसी महत्ता को सिद्ध करते हुए महाकवि कालीदास ने जगत मातृपितृ स्वरूप में स्वीकारते हुए उनकी वन्दना की है।

वागर्थविव संप क्तो वागर्थप्रतिपत्तये
जगतः पितरो वन्दे पार्वती परमेश्वरो

मध्यकाल मे तुलसी ने कहा–

भवानीशंकरो वन्दे श्रद्धा विश्वास रुपिणो
याभ्यां बिना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तस्थमीश्वरमा

शंकर विश्वास तो भवानी श्रद्धा है दोनो की उपासना से ही परमात्म के दर्शन होते हैं कला जगत के अधिष्ठाता (शिव शक्ति) समायोग जहां दैवीय रूप में पूज्य माना गया वही लास्यभाव में कला जगत की नई दृष्टि प्रदान करता है। शक्ति जब लास्य करती है तो सृष्टि की रचना और शिव का नृत्य सृष्टि प्रपंच का संहारक है। **शक्ति सहिती शिव समर्थ है पर शक्ती बिना शिव शव है'**।

रागाध्यान परंपरा में–

शिवशक्ती समायोगाद्रागाणां सम्भवो भ्रवेत।
पंचास्यात पंचरागाः स्युःषठस्त गिरजा मुखम।

कहकर रागों की उत्पत्ति का आधार माना गया है।

शिवशक्ति विभिन्न कलाओं में भिन्न भिन्न रूपों में व्याख्यायित किए गए वास्तुकला, चित्रकला, काव्य, संगीत, रंगमंच, लोक से शास्त्रीय जगत तक रचे गए अर्द्धनारीनटेश्वर रूप तो कला संस्कृति, साहित्य, धर्म, समाज को एक नई दिशा प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. भारतीय संगीत का इतिहास–श्री रामअवतारवीर
2. संगीत मणी–डॉ. महारानी शर्मा
3. तरुण भरत–वर्तमान पत्र
4. वर्तमान सामाजिक परिवर्तन मे संगीत की नई भूमिका–डॉ. जया मिश्रा

मालवी लोक गीतों में शिव और शक्ति

दीपिका चौरसिया

शोधार्थी

वरकातुल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल, म. प्र.

सबसे पहले हम शिव और शक्ति की बात करें तो शिव और शक्ति का संयोग ही परमात्मा है। शिव पुराण में भी कहा गया है चित शक्ति से आनंद शक्ति का प्रादुर्भाव होता है आनंद शक्ति से इच्छा शक्ति का उद्धव हुआ है। इच्छा शक्ति से ज्ञान शक्ति और ज्ञान शक्ति से क्रिया शक्ति प्रकट होती है। इन्हीं के द्वारा निवृति आदि कलाएं उत्पन्न हुई है अर्थात् कहने का तात्पर्य है चित (मन) से ही इच्छा शक्ति है। इच्छा नही तो कुछ भी कार्य नहीं इच्छा शक्ति से ही ज्ञान शक्ति का प्रादुर्भाव है एवं जहां ज्ञान है वहां क्रिया शक्ति है और क्रिया से ही कला का निर्माण है। कलाएँ यहीं से उत्पन्न होती हैं। शिव पुराण में इच्छा शक्ति से 'म' कार प्रकट हुआ है। ज्ञान शक्ति से पांचवां स्वर 'उ' कार उत्पन्न हुआ है। और क्रिया शक्ति से 'अ' कार की उत्पत्ति हुई है। इस प्रकार प्रणव (ॐ) की उत्पत्ति हुई है।

हमें शिव के अनेक रूपों का वर्णन मिलता है। जब सृष्टि संचालन का ज़िक्र आता है तो वही शिव अपने सहयोगी ब्रह्मा, विष्णु के साथ अपने रोद्र विकराल प्रलयकारी अन्त को कृपा देने वाले देव के रूप में सामने आते है। और कठोर दिल होकर न्याय करते है। इन सबमें शिव का एक दयालुता, करूणा, प्रेम अनुराग–वरदान, दाता, भोले भंडारी का रूप भी है जो उन्हें अलग ही रूप से प्रस्तुत करता है।

मालवा प्रांत में अपने ऐतिहासिक महाकाल शिव शक्ति मंदिर शिव महाकाल के लिए गौरवान्वित है। मालवा प्रांत का महाकालेश्वर मंदिर बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक है। ज्योतिर्लिंग मतलब जहाँ भगवान शिव ने स्वयं लिंगम स्थान किए थे। ऐसा ही मंदिर मध्यप्रदेश राज्य के उज्जैन नगर (मालवा) में स्थित है। शास्त्रों में इस मंदिर के बारे में मनोहर वर्णन किया गया है। यहाँ भस्म आरती सुबह 4 से 5 बजे सूर्यउदय से पहले की जाती है एवं भस्म आरती महाकाल का शृंगार है। वर्षों से श्मशान की भस्म से भगवान महाकाल की भस्म आरती होती आ रही है। यहाँ आरती प्रारम्भ होने से पूर्व ही शंख बजाया जाता है तत्पश्चात आरती की शुरुआत होती है। आरती के दौरान शंख, झाँझ ढोल, मंजीरा, घंटी, करताल आदि का प्रयोग किया जाता है जो मालवीय लोक सगीत के प्रमुख वाधों के अर्न्तगत आते है इन्हीं से नाद की उत्पत्ति होती है। अर्थात कहने का तात्पर्य है कि महाकाल (मालवा) नगरी में दिन की शुरुआत ही मालवी वाद्यों एवं सुमधुर संगीत से की जाती है।

कहा जाता है कि महाकाल यहाँ प्रकट हुए थे। दूषण का वध करने के बाद भक्तों ने जब शिवजी से उज्जैन में वास करने का अनुरोध किया तब महाकाल ज्योतिर्लिंग प्रकट हुआ। यहाँ 33 करोड़ देवता छोटे-बड़े मंदिरों में विराजित है।

सुलिल शिप्रा के तट के निकट भगवान शिव विराजमान है बारह ज्योतिर्लिंगों में से महाकालेवर

ज्योतिर्लिंग का अपना एक अलग महत्व है। महाकाल की महिमा का वर्णन इस प्रकार से भी किया गया है।

आकाश तारंक लिंग पाताले तटम।
भूलोके च महाकलों लिंड्गत्रय नमोस्तुता॥

इसस तात्पर्य आकाश में तारक लिंग पाताल में हाट लिंग तथा पृथ्वी पर महाकालेश्वर मान्य शिवलिंग है।

यहां कई देवी देवताओं के छोटे-बड़े मंदिर है। यहॉ गर्भ ग्रह में माता पार्वती, भगवान गणेश, व कार्तिक की महान प्रतिमाएँ है। यहॉ शिव और शक्ति समान रूप से विद्यमान है।

गर्भ ग्रह मे नन्दी दीप स्थापित है जो सदैव प्रज्जवलित होता रहता है। अर्थात शिव और शक्ति दोनों एक ही मंदिर मे स्थापित है।

बारह वर्ष में लगने वाला यहाँ कुम्भ मेला सबसे बडा मेला है। जिसमें देश विदेश से आए साधु-संतों एवं श्रदालुओं का जमावड़ा शुरू से लेकर आखरी तक लगा रहता है। यह कुम्भ मेला महांकुम्भों मे से एक माना जाता है। कुम्भ के मेले मे भी महाकाल के दर्शन के पूर्व श्रद्धालु माँ शीप्रा नदी में स्नान करते है तत्पश्चात् महाकाल के दर्शन का लाभ उठाते है। शिव मे रूप मे महाकाल और शक्ति के रूप मे माँ शीप्रा पुनः एक साथ समान रूप से एक साथ सामने आते है।

महाकाल की नगरी उज्जैन वहां के आसपास के गांवो मे कई प्रसिद्व मंदिर व आश्रम है। जैसे चिन्तागण गणेा मंदिर , काल भैरव , गोपाल मंदिर, हरसिद्धि मंदिर, त्रिवेणी संगम, सिद्धवट, मंगलनाथ, इस्कान मंदिर आदि प्रमुख मंदिर है। जहाँ पर शिव और शक्ति एक साथ विराजित हैं।

हरसिद्धि मंदिर भारत के प्राचीन स्थानों में से एक माता सती के 51 शक्तिपीठों मे 13वाँ शक्तिपीठ है। यहाँ के लिए एक कथा प्रचलित है। माता सती के पिता ने दक्षराजा के विराट यज्ञ का आयोजन किया था। जिसमे सभी देवी देवताओ को अमंत्रित किया गया परंतु उन्होने माता सती व भगवान

शिवजी को नही बुलाया फिर भी माता सती यज्ञ मे उपस्थित हुई। वहां सती को देख दक्षराज ने उनके पति देवाधिदेव महादेव का अपमान किया यह देखकर वह क्रोधित हो अग्नि कुडं में कूद पडी यह जानकर शिवशम्भु क्रोधित हो उठे फिर उन्होने माता सती के शव को लेकर संपूर्ण विश्व मे भ्रमण शुरू कर दिया। शिव जी का यह रूप देखकर संपूर्ण भारत मे हाहाकार मच गई देवी-देवता परेाान होकर भगवान विष्णु के पास पहुचें और संकट के निराकरण हेतु प्रार्थना करने लगें शिव जी का सती के शव से मोहभंग करने के लिए भगवान विष्णु ने सुदर्शन चक्र चलाया था चक्र से सती की कोहनी के रूप मे उज्जैन में इस स्थान पर गिरा तब से माँ यहॉ हरसिद्धि मंदिर के रूप मे स्थापित हुई है महिलाएं अपने गीत एवं भजनो मे इस कथा का वर्णन शिव और शक्ति के रूप मे एक साथ लेकर गाती है।

यहॉ प्रत्येक नवरात्रि धूम धाम और आस्था से मनाई जाती है यह अदभुद दिव्य द. य देखने लायक होता है शुभ पल दायनी इस मंदिर के प्रांगण मे शिव जी का कार्कोटकेश्वर महादेव मंदिर है। जो 84 महादेव में से एक है जहॉ काल सर्प दोष का निवारण होता है यहां शिव जी काल सर्प दोष का मुक्त निवारण के लिए विद्यमान है।

निष्कर्ष मे कहा जा सकता है कि मालवी लोक गीतो मे शिव और शक्ति का वर्णन मालवी वाधो के साथ महिलाएँ अपने मुख से गीत के रूप मे प्रस्तुत करती है जो कानो को कर्ण प्रिय एवं सुमधुर लगता है जन्म से लेकर मत्यु तक के गीत यहां पर मालवी वाधो के साथ गाये एवं बजाये जाते है।

संगीत में शिव-शक्ति

दीपक वर्मा

संगीत में शिव-शक्ति पर चर्चा करने से पूर्व सर्वप्रथम हमें यह जानना जरूरी हो जाता है कि संगीत क्या है? आचार्य सारंगदेव ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ संगीत रत्नाकर में कहा है–

'गीतं वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते'

अर्थात् गायन, वादन और नृत्य यह तीनों ही मिलकर संगीत कहे जाते हैं, अकेला गायन संगीत नहीं है। अकेले वादन को भी संगीत नहीं कहा जा सकता और अकेला नृत्य भी संगीत नहीं कहलाता, वस्तुतः नृत्य वाद्य का अनुगमन करता है और वादन गीत के पीछे पीछे चलता है। अतः जब उपयुक्त राग रागिनी में कोई गीत गाया जाए उसके अनुकूल ही वाद्य बज रहे हों और उस गीत के भावों को नृत्य की मुद्राओं के द्वारा भाव व्यक्त किया जाए, तभी संगीत पूर्णता प्राप्त करता है। इस प्रकार गायन वादन और नृत्य यह तीनों ही कलाएं एक दूसरे की पूरक हैं और अपनी पूर्ण अभिव्यक्ति के लिए एक दूसरे पर अवलंबित रहती हैं। बिना वाद्यों के गायन नहीं हो सकता और बिना स्वर-ज्ञान (गायन) के वाद्य-वादन संभव नहीं है और बिना गीत-वाद्य के नृत्य कर पाना संभव नहीं है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि जैसे सत, रज और तमस इन तीनों गुणों से मिलकर यह दुनिया बनी है इन तीनों में यह किसी एक के भी ना होने पर सृष्टि की रचना कर पाना संभव नहीं है। उसी प्रकार गायन, वादन और नृत्य इन तीनों तत्वों ने मिलकर ही संगीत का संसार रचाया है, इनमें से किसी एक के भी ना होने पर संगीत को पूर्णता प्राप्त नहीं हो सकती।

आङ्गिकं भुवनं यस्य वाचिकं सर्ववाङ्मयम्।
आहार्यं चन्द्रतारादि तं नुमः सात्विकं शिवम्॥

आंगिक वाचिक आहार्य और सात्विक अभिनय के इन चारों वेदों के अधिष्ठाता स्वयं स्वयं भगवान नटराज शंकर हैं। आचार्य नंदिकेश्वर ने अभिनय दर्पण के मंगल श्लोक में कहा है कि यह चार अभिनय नटराज के चार स्वरूप हैं और इनके अधिष्ठाता वे स्वयं है। यह सारी दुनिया जिनका अंग है यह सम्पूर्ण वांग्मय जिनका वाचिक अभिनय है। चंद्र तारादि से मंडित यह अखिल आकाश लोक जिनका आहार्य अभिनय है और सात्विक अभिनय के रूप में भगवान शिव स्वयं विराजमान है, ऐसे भगवान शंकर नटराज को हम सभी मिलकर नमस्कार करते हैं।

पूर्णतः सभी भारतीय शास्त्रीय नृत्य, नृत्त के दो भेद पर ही आधारित है। कुछ शास्त्रीय नृत्य मै तांडव दिखाई देता है, तो कुछ में लास्य किंतु कथक नृत्य में तांडव लास्य दोनों ही समाहित हैं। इस नृत्य में शिव-पार्वती क्रमशः तांडव-लास्य दोनों ही दिखाई देते हैं या यह कहना उचित होगा कि इन दोनों (तांडव-लास्य) नृत्य से ही कथक नृत्य सुसज्जित होता या निर्मित हुआ है जिसमें शिव और शक्ति दोनों का समावेा होता है।

संगीत के अंतर्गत सभी अवनद्ध वाद्य यंत्रों में ताल का महत्वपूर्ण स्थान है, जिसमें ताल शब्द का 'ता' तांडव से तथा ताल शब्द का 'ल' लास्य से लिया गया है। इस प्रकार ताल शब्द में भी शिव-शक्ति का अनूठा संगम देखा जा सकता है और साथ ही गायन विधा के सभी स्वर भगवान शिव के डमरु से ही उत्पन्न हुए हैं या कहें की नाद भेद भी भगवान शिव की अनुपम देन है।

संगीत की उत्पत्ति के संदर्भ में कहा गया है कि भारतीय परंपरा के अनुसार संगीत (नृत्य) के आदि प्रवर्तक भगवान शंकर हैं। वह नित्यसंध्या काल अपनी मस्ती में झूम कर नाचते हैं। शिव के इस आनंद नर्तन में सभी सम्मिलित होते हैं उनकी विराटता में ब्रह्मा ताल देते हैं, विष्णु मृदंग बजाते हैं, सरस्वती अपनी वीणा झं त करती है, सूर्य चंद्र बांसुरी फूकते हैं, अप्सराएं व किन्नरिया श्रुतियों का ध्यान रखती हैं, नंदी भृंगी डमरु मांदल बजाते हैं, इसके साथ नारद स्वर मिलाते हैं। शिव जी के पदक हाथों से पृथ्वी और हाथों के संचालन से नक्षत्र मंडल गतिमान होता है इसलिए कहा गया है यह सारा संसार नृत्यमय है–

नृत्यमयं जगत

शिव के नटराज का यह रूप आध्यात्मि है और शक्ति का प्रतीक माना जाता है। प्रभामण्डल माया की माया सृटि की सूक्ष्मता का शिव के हाथ, पैर, स्पा उसमें शक्ति के संचार का प्रतीक है, यह विश्व की गति का कारण है।

इसी प्रकार प्रस्तुत डमरू, नाद-सृष्टि का अभयमुद्रा स्थिति का, अग्नि-संहार का, ऊपर उड़ा हुआ पैर-अनुग्रह का, तिरूवासी-तिरोभाव का, आपस्मार पुरुष-पाप का, सर्प-काल का प्रतीक माना गया है। शिव द्वारा अनेक प्रकार के नृत्य संपन्न हुए जिनमें ताण्डव नृत्य सबसे ज्यादा प्रसिद्ध है। इसी प्रकार शिव का अर्धनारीश्वर रूप जिसमें शिव ताण्डव के साथ माँ भगवती पार्वती ने सुकोमल अंगों से पूर्ण तथा रस भाव से समन्वित लास्य नृत्य किया। नृत्य कला के प्रवर्तक भगवान शंकर को माना जाता है।

अर्धनारीश्वर की आध्यात्मिक सक्रियता का कवित्व पूर्ण उल्लेख महाकवि कालिदास ने अपने काव्य में किया है। शिव को संबोधित करते हुए वह कहते हैं कि जब आप नारी और पुरुष की सृष्टि करने चलते हैं, उस समय आप ही स्त्री और पुरुष दो रूप बन जाते हैं। आपके वे ही दोनों रूप सारे संसार के माता पिता कहलाते हैं।

स्त्रीपुंसावात्मभागो **ते भिन्न मूर्तेः सिस क्षया।**
प्रसूतिभाजः सर्गस्य तावेव पितरो स्म तो ॥

अर्धनारीश्वर रूप में नृत्यरत नटराज शिव का चित्रण महत्वपूर्ण है, जिसमें संध्या तांडव तथा लास्य को शरीर के दो भागों में विशिष्टता के साथ नियोजित किया गया है। उनका सुकोमल अंग हार एक और है तथा अति भयंकर गति दूसरी ओर है। नाद और विष्णु के मिलन से शिव और शक्ति का अभ्युदय हुआ। शिव से ज्ञान और शक्ति से क्रिया का जन्म हुआ तथा बिंदु से इच्छा, कामना और सदा शिव की शक्ति का उद्भव हुआ। आकाश से वायु, वायु से जल, जल से पृथ्वी। इस तरह पंचभूतों का निर्माण हुआ शिव की शकल सृजनात्मक शक्ति के स्रोत हैं। नीलकंठ शिव का अधोमुख दर्शनम ब्रह्मांड की एक अद्भुत छवि है, ब्रह्मांड के रूप को स्वयं मे धारण करते शिव नीलकंठ होने का आभास कराते है। शिव के नृत्य की विशेषता यह है कि वह स्वयं मात्र नित्य नहीं करते वरन उस शक्ति में शक्ति भी पूरी तरह उपस्थित हैं। शक्ति के बिना शिव का नृत्य संभव नहीं है अतएव नटराज के आनंद तांडव में शक्ति की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है।

शिवपुराण में उल्लेख है कि-महानर्तक शिव नृत्यकला के प्रवर्तक हैं, सुरताल के महान ज्ञाता है। शिव को कहीं-कहीं 'महाभिषेक' भी कहा गया है। शिवजी के स्वयं नृत्यकर्ता होने के कारण इन्हें 'नटराज' या 'महानट' कहा जाता है। नटराज का नृत्य केवल प्रलय या संहार का नृत्य नहीं है अपितु

सृष्टि और संहार के संतुलन के निमित्त निर तर चलने वाला महानृत्य है।

आदि शंकराचार्य कृत सौंदर्य लहरी में अद्‌भुत वर्णन मिलता है वह कहते हैं कि शिव अपनी भूमिका में तभी संभव हो पाते हैं। जब उन्हें शक्ति का सायुज्य मिलता है, दिव्य ऊर्जा का श्रेष्ठतम स्त्रोत शक्ति ही है, जिसके बिना शिव की भूमिका संभव नहीं। इन्हीं श्रेष्ठतम तत्वों का समावो का साकार रूप है नटराज अर्धनारीश्वर रूप–

शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः पृभवितुम।
न चेदेवं देवो न खलु क्रालः स्पन्दितुमपि ॥

शिव और शक्ति दोनों ही चित् स्वर स्वरूप हैं, लेकिन शिव निक्रिय तथा शक्ति क्रियामूलक है। शिव में जब शक्ति की अभिव्यक्ति होती है तब वह अच्छा रूप में होती है अर्थात् शिव की जो इच्छा है, वही शक्ति का स्वरूप है, यही शिव शक्ति का सामरस्य है, यह सामरस्य निर्विकार है, अनादि अनंत स्वप्रकाश तथा चिदानंदमय है।

नटराज के चरणों की आराधना स्त्री शक्ति द्वारा की जाती है, जो उनके नृत्य की सहचारिणी हैं। इन तीन शक्तियों में इच्छाशक्ति ज्ञान शक्ति तथा क्रिया शक्ति की गणना की जाती है। चिदंबरम मंदिर में इनका स्थानीय रूप क्रम चित सभा में नटराज के पीछे इच्छा शक्ति शिव कामसुंदरी के रूप में ज्ञान शक्ति तथा दुर्गा के रूप क्रिया शक्ति मैं अभिव्यक्त है।

शिवपुराण के अनुसार शिव शक्ति का संयोग ही परमात्मा है, शिव की जो पराशक्ति आ सकती है उससे चित्र शक्ति प्रकट होती है। चित्र शक्ति से आनंद शक्ति का प्रादुर्भाव होता है, आनंद शक्ति से इच्छाशक्ति का उद्‌भव हुआ है। इच्छा शक्ति से ज्ञान शक्ति और ज्ञान शक्ति से पांचवी क्रिया शक्ति प्रकट हुई है। चित शक्ति से नाद और आनंद शक्ति से बिंदु का प्राकट्य बताया गया है इच्छा शक्ति से 'म' कार प्रकट हुआ है। ज्ञान शक्ति से पांचवा स्वर 'उ' कार उत्पन्न हुआ है और क्रिया शक्ति से 'अ' कार की उत्पत्ति हुई है इस प्रकार प्रणव ओम् की उत्पत्ति हुई है।

प्रभु नटराज का नृत्य शिव शक्ति रुप में सर्वत्र है, चित अम्बरम सर्वत्र है, वहीं प्रभु का नर्तन है, सर्व व्यापक शिव का गौरव उनके नृत्य में प्रतिभासित है। शाकाल और निककाल रूप मे इनका पंचकृत नृत्य संपूर्णता गौरव के साथ सुशोभित है। इस पवित्र नृत्य में जल अग्नि और अंतरिक्ष सम्मिलित हैं, कनक सभा में देवी काली के साथ प्रभु का नर्तन भाव बोध को बतलाता है। शक्ति के रूप में आनंद, उमा के रूप में समानन्द, आनंद शिव के रूप में शक्ति का अभ्युदय अर्धनारीश्वर की सयुज्यता को स्पष्ट करता है। अर्धनारीश्वर की अवधारणा में शिव शक्ति का समावेश है, इनके नृत्य की विशेषता यह है कि वह स्वयं मात्र नृत्य नहीं करते वरन उस शक्ति में शक्ति भी पूरी तरह उपस्थित हैं। शक्ति के बिना शिव का नृत्य संभव नहीं है, अतएव नटराज के आनंद तांडव में शक्ति की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है।

संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी नाट्यास्त्र (भरतमुनि)–बाबूलाल शुक्ल शास्त्री
2. भारतीय नाट्य परंपरा और अभिनय दर्पण–वाचस्पति गैरोला
3. कथक नृत्य शिक्षा (प्रथम भाग)–डॉ. पुरु दाधीच
4. कथक नृत्य का मंदिरों से संबंध–कुमारी रंजना झा (शोध प्रबंध)
5. नटराज ब्रह्मांड का दिव्य नर्तन–कमल किशोर मिश्र

शिवशक्ति का समाजशास्त्री सम्बन्ध

डॉ. दीप माला मिश्रा

सहायक आचार्य, समाजशास्त्र
सर्वेश्वरी, पी.जी. कॉलेज, धनुहाँ, चाका, नैनी, इलाहाबाद
ईमेल : deepmalamishra28@gmail.com

ऊँ नमश्चण्डिकायै॥
ऊँ विषुद्धज्ञानदेहाय त्रिवेदीदिव्यचक्षुशे।
श्रेयःप्राप्तिनिमित्ताय नमः सोमार्धधारिणे॥
(अथ कीलकम)

मार्कण्डेय जी कहते है कि विषुद्ध ज्ञान ही जिनका शरीर है तीनों वेद ही जिनके दिव्य नेत्र है जो कल्याण-प्राप्ति के हेतु है तथा अपने मस्तक पर अर्धचन्द्र का मुकुट धारण करते है उन भगवान शिव को नमस्कार है।

➢ पौराणिक दृष्टि से सर्वोच्च त्रिदेवों मे 'देव' शिव जी है इन्हें आदिदेव भी कहा जाता है। ब्रह्मा का कार्य सृष्टि-रचना, विष्णु का स्थिति-संरक्षण तथा शिव जी का कार्य संहार करना है। 'शिव' का स्वरूप सर्वाधिक जटिल एवं परस्पर विरोधी गुणों का समुच्चय है। शिव का रूप घोर भी है, अधोर भी। **'लिंगरूप'** में मात्र **'शिव' जी** का ही पूजन होता है। **'लिंग'** पूजन की परंम्परा विश्व भर में किसी न किसी रूप में रही है। नाश और सृजन देखा जाए, तो साथ-साथ चलते हैं। मानो तो जीवन के द्वार पर मृत्यु खड़ी ही रहती है। **'मृत्यु'** के बाद फिर जीवन दस्तक देता है। इसलिए विध्वंस के देवता को **'शिव' जी** की संज्ञा मिली है। **'शिव' जी** उस शक्ति के प्रतीक देवता है। इस प्रकार नाश व सृजन निरंतर बने रहते हैं।

➢ शिव जी के नाम व कार्य भी विभिन्न है। शिव शब्द की व्युत्पत्ति है—**श्यति पापम्** -शो+भन् अर्थात् शिव वह है, जो पाप को नट करते है। अतः **'शिव' जी** मंगल, शुभ तथा सौभाग्यसूचक देव हैं। परम कारूणिक एवं उनमें अनुग्रह, प्रसाद तथा तिरोभाव की क्रिया भी पाई जाती है। शिव की विभिन्न अभिव्यक्तियां विभिन्न क्रियाओं को दर्शाती हैं। शिवपुराण में **'शिव' जी** के निम्नलिखित पांच कार्य बताए गये है।1 सृष्टि 2 स्थिति 3 नाश 4 तिरोभाव 5 मोक्ष। इसलिए इन्हें पंचमुख नाम दिया जाता है। उनका एक नाम सदा शिव है जो ब्रह्मा से सृष्टि रचवाते हैं विष्णु से उसका पालन करवाते हैं रूद्र से उसका नाशकरवाते हैं। 'सदाशिव' पुरानी सृटि के चिह्नों को मिटाकर स्वयं को मुक्त कर लेते हैं।

➢ फिर सम्पूर्ण प्रक्रिया को दोहराते हैं। ऐसा प्रतीत होता कि त्रिमूर्ति के तीनों देव **'शिव' जी** की अवधारणा में समाए हुए हैं जो हमें वेदों व पुराणों में भी प्राप्त है, ओम् अ,उ,म,) इन तीन ध्वनियों के समूह से प्रदर्षित किया गया हो जैसा कि कहा गया है कि शिव और शक्ति एक दूसरे से उसी प्रकार अभिन्न हैं जिस प्राकर सूर्य और उसका प्रकाा अग्नि और उसका ताप, दूध और उसकी धवलता **'शिव'जी** अव्यक्त, अदृश्य सर्वगत अचल आत्मा है। शक्ति दृश्य चल एवं नामरूप के द्वारा व्यक्त सत्ता है। शिव की आराधना शक्ति की आराधना है और शक्ति की उपासना शिव की उपासना। तंत्रोपासना में भी शिव पार्वती का ही उल्लेख मिलता है।

➢ **वैदिक-देवशास्त्र** में **'शिव' जी** का **'रूद्र' नाम** ही मिलता है जिसकी कल्पना जो (**'ऋग्वेद'** में सर्वप्रथम मिलती है) में शिव की अनेक विशेषताएं और तत्संबंधी पौराणिक गाथाओं के परिदृश्य में निहित हैं। ऋग्वेद में रूद्र को संबोधित चार सूक्त हैं। यजुर्वेद, अथर्ववेद में कुल मिलाकार सौ से अधिक रूद्र को सम्बोधित मंत्र है। ऋग्वेद (1.114) में 'कपर्दी' (जटाओं वाला) विशेषण कई बार आया है। अथर्ववेद में भी रूद्र की महिमा व्याख्यायित हुई है। 'नीललोहित' विशेषण भी यहां मिलता है– नीलमस्योदरं **लोहितम् पृष्ठम्** (1.5.17)। **यजुर्वेद** में नीलग्रीवः, विशेषण है।

पुराणों में पाणिनी जी ने **अष्टाध्यायी में 'शिव' जी** के उपासकों का उल्लेख किया है संस्कृत के स्तोत्र साहित्य में और अभिलेखों में शिव शक्ति का अनेकानेक स्तुतियां प्राप्त होती है।

➢ आप सभी इस बात से अवगत है कि **'शिव' जी अपने** भक्तों का कल्याण करते हैं। वे आशुतोष हैं, जल्दी से प्रसन्न हो जाते हैं तथा वरदान देने में उदार हैं। संगीत, नृत्य योग, व्याकरण, व्याख्यान के मूल प्रवर्तक हैं **'शिव जी'** वे विभिन्न कलाओं और सिद्धियों के प्रवर्तक माने जाते हैं। नटराज के रूप में डमरू बजाते, नृत्य करते शिव के चित्र मूर्तियां प्रसिद्ध ही हैं जैसा की साक्ष्य मिलता है कि उनके डमरू की ध्वनि से संस्कृत भाषा की 'वर्णमाला' जन्मी। तभी उन नियमों की संज्ञा 'माहेश्वर सूत्राणी' है। वे नाट्यों की उत्पत्ति के कारण भी माने जाते हैं। 108 प्रकार के नाट्य जिनमें लास्य एवं तांडव दोनों सम्मिलित हैं–उनसे ही उत्पन्न हुए हैं। 'लास्य' सृष्टि का नृत्य है, जो उल्लास को अभिव्यक्ति देता है। तांडव विध्वंस या प्रलय का नृत्य है। सम्पूर्ण जीवधारियों के स्वामी के रूप में शिव 'भूत-पति, 'भूतनाथ' कहलाते हैं। 'पशुपति' नाम भी सब 'प्राणधारियों के पति का प्रतीक नाम है। उमापति या मायापति तो उन्हें कहा ही जाता है क्योंकि उमा उनकी पत्नी हैं तो माया उनकी अनन्त शक्ति है।

➢ **'शिव जी'** की मूर्ति तो है ही, अमूर्त रूप में भी उनकी उपासना की जाती है। अमूर्त रूप 'लिंग' है जो प्रतीक है, उनके निश्चल ज्ञान और तेज का **'लिंग'** रूप में शिवोपासना सर्वाधिक प्रचलित है। लिंग पूजा कैसे प्रारम्भ हुई? इसके प्रमाण में पुराणों में अनेक कथाएं हैं। पद्मपुराण में 'भृगु' को सौंपा। जब शिव के निवास पर भृगु पहुंचे, तो द्वार रक्षकों ने उन्हें अंदर जाने से रोका और कहा कि उनके स्वामी अभी पत्नी के साथ हैं। कुछ समय प्रतीक्षा करने के बाद भृगु का धैर्य टूट गया और उन्होंने शाप दिया–पार्वती के आलिंगन को प्राथमिकता देते हुए तुमने मेरा अपमान किया है, अतः तुम्हारी पूजा **'लिंग-योनि'** स्वरूप ही होगी। इस कथा के भाव प्रतीकात्मक ही हैं। सभी देवों में एक **'शिव' जी** ही ऐसे देव हैं जो पत्नी को समान दर्जा देते हैं। शिव का प्रेम पार्वती के प्रति अनन्य है। पूर्वजन्म में सती के रूप में पार्वती दक्ष की यज्ञाग्नि में प्राण दे देती हैं, तो शिव उनका शरीर कंधे पर डाले विक्षिप्त घूमते रहते हैं तथा तांडव नृत्य करते हुए सृष्टि के नाश पर उतारू हो जाते हैं। 'पार्वती' रूप में तप के पश्चात् जब शिव का फिर से उनसे मिलन होता है, तो **'शिव जी-पार्वती जी'** एक रूप हो जाते है। अनेक चित्रों में **'पार्वती' जी शंकर जी** के उरूभाग पर विद्यमान रहती हैं। यही नहीं शिव शक्ति का स्नेहभाव इतना उत्कट हो जाता है कि वे 'अर्द्धनारीश्वर' बन जाते हैं। सम्पूर्ण विश्व-वाङ्मय में दांपत्य-सम्बन्धों की इतनी सुंदर कल्पना कहीं नही मिलती। अर्द्धनारीश्वर विग्रह में आधा शरीर पुरुष, आधा स्त्री का। आधे में महेश्वर, आधे में उमा। दोनों पृथक् हो ही नहीं सकते। क्योंकि अलग होकर प्रत्येक आधा, अपूर्ण और निर्जीव है। एक ही शरीर के दो हिस्से हैं, इसलिए छोटे बड़े का प्रश्न ही नहीं। कालिदास जी ने रघुवंश के प्रथम श्लोक में **'शिव' जी -'पार्वती'** जी को वाणी और अर्थ के समान मिला हुआ कहा है। एक शंकर ही है, जो चिरपुरातन होते हुए भी चिर आधुनिक है क्योंकि हर साल शिवरात्री पर विवाह की वर्शगांठ मनाते हैं। शिव-पार्वती के दांपत्य की इसी विशेषता के कारण कुमारी कन्याएं शिव जैसा वर पाने की कामना करती हैं। भले ही भौतिक साधनों से वर सम्पन्न न हो, पर सम्मान व प्रेम दे।

➢ पौराणिक परम्परा में शिव के मंगलमय रूप की प्रतिष्ठा ही अधिक हुई है। वेद में कहा गया है–

'या तो, रूद्र शिवातनूरघोरा तयानस्तत्वा शन्तमया-भिचाकशीहि।'

अर्थात् हे रूद्र! तुम्हारा जो अघोर, शिव, परमकल्याणकारी शरीर है, उससे मुझे देखो।' संसार का अस्तित्व शिव शक्ति से ही है, यह रूद्र के 'शिवत्व' से-उसका साक्षात्कार करने से संभव होता है, शिव मोक्ष का मार्ग खोल देते हैं, व्यक्ति का कल्याण करते हैं। उनकी पूरी वाराणसी या काशी है, जहां सबको मुक्ति मिलती है। योगानुसार इड़ा तथा पिंगला नाम की नाड़िया भ्रूमध्य में मिलती हैं, काशी में प्रकाशमयी है। सृष्टि के संहार के देव होने के कारण शिव को **'काल'** या महाकाल कहा जाता है।

➢ महाकाल शिव युग और भाग्य दोनों के स्वामी हैं। इस दृष्टि से वे 'मृत्युंजय' हैं। वेद का प्रसिद्ध मंत्र (शिव) को ही संम्बोधित है।

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुटिवर्धनम्।
उर्वारूकमिव बन्धनान्म त्योर्मुक्षीय माम तात्॥ (ऋग्वेद 7.59.12)

➢ शिव-शक्ति के स्वरूप में वर्णित सभी वस्तुओं के प्रतीकात्मक अर्थ हैं। इन सबसे जुड़ी कथाएं उनकी विशेषताओं को उजागर करती हैं। **'शिव' जी** का तीसरा नेत्र विशिष्ट है। उसके सम्बन्ध में महाभारत में एक कथा मिलती है। **'शिव जी'** अपने परम प्रिय विश्राम स्थल **'हिमालय'** पर गहरी समाधि लगाये उनकी पत्नी वहां दबे पांव आयी और हथेलियों से उनकी आखें ढक ली, तो सारी दुनिया में अंधेरा छा गया एका एक **'शिव' जी** के मस्तक से एक आंख प्रकट हुई जिससे सारी दुनिया को फिर प्रकाशमय कर सारे तीसरे से ही सम्बद्ध है। **'कामदहन'** की कथा जब **'कामदेव'** ने उनकी तपस्या भंग करने का प्रयास किया तब **'शिव' जी** ने 'त तीय नेत्र से उसे भस्म कर दिया। त तीय नेत्र आंन्तरिक नेत्र है। शिव **जी 'नीलकंठ'** हैं। **'नीलकंठ 'शिव'** जी के इस रूप को पर्यावरण संरक्षक का रूप माना जाता है। परिवार, समाज-सुधारक या राष्ट्रनायक को शंकर बनकर **'गरलपान'** करना ही होता है, तभी सबका कल्याण होता है।

➢ **शिवपरिवार**–आध्यात्मिक धरातल पर तो 'शिव'जी **'महादेव'** हैं ही उन्हें पारिवारिक सुख कल्याण परम समर्थक देव भी माना जा सकता है। शिव की पत्नी पहले सती थीं, जन्होंने पिता दक्ष के यज्ञ में पति को सम्मान न मिलने से अपने प्राण त्याग दिये। पति के वियोग से संतप्त और दक्ष के प्रति क्रोधित शिव ने धरती की सात परिक्रमाएं की। उनके क्रोध से सम्पूर्ण धरा कांपने लगी त्राहि-त्राहि मच गयी व विष्णु ने सुदाश्न चक्र से म त सती की देह पर प्रहार किया तथा उसके 51 टुकड़े कर दिये ये टुकड़े जहाँ-जहाँ गिरे वहाँ-वहाँ तक शक्तिपीठ बने सती ही दूसरे जन्म में उमा बनी और तपस्या के बाद **'शिव' जी** की पत्नी बनी **शिव-पार्वती** के दांपत्य के विशय में पता है कि इनका प्रथम पुत्र कार्तिकेय या स्कंद था, जिसने **'तारकासुर'** का वध कर रक्षा की। गणेश उनके द्वितीय पुत्र हैं, जिन्हें प्रथम पूज्य माना जाता है। इन दोनों के सम्बन्ध में बहुत से पौराणिक आख्यान प्रसिद्ध है। **शिव-पार्वती** के तीसरे पुत्र **'हनुमान जी'** माने जाते हैं। इनके जन्म की कथाएं तर्क से परे हैं। केवल यह कहना काफी होगा कि शिव की विशेषताओं से संबद्ध होने के कारण उन्हें शिव पुत्र कहा जाने लगा होगा। यों वे अंजना और केसरी के पुत्र थे। कुल मिलाकर देखें तो शिव एक श्रेष्ठ परिवार के प्रमुख (मुखिया) प्रतीत होते हैं बह्मा और विष्णु के चित्र परिवार के साथ नही मिलते परन्तु **शिव-पार्वती, गणेश, कार्तिकेय** तथा उनके वाहनों के साथ सम्पूर्ण चित्र एक भरे पूरे परिवार का दृश्य उपस्थित करते हैं। उदाहरण स्वरूप इलाहाबाद सिविल लाइन्स क्षेत्र में हनुमंत निकेतन मन्दिर में शिव शक्ति परिवार की मूर्ति स्थापित है। यही नहीं, परिवार में विभिन्न प्रकृति के लोगों को एकता एवं प्रेम के सूत्र में बांधने का कार्य भी देव ही कर सकते हैं। शिव का वाहन बैल, उमा का वाहन, सिंह कार्तिकेय का वाहन मयूर, गणेश का वाहन मूषक

एवं शिव के कंठहार सर्प परस्पर विरोध भूलकर शिव के प्रभाव से मिल-जुलकर एक साथ रहते हैं। आपसी विरोध के संघर्ष से यदि विशवमन होता भी है, तो स्वयं उसे कंठ में धारण कर लेते हैं। कामजयी बनकर उज्ज्वल चरित्र से स्वजनों को प्रेरित करते हैं। उग्रता में कठोर हैं, पर क्षमा करने का भाव भी है। इस दृष्टि से शिव अनुकरणीय है। उनकी जटाओं में गंगा और माथे पर चंन्द्रमा उनके मस्तिष्क को शीतल रखते हैं तथा उनके तीसरे नेत्र की ज्वाला से उसका समन्वय हो जाता है, संतुलन हो जाता है।

परिवार की सीमा में पत्नी व बच्चे ही नहीं आते, अपितु समाज के हर वर्ग के लोग आते हैं। विशेषतः निम्नवर्ग के लोगों के साथ सद्व्यवहार, भूत-प्रेतों के स्वामी **'शिव जी'** की विशेषता है। दलित, उपेक्षित, सर्वहारा लोगों को अपनी बरात में स्थान देना, यही शिव की बड़ी विशेषता है और इसी उदारता से परिवार में सौख्य बढ़ता है। परिवार-प्रमुख में त्याग की भावना का आदर्श भी शिव स्थापित करते हैं। उन्हें राजसिंहासन राजमुकुट नहीं भाते। कम से कम वस्तुओं में गुजारा कर लेते हैं। उमा, **'गणेश जी'** और कार्तिकेय के लिए मूल्यवान् वस्त्राभूाण, सुस्वादुभोजन उपलब्ध हैं। **'गणेश जी'** तो ही मोदकप्रिय, परन्तु शिव वह आक-धतूरा (विशपूर्ण वस्तुएं) या बेल (अम त-फल) से काम चला लेते है। उन्हें बड़े-बड़े व़िाल मन्दिर-प्रतिमाएं नही तभी वे परिवार से लेकर विश्व भर में सर्वाधिक पूजे जाते हैं। मात्र एक लोटा जल से उन्हें प्रसन्न कियाजा सकता है तभी कंकर-शंकर बन जाता है। शिव के विस्तृत परिवार में एकादश रूद्राणियां 64 योगिनि भैरवादि भी हैं। तंत्रशास्त्र में शिव और उनकी शक्तिस्वरूपा उमा का महत्वपूर्ण स्थान है। काी-कैला उनके निवासस्थान माने गये हैं। वैसे परमदेव के रूप में वे सर्वव्यापक हैं ही। मनुष्य तो शिव शक्ति की उपासना करते ही हैं, देवता भी संकट आने पर या असुरों द्वारा सताए जाने पर **'शिव जी'** जैसे अवढरदानी तरह-तरह के वरदानों से उन्हें नवाजते भी रहे हैं। अंधक, दुंदुभि, महि, त्रिपुर, निवातकवच जैसे राक्षसों को मनचाहे वरदान शिव ने दिए हैं। रावण तो शिव का परम भक्त था ही, जिसने अपने शीश काटकर उन्हें अर्पित किए तथा विशेष स्रोतों की रचना कर उन्हें प्रसन्न किया। राक्षसों के साथ शिव का एक अन्य प्रकार का संबंध भी रहा है। ऐश्वर्यमद से दुराचार को प्राप्त राक्षसों का संहार कर देव-रक्षा, मनुज रक्षा, तो **'शिव जी'** ने की ही , साथ ही उन राक्षसों का उद्धार भी किया अंधकासुर, गजासुर, भस्मासुर, त्रिपुरासुर जैसे–राक्षस इसी श्रेणी में आते हैं। कुबेरादि लोकपालों को **'शिव जी'** की कृपा से उत्तर दिशा की स्वामित्व, निधिपतित्व तथा यक्षों का स्वामित्व मिला है।

पुराणों में शिव के अनेक अवतारों का वर्णन भी मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि **'विष्णु'** के अवतारों की पद्धति पर यह कल्पना की गई। प्रायः दुष्टों के विनाश तथा भक्तों परीक्षा आदि के लिए शिव अवतार धारण करते हैं। लोक में भी अनेक कथाएं प्रचलित हैं, जिनमें **शिव-पार्वती** वेश बदलकर घूमते रहते हैं। जहां कहीं आवश्यकता होती है, वहां भक्तों का कार्य कर देते हैं।

➢ भगवान शिव की अटमूर्तियां-. ार्व, भव, रूद्र, उग्र, भीम पशुपति, ईशान और महादेव-ये पृथिवी, जल, तेज, वायु, आका, क्षेत्रज्ञ, सूर्य, और चंन्द्र में अधिठित रहती हैं। पंचतत्वात्मक पंचलिंगों पासना दक्षिण भारत में विशेष रूप से होती है। कालिदास ने अभिज्ञान शाकुंतलम् के नांदी-श्लोक में की अष्टमूर्तियों का उल्लेख है। ये हैं–जल, वह्नि, यजमान, चंन्द्र, सूर्य, गगन, धरणि और वायु। पाठों मे पांच तत्वों सहित सम्पूर्ण प्रकृति-पर्यावरण समाहित हो गया है। अन्यत्र इनके नाम इस प्रकार आए हैं-–**शर्व, भव, रूद्र, उग्र, भीम, पशुपति,** ईशान और महादेव।

यों तो हर छोटे बड़े मन्दिर मे शिव की मूर्ति (पार्वती सहित) अथवा शिव लिंग जरूर होता है। अतः शिव के अनन्त मन्दिर कहे जा सकते हैं। फिर भी कुछ मन्दिर विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। इनमें 12 ज्योतिर्लिंग आते हैं। सोमनाथ, मल्लिकार्जुन, महाकालेश्वर, परमेश्वर, (ओंकारेश्वर) केदारेश्वर,

भीमशंकर, विश्वेश्वर त्रयम्बक वैद्यनाथ, नागेश रामेश्वर, तथा घूमेश्वर–ये प्रसिद्ध बारह लिंग हैं। इसके अतिरिक्त कई स्थानों पर बने बड़े 'पारदलिंग' भी प्रसिद्ध हैं। देश की राजधानी में केशवपुरम में सबसे बड़ा पारदलिंग स्थापित है। पूजित-अर्जित हैं कनखल में भी पारदलिंग है।

➢ भगवान **'शिव जी'** का ही विवाह का दिन भी निश्चित है। प्रत्येक मास की कृष्ण चतुर्दी को शिवरात्रि कहा जाता है, परन्तु सर्वाधिक महत्ता फाल्गुन कृष्ण चतुर्दी की है। स्तोत्रों की दृष्टि से शिवशक्ति का साहित्य सर्वाधिक विशाल है, शिव जी के द्वारा शक्ति की महत्ता को दुर्गासप्तशती पाठ दर्शाया गया है।

शिव उवाच–

देवी त्वं भक्तसुलभे सर्वकार्यविधयिनी।
कलौ हि कार्यसिद्धयर्थमुपायं ब्रूहि यत्नतः॥

देव्युवाच–

श्रृणु देव प्रवक्ष्यामि कलौ सर्वेष्टसाधनम्
माया तवैव स्नेहेनाप्यम्बास्तुतिः **प्रकाश्यते॥**

इन श्लोक के माध्यम से शिव जी का कहना है कि देवि वह सरल साधन बताइये जिससे भक्तों का कल्याण हो इस पर देवी ने बताया कि कलियुग में समस्त कामनाओं को सिद्ध करने वाला जो साधन है वह 'अम्बास्तुति' है। जो भक्त सच्चे मन से **'शिव पार्वती जी'** का ध्यान करते है उनका समस्त कल्याण होता है और समाज से सरोकार अच्छा बना रहता है। सभी पापों से वह मुक्त होते हैं। मनुष्यों के लिए भगवान 'शिव जी' ने पार्वती माता से दुर्गाष्टोत्तरातनामस्तोत्रम का वर्णन किये और उनका कहना है कि जिसके प्रसाद (पाठ श्रवण) मात्र से परम साध्वी भगवती दुर्गा प्रसन्न हो जाती है। (शतनाम प्रवक्ष्यामि श्रृणुव कमलानने। यस्य प्रसादमात्रेण दुर्गा प्रीता भवेत सती ॥)

'शिव जी' ने सप्तशती पाठ को गुप्त रखा है उनका कहना है कि जो मनुष्य इस पाठ को प्रतिदिन करता है उसे किसी भी प्रकार का भय, अमंगल नही होता है वह सब देवी के प्रसाद का ही फल है अतः इस स्तोत्र का पाठ सदा करना चाहिये।

(सौभाग्यादि च यत्किंचिद् दृश्यते ललनाजने। तत्सर्व तत्प्रसादेन तेन जाप्यमिदं शुभम॥)

जैसा कि भगवान **'शिव जी'** ने देवी की महत्ता को बतलाते हुए कहते है कि शक्ति की आराधना मात्र से ही कल्याण होता है फिर मनुष्य स्तुति क्यों नहीं करते?

संसार में इस मायानगरी में असंख्य देवी देवताओं का वास है लेकिन इन सभी में शिव शक्ति की आराधना हर व्यक्ति करता है जिसका सीधा सम्बन्ध मनुष्य के गृहस्थ जीवन को प्रभावित करता है। सभी महिलाओं की मनोकामना पूर्ण इन्हीं से जुड़ी हुई है। इसलिए हमारे भारत में स्त्रियाँ सौभाग्यः आरोग्य आदि के लिए निर्जला व्रत रहती है जिससे उनका सौभाग्य बना रहे। संसार मे सबसे शीघ्र प्रसन्न होने में भगवान शिव जी है जो भक्त के द्वारा एक लोटा जल चढ़ाने मात्र से ही वरदान दे देते है। **भगवान शिव** को प्रसन्न करने के लिए सबसे सरल पंचाक्षर मंत्र है ऊँ नमः शिवाय है। शिव की आराधना शक्ति की आराधना है और शक्ति की उपासना शिव की उपासना है।

संदर्भ ग्रंथ

1. डॉ. सक्सेना, प्रवेश–हिन्दुओं के देवी और देवता, पृष्ठ संख्या–64,67,71,72, प्रकाशक–हिन्दूलॉजी बुक्स दिल्ली फरवरी 2008
2. ऋग्वेद (1.114)
3. अथर्ववेद (1.5.17)
4. शिवमहापुराण
5. ऋग्वेद (7.59.12)
6. मार्कण्डेय पुराण में देवी भागवत
7. श्री दुर्गासप्तशती पाठ प्रकाशक–गीता प्रेस, गोरखपुर पृष्ठ सं.-7,9,10,11,12,36-39

राग भैरव में शिव का स्वरूप

डॉ. आकांक्षा गुप्ता

असिस्टेंट प्रोफेसर (संगीत गायन)
जु.दे.ग.पी.जी. कॉलेज, कानपुर

संगीत से जुड़े हर एक व्यक्ति को यह विदित है कि राग भैरव एक अत्यन्त प्राचीन राग है। भैरव का व्युत्पत्तिगत अर्थ रौद्र व भयानक है। विकट रौद्र, भाव का उद्दीपक होने के कारण ही इसे 'भैरव' नाम दिया गया है। भगवान शंकर के मुख से पंचस्वरी इस राग की उत्पत्ति की परम्परा पुराणवादियों में अभी तक प्रचलित है। भगवान भैरव की अष्टमूर्तियों का संगीत से घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। यहाँ तक कि नटराज के ताण्डव से संगीत के नाद व साहित्य के अक्षर निकले हुए माने जाते हैं, इसलिए संगीत कला-प्रवर्तक भगवान भैरव से सम्बद्ध होने के कारण 'भैरव आदिमो रागो' यह उक्ति प्रचलित हो गई।

'क्रमिक पुस्तक मालिका' (पं. विष्णु नारायण भातखण्डे द्वारा रचित) में राग भैरव का स्वरूप इस प्रकार दिया गया है।

सगौ मपौ धपौ रिगौ मपौ मगौ रिसौ।
भैरवो नित्यपूर्णः स्याद्धैनतांश प्रभातग ॥

यह राग भैरव थाट से उत्पन्न होता है। इसकी जाति सम्पूर्ण-सम्पूर्ण है। ऋषभ तथा धैवत स्वर कोमल प्रयुक्त होते हैं। शेष स्वर शुद्ध लगते हैं। वादी स्वर धैवत और सम्वादी स्वर ऋषभ है। इस राग का गायन समय प्रातः काल माना जाता है। राग भैरव की प्रकृति गम्भीर है। भैरव राग की विशेषता 'रे' 'ध' स्वरों पर निर्भर है। इन स्वरों के आन्दोलन से यह राग खिलकर और ऊर्जा से ओत-प्रोत प्रतीत होता है।

आरोह : सा रे ग म प ध नि सां।

अवरोह : सां नि ध प म ग रे सा।

विशेष स्वरसंगति : सा, ग, मप, धऽप

इसी प्रकार 'राग विज्ञान', संगीतांजलि इत्यादि पुस्तकों में राग भैरव का स्वरूप साथ ही विभिन्न बन्दिशें, आलाप व तान हमें देखने को मिलते हैं।

राग भैरव का नाम सुनते ही हमारे मन-मस्तिष्क में भगवान शिव की आकृति बन जाती है। भगवान शिव का जो स्वरूप हम प्रचार-प्रसार के माध्यम से देखते आये हैं अर्थात् जिनके अंग पर भस्म लगी है, गले में सर्प, जटाधारी, तीन नेत्रों से युक्त, गंगा को धारण करने वाले, मस्तक पर चन्द्रमा, नर-मुण्डों की माला, हाथ में डमरू व चमकता हआ त्रिशूल आदि गुणों से युक्त भगवान शिव के समान राग भैरव का स्वरूप बताया गया है।

राग भैरव में तो हमें भगवान शिव के गुणों से युक्त कई बन्दिशें देखने को मिलती हैं लेकिन भगवान शिव की भक्ति और उनके अन्य नामों की चर्चा अन्य रागों में भी मिलती है।

राग-गुणक्री

स्थाई : बाजे डमरू हर कर, त्रिशूल धर कर
भस्म अंग, ब्याल माला गजे बिराजे।

अन्तरा : पंचवदन पिनाक धर शिव, वृषभवाहन भूतनाथ
रूंढ माला सबन सोहे, अनादि पूरक
अनन्त अध हर।

राग-श्याम कल्याण

स्थाई : शंकर शिवदानी भोलेनाथ
त्रिभुवन के स्वामी विश्वनाथ

अन्तरा : अखिलेश्वर विश्वेश्वर माहेश्वर
प्रणतपाल दामदास शरण आयो आशुतोष
शिवानाथ।

संदर्भ ग्रंथ

1. संगीत, मासिक पत्रिका, जून 2011
2. संगीत, मासिक पत्रिका, सितम्बर 2011
3. संगीतांजलि, पं. ओंकारनाथ ठाकुर, भाग-7

शिव पावर्ती के प्रेम की चित्राात्मकता, 'कुमार सम्भवम' के सन्दर्भ में

डॉ. जूही शुक्ला

एसोसिऐट प्रोफेसर एवं अध्याक्षिका चित्राकला विभाग

प्रयाग महिला विद्यापीठ, डिग्री कालेज, इलाहाबाद

यूँ तो शिव और पार्वती सभी विधा के कलाकारों का प्रिय विषय रहे हैं परन्तु 'कालिदास' के कुमार-संभवाम् में काव्य के माध्यम से जो चित्रकारी शिव शक्ति को लेकर की गई वह अद्भुत है। एक पूरा समाज शास्त्र उसके साथ दिखालाई देता है। जो लोग यह कहते हैं कि भारतवर्ष में कोई संकल्प शक्ति नही प्रदर्षित की और कभी कोई महान कार्य नही किया उन्हें पेशेवर छिन्द्रान्वेषी ही कहा जा सकता है।

भारतवर्ष प्राचीन समय से लेकर अद्यतन जीवित रहा है और जीवित रहेगा तो सिर्फ और सिर्फ अपनी संस्कृति के कारण, भारत की शक्ति, भारत की संस्कृति है। अनेकों वर्षो से पुराणों में जो बताया गया उसका परिमार्जन होते होते भी हम संस्कृति के मूल से कटे नहीं हैं। शिव शक्ति का जो स्वरूप हमारी कथाओं में बताया गया है उसका अक्षराः पालन हमारे समाज के स्त्री पुरुष कर रहे हैं। पति-पत्नी, के रूप में वे न सिर्फ खुद को ताकत दे रहे हैं अपितु समाज को भी विघटन से बचाना चाहते हैं। एक समय था कि स्त्रियाँ यदि काम पर जायेंगी तो परिवार टूटेगा परन्तु आज काम पर जाने वाली, असंख्य स्त्रियाँ ऐसी हैं जिनको संबल उनके पतियों से मिलता है वे एक साथ परिवार की जिम्मेदारियों को संभालते हुए समकालीन शिवशक्ति के जीते-जागते प्रमाण हैं।

हमारे पुराणों में भारतीय शास्त्रों, कथाओं में शिव और पार्वती, राम सीता के भी पूज्य आदर्श रहे। 'राम ने शक्ति पूजा की तो साहित्यकारों ने उसको अपनी रचना का आधार बनाया।

''भारत जीवित रहा है और महानता के साथ जीवित रहा है। भले ही उसके विचारों और संस्थाओं पर हम कोई भी मत क्यों न प्रकाति करें। क्योंकि आखिर जीवन का अर्थ ही क्या है और हम अत्यन्त पूर्ण और महान रूप से जीना किसे कहते हैं? जीवन निश्चय ही मनुष्य की आत्मा, उसकी शक्तियों और क्षमताओं की एक कृति एवं सक्रिय आत्म-अभिवयक्ति के सिवा रहने, विचार, सृजन, प्रेम और कर्म करने तथा सफलता प्राप्त करने के उसके संकल्प के सिवा और कुछ नहीं है। जब किसी में इस चीज का अभाव हो, अथवा इसका नितांत अभाव चूँकि हो ही नहीं समता। अतः यूँ कहना चाहिए कि जब आंतरिक या बाह्य कारणों से यह दबी हुई अवरुद्ध निरुत्साहित या जड़ बनी हुई पड़ी हो तथा हम कह सकते हैं कि उसमें जीवन का अभाव है। जीवन अपने व्यापकतम अर्थ में, हमारे आंतरिक और बाह्य कर्म का एक महान् जाल है, शक्ति का खेल कर्म का खेल, धर्म, दर्शन, चिंतन विज्ञान, काव्य और शिल्प नाटक संगीत, नृत्य और अभिनय, राजनीति और समाज, उद्योग, वाणिज्य और व्यापार,

साहसिक कार्य और यात्रा, युद्ध और शांति संघर्ष और एकता, विजय और पराजय, अभीप्साएं और उतार चढ़ाव, विचार और भावावेग वचन और कर्म तथा हर्ष और शोक ही मनुष्य जीवन का गठन करते हैं।

जीवन के उपरोक्त पहलू को भाँपने के बाद शिव और पार्वती का प्रसंग देखें तो हमें लगेगा कि हाँ ये हमारे आदर्श हैं।

कालिदास कृत 'कुमारसंभव' में अनेकों ऐसे प्रसंग है जहाँ हमें शब्दों के माध्यम से पूरी तस्वीर दिखाई देती है। कोई चित्र न भी बनाया जाय तो भी शिव और शक्ति का प्रत्येक कृत्य एक अनोखी अनुभूति लगता है।

पार्वती ने शिव से प्रेम किया था और उनके प्रेम को सबने स्वीकारा भी परन्तु आज जब खाप, पंचायतों की वीभत्सता सामने आती है तो प्रेम के प्रति दिल दहल उठता है।

पार्वती ने स्वयं अपना शरीर योग से छोड़ा था जब उनके पति शंकर का अपमान उनके पिता ने यज्ञ में उनके लिए आसन न देकर किया था।

अथाऽवमानेन पितुः प्रयुक्ता, दक्षस्य कन्या भव पूर्व्वपत्नी।

सतीसती योग विसृष्टदेहा, तां जन्मने शैलवधूं प्रपेदे॥ (21) (कुमार संभव प्रथम सर्ग)

उमा के शरीर वर्णन में कालिदास ने अत्यन्त चित्रात्मकता प्रस्तुत की है। यथा–

दिने दिने सा परिवर्धमाना, लब्धोदया चान्द्रमसीव लेखा।

पुपोष लावाण्यमयान् विशेषाम्, ज्योत्सनान्तराणीव कलान्तराणि ॥25॥ 2

कुमार संभव प्रथम

वह कन्या दिन-दिन बढ़ती गई, जैसे उदित चन्द्रकला। उसी के समान उसके अंग-अंग में लावण्य उभरता गया,। चन्द्रकला में चाँदनी के समान।

उन्मीलितं तूलिकयेव चित्रं, सूर्यांशुभिर्भिन्नमिवारविन्दम्।

बभूव तस्याश्चतरस्रशोभि, वपुर्विभक्तं नवयौवनेन ॥32॥ कुमार संभवेप्रथमः सर्गः।

अब उसी का नवयौवन से विभक्त शरीर ऐसा चतुरस्रोभी हो गया जैसे तलिका से उन्मीलित चित्र हो या सूर्यकिरणों से खिला कमल।

हमारे शास्त्रीय चित्रों में या मूर्तियों में ऐसी उपामाओं ने महती भूमिका अदा की है। एलोरा में शिव से सम्बन्धित चित्रों में ऐसी ही काव्यमयता दृष्टिगोचर होती है।

स्त्री की कर्मठता और ताकत को कालिदास पार्वती के तप वर्णन में स्पष्ट करते हैं–

मृणालिकापेलवमेवमादिभिर व तैः स्वमडंग ग्लपयन्त्यहर्निषम्।

तपः शरीरैः कठिनैरूपार्जितं, तपस्विनां दूरमधश्चकार सा।।29 (कुमारसंभवं पंचमः सर्ग)3

पार्वती अपने मृणाल कोमल शरीर को विभिन्न व्रतों से सुखाती गई और उसने तपस्वियों के कठिन शरीरों से अर्जित तपों को बहुत पीछे छोड़ दिया।

तपस्यारत पार्वती के पास एक जटाधारी साधु आकर कहते हैं–

यदुच्यते पार्वति! पाशव त्तये न रूपमित्यव्यभिचारि तद्वयः

तथाहि ते शीलमुदार दर्शने। तपस्विनामव्युपदेशतां गतम् ॥36॥ कुमारसंभवं पंचमः सर्गः

हे पार्वती! यह तो कहा जाता है कि रूप यानी सुन्दर शरीर पापवृति की ओर नहीं बढ़ाता, बिल्कुल ठीक है। उदाहरण तुम हो। तुम्हारा शील तो तपस्वियों के लिए भी उपदेश बन गया है।

उपयुक्त श्लोक के माध्यम से स्त्री की कोमल काया का सम्मान और उसकी दृढ़ इच्छा-शक्ति का आाय स्पष्ट है। आज स्त्री को इसी शक्ति के रूप में देखे जाने की ज़रूरत है। उसे आरक्षण नहीं चाहिए उसे प्रेम और सहयोग चाहिए। उसे पति का

अर्धांग ही होना है। यह सोच हमारे पुराणों की है। जिसकी प्रासंगकिता को बरकरार रखते हुए कालिदास ने कुमारसम्भव की रचना की। जिसकी चित्रमय प्रस्तुति को धार्मिक अनुष्ठानों से ही जोड़ कर न देखा जाए बल्कि उसे काव्यगत विशेषताओं और कलागत सौन्दर्य से प्रेरित मान कर देखने की आवश्यकता है। उसके मर्म में पुरुष की सहचरी स्त्री और स्त्री के सहयोगी पुरुष के परस्पर सम्बन्धों की उदात्तता है। इसके आधार पर समाज की सुन्दर परिकल्पना द्वारा सदियों से भारतवर्ष में विवाह जैसी संस्था अपना अस्तित्व बनाए हुए हैं।

शिव और शक्ति का स्वरूप इष्ट देवता और देवी का ही नहीं है।

अपितु 'हरितालिका व्रत जैसा पर्व उससे उत्पन्न एक ऐसा अनुष्ठान है जिसे उत्तर भारत में असंख्य स्त्रियाँ करती हैं। जो न सिर्फ अपने पति की खैरियत के लिए होता है अपितु भूख और प्यास की एक ऐसी अनुभूति से रूबरू कराता है जो मानव संवेदना का अभिन्न हिस्सा है। मानवता की रक्षा के लिए शिव और उनकी शक्ति की उपादेयता से इन्कार नहीं किया जा सकता चाहे वह पौराणिक कथाओं में हो, कवि की कविता में हो चित्रकार के चित्र में या भारतवर्ष के प्रत्येक पुरुष और स्त्री में। शिवशक्ति महज धार्मिक ईष्ट देव ही नहीं बल्कि एक विचार है जिनकी शावतता और अनश्वरता स्थायी है संचारी नहीं। इनमें जीवन के समस्त रस समाहित है। अतः संहार के देव श्री शिव को श्री शिवमहापुराण की प्रथम विद्येवरसंहिता के मंगलाचरण के इस दोहे के द्वारा प्रणाम–

एक-रदन सिन्धुर-वदन, काटहिं, विघ्न गणेश।
'रामलग्न' मानस विमल, विचरहिं सदा महेश॥

संदर्भ ग्रंथ

1. कालिदास ग्रन्थावली, प्रथम भागः डॉ. मिथिला प्रसाद त्रिपाठी, पृष्ठ सं. 309
2. वही
3. वही पृष्ठ सं. 356
4. शिवमहापुराण काशी का शुद्ध पुराण, पं. श्री राम लग्न पाण्डेय 'विशारद्' पुस्तक भण्डार वाराणसी-पृष्ठ सं. 49, वर्ष 2008।

आवास : 304, बरसाना अपार्टमेट, माधोकुंज, कटरा, इलाहाबाद

मोबाइल : 9411082387

संगीत के जनक शिव

डॉ. किरण सिंह

संगीत प्रकृति के हर कण में मौजूद है तथापि शिव को संगीत का जनक माना गया है। 'शिवमहापुराण' के अनुसार शिव के पहले संगीत के बारो में किसी को भी जानकारी नहीं थी। नृत्य वाद्य यंत्रों को बजाना और गाना उस समय कोई नहीं जानता था कर्मा कि शिव ही इस ब्रह्मनांड में सर्व प्रथम आये है।

पुराणों के अनुसार सृष्टि के आरंभ में नादब्रह्म से जब शिव प्रकट हुए तो उनके साथ 'सत', 'रज' ओर 'तम' ये तीनों गुण भी जन्म थे। यही तीनों गुण शिव के 'तीन शूल' यानी 'त्रिशूल' कहलाए।

भगवान भोले नाथ दो तहर से ताण्डव नृत्य करते थे पहला जब वो रौद्र रूप में होते थे तब वे बिना उमरू के ताण्डव नृत्य करते थे लेकिन दूसरे ताण्डव नृत्य करते समय वे डमरू भी बजाते थे तो प्रकृति में आनन्द की बारिस होती थी। ऐसे समय में शिव अनन्द से पूर्ण रहते थे। लेकिन जब वो शान्त समाधि में होते तो नाद करते।

नाद और भगवान शिव का अदूर सम्बन्ध है। वास्तव में नाद एक ऐसी ध्वनि है जिसे 'ऊँ' कहा जाता है। पौराणिक मत है कि–'ऊँ' से ही भगवान शिव का जन्म हुआ। संगीत के सात स्वर तो आते जाते रहते हैं लेकिन उसके केन्द्रीय स्वर नाद में ही है। नाद से ही ध्वनि ओर ध्वनि से ही वाणी की उप्रत्रि हुई है। शिव का डमरू नाद साधना का प्रतीक माना गया है।

मरत मुनि ने नाट्यशास्त्र का पहला अध्याय लिखने के बाद अपने शिष्य को ताण्डव का प्रशिक्षण दिया था। उनके शिष्यों में गंधर्व और अप्सराएँ थीं। नाट्य वेद के आधार पर प्रस्तुतियाँ भगवान शिव के समझ प्रस्तुत की जाती थी।

भरत मुनि के दिये जान और प्रशिक्षण के कारण उके नर्तक तांडव भेदा अच्छी तरह जानते थे। उसी तरह से अपनी नृत्यशैली परिवर्तित कर लिया करते थे। पार्वती ने यही नृत्य बागासुर की पुत्री को सिखाया था। धीरे-धीरे ये नृत्य युगों युगान्तरों से वर्तमान काल में भी जीवत है। शिव का यह ताण्डव नटराग रूप का प्रतीक है। नटराज भगवान शिव का हो रूप है। जब शिव ताण्डव करते है तो उनका यह रूप नटराज कहलाता है। नटराज दो शब्दों नट और राज से बना है नट का अर्थ है कला और राज का अर्थ है राजा। भगवान शंकर का यह रूप इस बात का सूचक है कि अज्ञानता को सिर्फ ज्ञान, संगीत और नृत्य से ही दूर किया जा सकता है।

नाट्यशास्त्र में उल्लेखित संगीत, नृत्य, योग, व्याकरण, व्याख्यान आदि के प्रवर्तक शिव ही है। 'शिव महापुराण' भी 29 उपपुरागों में से एक है। इसमें 24,000 श्लोक है जिसमें शिव का संगीत के प्रति स्नेह के बारे में विस्तार से वर्णन किया गया है।

वर्तमान समय में शास्त्रीय नृत्य से सम्बन्धित जितनी भी विधायों प्रचलित है वह ताण्डव नृत्य की

देन है। ताण्डव नृत्य की तीव्र प्रति क्रिया है। वही लास्य सौभ्य है। लस्य शैली में वर्तमान में 'भरत नाट्यम' कुचिपुडी ओडिसी और कत्थक नृत्य किये जाते है यह लास्य शैली से प्रेरित है। जबकि कथककली ताण्डव नृत्य से प्रेरित है।

वेदों का मूल मंत्र 'ओडम' है। उसमें तीन अक्षर अ उतथा म सम्मलित है। जो क्रमश वड्डमा स्तृष्टिकर्ता विष्णु पालन करता महा संहार करता माना गया है। उन तीनों अक्षरों की ऋग्वेद, सामवेद तथा यत्रुर्वेद से लिया गया है। संगीत के सात स्वर षडत्र, ऋषम, गांधार, आदि वास्तव में ऊँ के गर्भ से ही उत्पन्न हुग्प्रा है। शिव, ब्रह्म, सरस्वती, गन्धर्व और किन्नर को हम अपनी संगीतकला के आदि प्रेरक मानते चले आये हैं, इसके मूल में यह भावना है कि संगीत कला दैवी प्रेरणा से ही प्रादुर्भूत हुई है। यद्यपि संगीत मानव के लिए स्वभाविक है तथापि कला के रूप में यह दिव्य प्रेरणा से ही आया होगा। संगीत वह सुन्दर सुरमि, सरस पक्ष है जो बिना स्वर्ग के प्राणदायक, शीतल, ओषकण के खिलता ही नहीं। हमारे ऋषियों और अचार्यो का यह विश्वास है कि शंकर के डमरू से वर्ग और स्वर दोनों उत्पन्न हुए। शंकर की शष्कि पार्वती, शिवा, दुर्गा भी संगीत को प्रेरक मानी गयी है।

ब्रह्मा भी संगीत के प्रेरक के रूप में स्मरण किये गये है। ब्रह्म शब्द बृह धातु से बना है। इस धातु का अर्थ है अत्भविस्तार ध्वनि होना, ध्वनि के द्वारा हृदय के भावों को अभिव्यक्त करना। ब्रह्म के मूल में ही शब्द या नाद है। ग्प्रतः इन्हे संगीत का प्रेरक मानना सर्वथा उपयुक्त है।

सरस्वती भी संगीत के आडि प्रेरकों में से स्मरण की गई है। सरस्वती ब्रह्मा की शक्ति का ही नाम है। सरस + वती शब्द स्तृ घातु से बना है जिसका अर्थ है सरकना, गतिशील होना। सरस्वती ब्रह्मा की वह शक्ति है जिसके द्वारा ब्रह्मा में गतिशीलता आती है। इसी शक्ति से ही ब्रह्मा विश्व का निर्माण करते हैं। इस शक्ति का पर्याय है शब्द या नाद ग्प्रतः सरस्वती काव्य, संगीत इत्यादि ललित कलाओं की जननी है।

ऐसी बात नहीं कि हमारे ही देश में देवी देवताओं को संगीत की जाननी कहा गया वरण युरोप, अरब और फारस में भी 'संगीत' के लिए जो शब्द लिये यूनानी भ्राा में संगीत को मौसिकी लैटिन में मुसिका प्रांसीसी में मुसीक जर्मन में मूसिक अंग्रेजी में क्यूजिक इबानी, अरबी, फारसी में मोसीकी इन सब शब्दों में साम्य है। ये सभी शब्द यूनानी भाषा के 'म्यूज' शब्द से बने हैं। म्यूज यूनानी परंपरा में काव्य और संगीत की देवी मानी गयी है। कोश में म्यूज का अर्थ है 'गान की प्रेरिका देवी' ग्प्रतः इन साटी बातों से स्पष्ट है भारत ही नहीं अन्य देशों में भी संगीत को उद्भाव देवी देवता से हुग्प्रा है। भारतीय संगीत का इतिहास लेखक डॉ. ठाकुर यजदेव सिंह।

चित्राकला में शिव-शक्ति

डॉ. अनुराधा आर्य

एसो. प्रो. चित्राकला कन्या महाविद्यालय, आर्य समाज, भूड़, बरेली

ज्ञान की परिधि में आने वाली प्रत्येक वस्तु के दो स्वरूपों–प्राकृतिक और दैवीय से जागृत हृदय की उत्सुकता तथा रहस्यपूर्ण शक्ति के समक्ष समर्पण की भावना धर्म के रूप में प्रस्फुटित हुई। सत्य विदित है "जहाँ तर्क और विचार की समाप्ति होती है वहाँ विश्वास और भावना की पृष्ठभूमि पर 'धर्म' को जन्म मिलता है।"[1] इस प्रकार जीवन में भय एवं रहस्य की भावना से ही धर्म के अनेकानेक रूप सामने आये और अनेक धार्मिक मान्यताओं का जन्म हुआ। रहस्यमयी प्रकृति के समक्ष दुर्बल और असमर्थ मानव को धर्म ने ही संबल दिया।

कला में धर्म का अत्यधिक महत्व रहा है। आदिकाल से ही कला मानव की चिरसंगिनी रही है। भाषा के अभाव में कला ने ही सूचनाओं और भावनाओं के संचरण का कार्य किया है। अदृश्य ईश्वरीय शक्ति को रूपाकार प्रदान करने के लिए जिस दृष्मान शक्ति को माध्यम बनाया गया, उसका प्रतिनिधित्व कला ने ही किया। यही कारण है कि जीवन के प्रत्येक स्थल पर प्राण स्वरूप विद्यमान धर्म कला की आत्मा में भी व्याप्त रहा है।

हिन्दू धर्म में देवी-देवताओं के रूप-स्वरूप साकार ब्रह्म तथा असीमित अनन्त शक्ति की कल्पना निराकार ब्रह्म की अभिव्यक्ति में कला ने ही सहायता प्रदान की। भक्ति भाव से परिपूर्ण भारतीय संस्कृति कला और धर्म के पूर्ण और मधुर सामंजस्य का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है, जिसमें मानव जीवन के भौतिक और आध्यात्मिक स्वरूपों का स्पष्ट दर्शन होता है। प्राकृतिक शक्तियों के साथ मानवीय सम्बन्धों की जागरूकता भारतीय कला और धर्म के मूल में सदैव विद्यमान रही है।

"मनुष्य और समस्त प्रकृति के मध्य मधुर सम्बन्ध हिन्दू कला और संस्कृति के विशिष्ट अंग हैं।"[2] प्राचीन भारतीय दार्शनिकों द्वारा प्रकृति और विराट शक्ति के मध्य अन्तर स्थापित करने हेतु प्रकृति और पुरुष के अविच्छिन्न रूप को ही भारतीय कलाकारों ने शिव-पार्वती, सीता-राम, लक्ष्मी-नारायण और राधा-कृष्ण की अप्रतिम छवियों की रचना की, जो हिन्दू दैनिक जीवन का एक अभिन्न अंग बन गयी।

इस प्रकार मानव जीवन, धर्म और कला में रहस्यपूर्ण तत्व सदैव विद्यमान रहा है। धार्मिक भावनाओं की अनुभूतियों को कलात्मक प्रवृत्ति से अभिव्यक्ति मिली। जहाँ एक ओर धार्मिक भावना ने आत्मा और परमात्मा के मध्य सम्बन्ध स्थापित किया वहीं दूसरी ओर कलाकारों ने इस मधुर सम्बन्ध को दैवी शक्तियों के युगल रूप में प्रस्तुत किया। शिव शक्ति में इसी युगल स्वरूप के दर्शन होते हैं।

"शिव और शक्ति को लिंग का प्रतीक माना गया है, जिससे सृटि का उद्भव हुआ।

इसमें योनि मूल प्रकृति अर्थात् उपादान कारण का प्रतीक है और लिंग निमित्त कारण का प्रतीक। समष्टि रूप में वे मूल कारण के प्रतीक हैं।"[3] ब्रह्म तथा प्रकृति में अद्वैत की भावना हिन्दू धर्म और कला का प्रमुख तत्व है। शिव शक्ति इसी अद्वैत भाव के द्योतक हैं।

दार्शनिक विचारधारा के अनुसार शिव जीवन का परम ध्येय है। शिव का अर्थ है नैतिक एवं कल्याणकारी यही कल्याण कामना है। शिवम की भावना व्यक्तिगत पक्ष से लेकर विश्व कल्याण तक विस्तृत है। कलाकृति में निहित जागृत भावना दर्शक तक उसी रूप में पहुँचना जैसी कलाकार की है, और यदि वह सर्व कल्याण भावना से परिपूर्ण है तो उस कलाकृति में शिव तत्व विद्यमान होता है। पाशविक प्रवृत्तियों का त्याग और मानवीय प्रवृत्तियों का ग्रहण धार्मिक और कल्याणकारी भावना ही है। "हमारे मनीषियों ने इसे परमानन्द लीलता अर्थात् मोक्ष का साधन मानकर कला को आत्मोत्थान में सहायक माना है।"[4]

मानव के व्यक्तिगत विकास में आत्मिक विकास की भूमिका मुख्य होती है। इसी व्यक्तिगत विकास और कल्याण में सामूहिक विकास और कल्याण की भावना निहित होती है। अतः समष्टि की कल्याण भावना शिव का व हत रूप कहा जायेगा। कल्याण की खोज में ही मनुष्य शिव के वास्तविक रूप को समझ पाता है। विश्व मंगल की कामना में मानवता, समानता, स्वाधीनता और आध्यात्मिकता सहायक होते हैं। विश्व मंगल की यही व्यापक भावना ही शिव भावना है, भले ही तांडव नर्तक शिव प्रलयंकारी हैं। आध्यात्मिक दृष्टि से शिव परम कारुणिक, महामानव, उदार भावों के प्रतीक हैं। यही भारतीय संस्कृति की उदात्त कल्पना है।

"शक्ति तंत्रों में शक्ति का विमर्श शिव की आत्मावगति तथा विश्व के उदय का आरम्भ है। तंत्रों में विमर्श शक्ति की सुन्दरी संज्ञा है। सृजनात्मिका होने के कारण इसे कला (महाकला) कहते हैं।"[5] आदर्शवादी तथा आध्यात्मिक दृष्टिकोण से सत्य को शिव तथा शिव को ही सुन्दर माना गया है अर्थात् सत्यम् शिवम् सुन्दरम् स्वयं में ही एकरूपता लिए हुए पूर्ण हैं। सृजन ही सत्य का मूल और पूर्णतर रूप है जिसमें अवगति और अभिव्यक्ति, आलोक और आह्लाद तथा सत्यम और सुन्दरम का समन्वय माना गया है।

शक्ति के विमर्श में सृजन की अभिव्यक्ति आन्तरिक और बाह्य दोनों रूपों में होती है। आन्तरिक अभिव्यक्ति शिव के अहंकार का प्रकाशन है और बाह्य अभिव्यक्ति सृष्टि का विस्तार। लौकिक सृजन के दो रूपों में प्रथम चेतना में भावरूप उद्भावन का कलात्मक सृजन आंतरिक रूप तथा द्वितीय भाषा, स्वर, वर्ण आदि के माध्यम से आन्तरिक अभिव्यक्ति का बाह्य प्रकाशन जो कलाकृतियों में होता है, बाह्य रूप है। भारतीय परम्परा में शिव और शक्ति को उमा-महेश स्वरूप के अतिरिक्त संयुक्त रूप अर्द्धनारीश्वर स्वरूप में भी रचा गया है। आलिंग्नबद्ध हर-गौरी, उमा-महेश या शिव-पार्वती चित्र-मूर्तियाँ आध्यात्मिक सत्य का साक्ष्य प्रस्तुत करती हैं। "यह प्रतीक मात्र है जिसमें काम आनन्द ऊँचे उठकर एक आध्यात्मिक आनन्द बन गया। अर्द्धनारीश्वर स्वरूप के समान ही उमा-महेश्वर मूर्तियाँ प्रकृति और पुरुष के मानवीय रूपान्तरण उनके ऐक्य की सूचक हैं। अर्द्धनारीश्वर इस योग (ऐक्य) का अव्यक्त रूप है तो उमा महेश्वर व्यक्त रूप।"[6]

इस प्रकार शिव-पार्वती के इस अर्द्धनारीश्वर स्वरूप में सृष्टि के सृजन और विकास का रहस्य विद्यमान है। इस स्वरूप को धारण कर शिव ने ब्रह्मा को मैथुनी सृष्टि से अवगत कराया तत्पश्चात् उत्पन्न नारी स्वरूप से ही सृष्टि के विकास को गति मिली। पुरुष अर्थात् शिव के लिंग और

प्रकृति अर्थात् शक्ति या देवी की योनी के संयोग से ही सृष्टि की रचना हुई। कोलिन्स के शब्दों में महाभारत इस रचना के माध्यम स्वरूप की सराहना करता है।

डेविड किन्सले के अनुसार "ईश्वर दोनों हैं शिव और पार्वती, दोनों पुरुष और स्त्री, दोनों माता और पिता, दोनों स्थूल और चेतन, दोनों निष्ठुर और सोम्य, दोनों विनाशक और सृजनात्मक और ब्रह्माण्ड के अन्य सभी विरोधाभासों का मिलन है।"[7]

जहाँ भारतीय परम्परागत राजस्थानी व पहाड़ी शैलियों में शिव शक्ति सम्बन्धी मनमोहक चित्रण हुआ है वहीं परम्परागत वास्तुकला व मूर्तिकला में भी शैव मत के अनेकानेक मनमोहक रूपाकारों की भरमार है। मूर्तिकला की मथुरा कुषाण, एलीफेंटा, नागर, चित्तौड़गढ़ बांसवाड़ा, बांदीकुई, कोटा, कश्मीर, द्रविड़ व चालुक्य शैलियों में पौराणिक कथाओं पर आधारित भगवान शिव-पार्वती की अनेक मूर्तियों को मन्दिर शिलाखण्डों में उत्कीर्ण किये गये हैं जो भारतीय कला की अमूल धरोहर हैं।

शिव-शक्ति और शक्ति है शिव,
पुरुष-प्रकृति, अर्द्धनारीश्वर।
रंग-रूप में जब प्रगटा यह,
कहलाया सबका परमेश्वर ॥

संदर्भ ग्रंथ

1. कला, सौन्दर्य और जीवन : प्रो. रणवीर सक्सेना : पृ.-520
2. वही : पृ.-540
3. रीसेन्ट रिसर्च इन सोशियल सांइंसेज एण्ड ह्यमून्नीटीज : (नेशनल रिर्फीड जनरल), संजीव आर्य एव नीलम विष्ट : पृ.-133
4. एक्सप्रेशन : 2012 : प्रो. डॉ. कुमकुम श्रीवास्तव : पृ.-21
5. सम्मेलन पत्रिका : कला अंक : डॉ. रामानन्द तिवारी : पृ.-09.
6. रीसेन्ट रिसर्च इन सोशियल सांइंसेज एण्ड ह्यूमून्नीटीज : (नेशनल रिर्फीड जनरल), संजीव आर्य एव नीलम विष्ट : पृ.-135
7. हिन्दू गॉडेसेज : विजन्स ऑफ द डिवाइन फेमिनिन इन द हिन्दू रिलीजियन्स ट्रेडीशन : डेविड किन्सले : पृ.-53

संगीत के माध्यम से सृष्टि में शिव-शक्ति का संचरण

डॉ. दीप्ति बंसल

एसोसिएट प्रोफेसर संगीत विभाग (गायन)
दौलत राम कॉलिज दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सृष्टि के पूर्व न सत् (कारण) था और न असत् (कार्य)। केवल एक निर्विकार शिव ही विद्यमान थे। श्री ब्रह्मवैवर्तपुराण में कहा गया है–

''त्वं ब्रह्मा सृष्टिकर्ता च त्वं विष्णुः परिपालकः।
त्वं शिवः शिवदोऽनन्तः सर्वसंहारकारकः ॥''

अर्थात् शिव ही सृष्टिकर्ता ब्रह्मा हैं, जगत के पालक विष्णु हैं, सबका संहार करने वाले अनन्त हैं और कल्याणकारी शिव हैं।

शिव सर्वोपरि परात्पर तत्त्व हैं अर्थात् जिनसे परे और कुछ भी नहीं है। शिव की महिमा अपरम्पार है। किसी मनुष्य में इतनी शक्ति नहीं जो भगवान् शंकर के गुणों का वर्णन कर सके। श्री पुष्पदन्ताचार्य शिवमहिम्नः स्तोत्र में लिखते हैं–

''महिम्नः पारं ते परमविदुो यद्यसदृषी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथाववाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामवधिगृणन्
ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः॥''[1]

उपरोक्त श्लोक का सार ये है कि भगवान् शंकर के स्वरूप और महिमा का सर्वथा वर्णन तो देवों की वाणी भी नहीं कर सकती। अनन्त शिव की शक्ति और तत्त्व को जो जितना समझ सके उसे उसके अनुरूप शिव की भक्ति करनी चाहिए।

संगीत के जन्म को लेकर अनेक कथायें प्रचलित हैं। भारतीय दर्शन में संगीत को केवल मनोरंजन का साधन नहीं, अपितु साधना माना गया है। कुछ विद्वानों का मानना है कि संगीत का जन्म ओम् अक्षर से हुआ है। यह एक संयुक्ताक्षर है जो अ, उ और म तीन ध्वनियों के मेल से बना है। इन ध्वनियों को ब्रह्मा (उत्पत्ति करने वाला), विष्णु (पालन करने वाला) और महेश (संहार करने वाला) माना गया है। यही ध्वनियां सभी शक्तियों की पुंज हैं और इन्हीं से सृष्टि की रचना हुई। सृष्टि के बाद अन्य ध्वनियां पैदा हुईं, ध्वनियों से स्वर और स्वरों से संगीत का जन्म हुआ। गान्धर्व उपवेद सम्बन्धी शिक्षाओं में वर्णन किया गया है कि षड्ज आदि सात स्वर एकमात्र ओंकार के ही अन्तर्विभाग हैं।[2]

धार्मिक दृष्टिकोण के अनुसार नारद मुनि द्वारा कठोर तपस्या करने पर शिव ने उनसे प्रसन्न होकर उन्हें संगीत सिखाया। तत्पश्चात् नारद मुनि ने स्वर्गलोक से पृथ्वी पर आकर तपस्वियों को संगीत का प्रशिक्षण दिया।[3] कहा जाता है कि पार्वती जी की शयन मुद्रा को देखकर शिवजी ने अनेक अंग-प्रत्यंगों के आधार पर ''रूद्रवीणा'' बनाई और अपने पाँच मुखों से पाँच रागों की उत्पत्ति की। ये राग थे भैरव, हिंडोल, मेघ, दीपक और श्री। तत्पश्चात् छठा राग पार्वती जी के मुख से उत्पन्न हुआ। यह राग कौशिक कहलाया।[4]

कथायें चाहे जितनी हों शिव का संगीत से संबंध गहरा है। कहा जाता है कि सृष्टि के आरंभ में जब शिव ने डमरू बजाया तो उससे पाणिनी के 14 सूत्रों का सूत्रपात हुआ। यह महेश्वर सूत्र कहलाया। उससे पूर्व अंतरिक्ष निशब्द था। शिव के प्रथम डमरू वादन से शब्द बना। महेश्वर सूत्र की भिन्न-भिन्न ध्वनियां निकलीं और संगीत का जन्म

हुआ। शिव का संबंध नृत्य से भी है। भरत मुनि ने अपने नाट्य शास्त्र में शंकर और पार्वती का नृत्य के सर्जक के रूप में उल्लेख किया है। उन्हें नटराज कहा जाता है।[5] जब शिव ने नृत्य किया तो मुद्राएं और नृत्य की विभिन्न शैलियां विकसित हुईं। हम यह कह सकते हैं कि शिव के द्वारा ही सृष्टि में संगीत का संचरण हुआ। सभी पुराणों और शास्त्रों में शिव को परम त्यागी और लोक-कल्याणकारी के रूप में चित्रित किया गया है। शिव-पुराण की कोटि रूद्र-संहिता में शिव के बारह अवतारों का वर्णन है जो बारह ज्योतिर्लिंगों के रूप में देश के विभिन्न भागों में स्थापित हैं। संगीत जीवन के कण-कण में समाया है और शिव भी। जिस प्रकार शुद्ध और कोमल स्वर मिलाकर कुल 12 स्वरों में पूरा संगीत समाया है, उसी प्रकार 12 ज्योर्तिलिंगों में सम्पूर्ण जगत समाया है तो फिर संगीत के द्वारा शिव शक्ति का संचरण क्यों न हो? शिव के बारह ज्योतिर्लिंगों क्रमशः श्री सोमनाथं (सौराष्ट्र), श्री मल्लिकार्जुन (शैलगिरि पर्वत पर), श्री महाकालेश्वर (उज्जैन), ओंकारेश्वर और अमलेश्वर (मालवा प्रांत में), श्री केदारनाथ (उत्तराखण्ड), श्री भीमशंकर (डाकिनी), श्री विश्वेश्वर (काशी), श्री त्रयंबकेश्वर (महाराष्ट्र), श्री वैद्यनाथ (परली ग्राम), श्री नागेश्वर (दारूकवन), श्री रामेश्वरम् (रामेश्वरम्) और श्री घुष्मेश्वर (वेरूल गाँव) हैं। शिव की शक्ति को सभी स्वीकार करते हैं और जब यह शक्ति संगीत के माध्यम से प्रवाहित होती है तो वह निश्चित ही प्रभाव डालती है।

भारतीय संगीत को अनेक वर्गों में बाँटा जा सकता है, जैसे–शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत, चित्रपट संगीत, लोक संगीत इत्यादि। इन वर्गों के अन्तर्गत अनेक गायन शैलियां आती हैं, जैसे ध्रुपद, धमार, ख़्याल, ठुमरी, दादरा, होरी, कजरी, भजन, लोकगीत इत्यादि। इनमें से अनेक गायन शैलियों की बंदिशों में हमें शिव के स्वरूप, गुण, शक्ति आदि अनेक विशेषताओं का वर्णन मिलता है। ध्रुपद शास्त्रीय संगीत की एक प्राचीन गायन शैली है। शिव से सम्बन्धित ध्रुपद की अनेक बंदिशें उपलब्ध हैं। उदाहरणार्थ–राग भैरव में चौताल में एक ध्रुपद है–

"गंगाधर त्रिनयन सूल पानि
भस्म अंग नीलकंठ गौरी अरधांग
कर त्रिसूल गरे मुंड माल भाल चंद्र
मृत्युंजय भृंगी सोहे भूत संग"[6]

इसी प्रकार राग सोहनी में सूल ताल में एक रचना है–

"प्रथम आदि शिव शक्ति नाद परमेवर
नारद तुंबरू सरस्वती भज रे
अनहत आद नाद गुन सागर सरूप
ब्रह्मा विष्णु महेश लछुमन रे"[7]

ख़्याल गायन शैली शास्त्रीय संगीत की सर्वाधिक प्रचलित शैली है। कई घरानेदार बंदिशें शिव शक्ति को उजागर करती हैं। किराना घराने की एक प्रसिद्ध बंदिश है जो राग भटियार में है और एकताल में निबद्ध है–

"देवन पति महादेव, शंकर मन भाए
शीश गंग और चन्द्र, डमरू हर बजाये
गले भुजंग, भस्म अंग गौरी को रहे संग
मुंडन की माल सोहे, हर हर हर गाए"

इसी प्रकार राग भूपाली में एक रचना है, जिसमें शिव की महिमा का बखान करते हुए उनकी पूजा की विधि भी बताई गई है।

"हे महादेवा त्रिसूल धरन दुःख भंजन गनेश
जिनके जग भंजन महादेवा
पाँच देव पंचायन पूजन कर कपोल वादी निर्मल सो
बेल फूल चंदन कमल कर पती महादेवा"[8]

शिव शक्ति से प्रेरित होकर सुप्रसिद्ध ठुमरी गायिका विदुषी सविता देवी ने भी झपताल में निबद्ध राग विभास में एक ख़्याल रच डाला–

"शिव शिव नमो नाथ, पार्वती पतये
तीन नेत्र गंगाधर भोला नाथ आए
बाघम्बर नागमाल हरि हरि हर गाये"

शिव के मंगल स्वरूप से कोई भी गायन शैली अछूती नहीं रही है। अक्सर होरी गायन शैली में राधा-कृष्ण के होली खेलने का वर्णन होता है, किन्तु

निम्नलिखित होरी में शिव के औघड़ रूप के दर्शन होते हैं। पंडित छन्नू लाल मिश्र द्वारा गाई ये शिव की होरी अपने आप में अनूठी है और दादरा ताल में निबद्ध है–

''खेलें मसाने में होरी दिगंबर खेलें मसाने में होरी
भूत पिशाच बटोरी दिगंबर खेलें मसाने में होरी
नाचत गावत डमरू धारी, छोड़ें सर्प गरल पिचकारी
अरे पीटें प्रेत थपोरी
भूतनाथ की मंगल होरी, देख सिहाऐं बिरज की गोरी
धन धन नाथ अघोरी''

लोकगीतों में भी शिव की क्रीड़ाओं का वर्णन देखने को मिलता है। श्रावण मास में आने वाले झूला-तीज त्यौहार के अवसर पर गाने वाले गीतों में एक लोक प्रिय गीत है–

''शिव शंकर चले री कैलाश बुंदियां पड़ने लगीं
भोले बाबा चले रही कैलाश बुंदियां पड़ने लगीं
गौरा जी ने बोई हरी-हरी मेहंदी
भोले बाबा ने बोई भांग''

भक्ति संगीत भी शिव की रचनाओं से ओत-प्रोत है चाहे वह पारंपरिक भजन हों, जागरण संगीत अथवा फिल्म संगीत। शिव का प्रभाव ऐसा है कि चहुँ ओर दिखाई देता है। विश्वविख्यात शास्त्रीय गायक पंडित जसराज का सी.डी. 'शिव-शंभो' शिव की स्तुतियों का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। म्यूजिक टुडे की भक्तिमाला एलबम में भी शिव की अनेक स्तुतियां विभिन्न कलाकारों द्वारा गाई गई हैं। इस एलमब में पं. राजन साजन मिश्र, विदुषी श्रुति सदोलिकर, पं. उमाकांत एवं रमाकान्त गुन्देचा आदि द्वारा गाई ये स्तुतियाँ निश्चित ही संगीत के माध्यम से शिव-शक्ति को जागृत करती हैं। कोई भी शास्त्रीय और सुगम संगीत का कलाकार शिव-शक्ति से अछूता नहीं रहा है। विदुषी सविता देवी द्वारा गाया शिव भजन 'शिव शिव के मन शरण हो, तब प्राण तन से निकलें' मनुष्य द्वारा मुक्ति व मोक्ष प्राप्ति की इच्छा को दर्शाता है। शिव का एक भजन मैंने स्वयं रचा, शब्द भी खुद लिखे। ''शिव शिव कहो रे मन शिव ही को ध्याओ शिव ही हो जाओ'' शिव का चिन्तन, मनन करने से जब रचना खुद-ब-खुद बनने लगे तो हम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि ये शिव शक्ति का प्रभाव है। नृत्य में भी शिव की अनेक रचनाओं का प्रयोग देखा जा सकता है।

साहित्य, संगीत और संस्कृति में शिव की महिमा अपरम्पार है। ज्ञानानन्द स्वरूप, समस्त तपस्याओं के फलदाता, करुणा के सागर शिव सृजनात्मकता के प्रतीक हैं। शिव के दर्शन एवं भक्ति से मनुष्य इहलौकिक सम्पूर्ण सुखों का आनन्द उपभोग करते हुए आगे चलकर मोक्षपद की सद्गति का लाभ प्राप्त कर सकता है। श्रद्धा एक भाव है जो चाहे ईश्वर के प्रति हो, गुरु के प्रति अथवा कार्य के प्रति, वह कल्याणकारी है। श्रद्धा से विनय प्राप्त होता है और विनयशील मनुष्य ही साधना के मार्ग पर अग्रसर हो सकता है। शिव के प्रति श्रद्धा हमें मुक्ति के द्वार तक ले जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ

1. शिवस्तोत्ररत्नाकर, गीता प्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ-22
2. उमेश जोशी, भारतीय संगीत का इतिहास (1969), पृष्ठ-12
3. मंजरी जोशी, भारतीय संगीत की परम्परा (2012), पृष्ठ-6
4. उमेश जोशी, भारतीय संगीत का इतिहास (1969), पृष्ठ-3
5. पंडित विजय शंकर मिश्र, संगीत के इन्द्रधनुषी शिलालेख (2017), पृष्ठ-267
6. पं. विष्णु नारायण भातखण्डे, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग-2 (1985), पृष्ठ-226-227
7. पं. विष्णु नारायण भातखण्डे, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग-3 (1985), पृष्ठ-435
8. उस्ताद अब्दुल मजीद खान, भुवेन्द्र त्यागी, संगीत के जवाहरात (2009), पृष्ठ-190

भारतीय संगीत और शिव शक्ति : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. हर्षित वैयर

सहायक आचार्य, संगीत विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

भारतीय संस्कृति में आदि शक्ति के रूप में नारी की उपासना की गई। जब हम बात करते है शिव शक्ति की तो हमारे मस्तिष्क में अर्द्धनारी नटेश्वर का का ध्यान आता है, अर्थात शिव पार्वती। नारीत्व में देवत्व के दर्शन करने की महान परम्परा केवल भारत में ही नही अपितु सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त है। शिव पुराण के अनुसार शिवक्त शक्ति का संयोग ही परमात्मा है शिव की जो पराशक्ति है उससे चित्त शक्ति प्रकट होती है चित्त शक्ति से आनन्द शक्ति का प्रादुर्भाव होता है, आनन्द शक्ति से इच्छा शक्ति का उद्भव हुआ इच्छा शक्ति से ज्ञान शक्ति और ज्ञान शक्ति से पांचवी क्रिया शक्ति प्रकट हुई उन्हीं से निव ृति आदि कलाएं उत्पन्न हुई है[1]। जब हम संगीत शिव शक्ति की बात करते है तो हम पहले यह जान ले कि, संगीत क्या है?

शिव शक्ति क्या है?

सर्वसमष्टि का जो आत्म है, उसी का नाम विराट है और पृथ्वी तल से लेकर क्रमशः शिव तत्व तक जो तत्वों का समुदाय है वही ब्रह्मण्ड है। वहीं क्रमशः तत्व समूह है लीन होता हुआ अंततोगत्वा सबके जीवन भूत चेतन्यमय परमेश्वर में ही लय को प्राप्त होता है और सृष्टि काल में फिर शक्ति द्वारा शिव से निकल कर स्थूल प्रपंच के रूप में प्रलय काल पर्यन्त सुखपूर्वक स्थित रहता है। शिव से ईशान उत्पन्न हुए है, ईशान से तत्पुरुष का प्रादुर्भाव हुआ है। तत्पुरुष से अघोर का, अघोर से वामदेव का और वामदेव से सधोजात का प्राकट्य हुआ है। इस आदि अक्षर प्रणव से मूलभूत 5 स्वर और 33 व्यंजन के रूप में 38 अक्षरों का प्रादुर्भाव हुआ है।

'गीतं वाद्यं तथा नृत्य त्रयं संगीत मुच्यते'

अर्थात गायन वादन तथा नृत्य तीनों विधा मिलकर संगीत कहलाता है। संगीत शब्द में व्यक्तिगत तथा समूहगत दोनों विधाओं की अभिव्यजंना स्पष्ट है। इसी कारण व्यक्तिगत गीत वादन एवं नर्तन के साथ समूह गान, समूह वादन तथा समूह नर्तन का समावेश इसके अन्तर्गत होता है। इसी परिभाषा का अनुसरण प्राचीन से लेकर आधुनिक तक बराबर पाया जाता है[2]।

संगीत की उत्पत्ति कब व कैसे हुई इस सन्दर्भ में विभिन्न मत और किंवदतिया प्रचलित है। संगीत की उत्पत्ति आरम्भ में वेदों के निर्माता ब्रह्मजी द्वारा हुई। ब्रह्मजी ने यह कला शिवजी को दी और शिवजी के द्वारा देवी सरस्वती को प्राप्त हुई। सरस्वती को इसलिए ही 'वीणा पुस्तक धारणी' कहकर संगीत एवं साहित्य की अधिष्ठात्री माना है। सरस्वती जी से नारदजी ने यह कला स्वर्ग गंधर्व किन्नर और अप्सराओं को यह शिक्षा दी। वहा से भरत नारद हनुमान आदि ऋषि संगीत कलाओं में पारंगत होकर पृथ्वी यानी भू लोक में संगीत कला के प्रचारार्थ अवत्तीर्ण हुए[3]।

पुराविधों के अनुसार संगीत कला तथा शास्त्र का उद्भव स्वयं भू परमेश्वर से हुआ। भारतीय

परम्परा के अनुसार नटराज शिव नृत्य कला के आदि स्त्रोत है तथा भगवती सरस्वती गीत तथा वाद्य कला की प्रवृतिका है। नाट्य शास्त्र के अनुसार गधर्व के तत्वों को समाहित करने वाला नाट्य वेध स्वयं ब्रह्म की रचना है। नृत्य कला का ताण्डव तथा लास्य रूप भगवान शिव तथा पार्वती की देन माना जाता है।

शिव प्रदोष स्त्रोत में लिखा है कि, जगत की जननी गौरी को स्वर्ण सिंहासन पर बैठा कर प्रदोष के समय शूलपाणि शिव ने नृत्य करने की इच्छा प्रकट की इस अवसर पर सब देवता उनको घेर कर खडे हो गये और उनका स्तुती गान करने लगे। सरस्वती ने वीणा, इन्द्र ने वेणु, तथाा ब्रह्म ने करताल, बजाना आरम्भ किया। लक्ष्मी जी गाने लगी और स्वयं विष्णु भगवान मृदंग बजाने लगे। इस नृत्यमय संगीतोत्सव को देखने के लिये गंधर्व, यक्ष, पतंग, उरग, सिद्ध, साध्य, विधाधर देवता अप्सराए आदि सभी उपस्थित थे[4]।

शिव विश्वास है तो शक्ति श्रद्धा। तांत्रिक सिद्धान्त के अनुसार सृष्टि का निर्माण शिव और शक्ति के संयोग का परिणाम है। दोनों का संयोग ही नाद का मूल कारण बताया गया है[5]। रागध्यान परम्परा में

शिव शक्ति समायोगद्रागाणां सम्भवो भवेत्

कहकर रागों की उत्पत्ति का आधार माना गया है। हमारे राग माला चित्रों में कई रागों के चित्र का ध्यान भगवान शिव और शक्ति तथा इनके प्रतीक चिन्हों के रूप में आधारित है। जैसे–भैरव, शंकरा, आसावरी इत्यादि।

एक किवंदती के अनुसार पार्वती जी की शयन मुद्रा को देखकर शिवजी ने उनके अंग प्रत्यगों के आधार पर रूद्रवीणा बनाई और अपने पांच मुख (पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण तथा आकाशन्मुख) से पांच रागों की क्रमशः भैरव, हन्डोल, मेघ, दीपक और श्रीराग प्रकट हुये तथा छठा राग पार्वती के मुख से कौशिक राग उत्पन्न हुआ।

चित्त शक्ति से नाद और आनन्द शक्ति से बिन्दु का प्राकट्य बताया गया है इच्छा शक्ति से 'म' कार प्रकट हुआ है। ज्ञानशक्ति से पांचवा स्वर 'उ' कार उत्पन्न हुआ और क्रिया शक्ति से 'ऊ' कार की उत्पन्नी हुई। इस प्रकार प्रणर्व ऊ की उत्पत्ति हुई। कहा जाता है कि प्रजापति ने सृटि की कामना की। सृष्टि को उत्पन्न करने के लिये उसने तप और श्रम किया। उस ज्ञम और तप से तीनों लोकों की उत्पत्ति हुई। इन तीन लोकों को उसने तपाया तो उनसे तीन तेज अग्नि, वायु और आदित्य उत्पन्न हुए। पुनः इन तीनों को तपाने से तीन वेद ऋग, यर्जु और शाम। फिर तीन व्याह्मतिया उत्पन्न हुई। भूः भुवः और स्वः। इन तीन व्याह्मतियों से जो रस उत्पन्न हुआ वही ओउम था। ओउम को शब्द ब्रह्म, नादब्रह्म या संगीत के आदि तत्व के रूप में माना जाता है[6]।

नाद साधना में 'ओउम' स्वयं शिव शक्ति का प्रतीक है। शिव का प्रिय आयुद्य वाद्य डमरू जो कि संगीत के चर्म वाद्य श्रेणी के अन्तर्गत आता है। उसे संगीत का प्रथम ताल मापक यंत्र कह सकते है। उसी को काटकर नक्कारा बनाया गया। उसे बड़ा बनाने से ही नौबत व नगाड़ा बना[7]।

इस प्रकार हम देखते है कि सृष्टि के रचयिता अर्द्धनारी नटेश्वर अर्थात शिव शक्ति संगीत के गायन वादन तथा नृत्य के गायन वादन तथा नृत्य के प्रवृतक रहे है।

संदर्भ ग्रंथ

1. शिवपुराण
2. संगीत विशारद लेखक बसंत
3. संगीत विशारद लेखक बसंत
4. सामगान और शास्त्रीय संगीत पत्रिका–डॉ. पंकज माला शर्मा वैदिक संगीत अंक
5. जीवन संरक्षक मूल्य न्यूज–डॉ. एनके शर्मा 10.03. 2016
6. सामगान और शास्त्रीय संगीत पत्रिका–डॉ. पंकज माला शर्मा वैदिक संगीत अंक
7. वाद्यों का ऐतिहासिक अवलोकन–रसिक लाल मणिकलाल पंडया वाद्य संगीत अंक जनवरी 2004 पृ.-24

तंत्र तथा आगम साहित्य में संगीत और शिव शक्ति

डॉ. अंजलिका शर्मा

सह-आचार्य, संगीत विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

"सत्यम शिवम सुन्दरम"

सत्य नेकी और संदुरता के अन्तःस्थित आदर्शों की उपलब्धि के लिये मानव सदा से प्रयत्नशील रहा है। सत्य की खोज में ही मानव ने धर्म विज्ञान और इतिहास को प्राप्त किया। धर्म शब्द संस्कृत के धृ धातु से बना है जिसका अर्थ है धारण करना अर्थात जो धारण करता है वहीं धर्म है। **धारणा धर्य मित्याः धर्म धारयते प्रजाः** जो प्रजा (समाज) को बांधता है, जो जोडता है वही धर्म है। परमपरागत रूप से और शाब्दिक उत्पत्ति के दृष्टिकोण से भी धर्म का यही स्वरूप समझा जाता है। का वास्तविक अर्थ ही धारण करना है[1]।

भारतीय संस्कृति के दीर्घ कालीन इतिहास में धर्म की दो धाराओ का प्रचलन प्राचीन काल से रहा है। 1-वैदिक तथा 2-तान्त्रिक। वैदिक के लिये निगम तथा तान्त्रिक के लिये आगम की संज्ञा प्रादान की गई है। प्रथम धारा का प्रमुख आधार ऋषि मुनियो के चिन्तन पर आधारित वैध तथा उपनिषद आदि ग्रन्थ माने जाते है। द्वितीय धारा की आधारशिला लौकिक मान्यताओ के आधार पर शिव सुत्र, शक्ति सुत्र तथा तान्त्रिक पुराण आदि ग्रन्थ है।

शैवमत या शैव धर्म भारत का प्राणधर्म कहलाता है, यह ईश्वर की प्राप्ति का धर्म है। संगीत के प्रागेतिहासिक कालीन अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि शिव तथा शक्ति की परम्परा का उद्गम भारत की प्राचीन सिंधु सभ्यता से सम्बन्ध बताया जाता है। शिव विश्वास है, तो शक्ति श्रद्धा है। वायु पुराण के अन्तर्गत जिस पशुपत योग का वर्णन है, वह इसी परम्परा का अभिन्न अंग है। मार्कण्डेय पुराण में उपलब्ध देवी भागवत इसी आगम सम्प्रदाय का वाहक माना जाता है।

तान्त्रिक सिद्धान्त के अनुसार सृष्टि का निर्माण शिव तथा शक्तिकी संयोग का ही परिणाम है। और दोनो का संयोग ही नाद का मूल कारण बताया गया है। साधना के अनेक पंथ है। संगीत द्वारा आराध्य की उपासना तंत्रागमों की साधना का अंग है। देवता आराधना में प्रयुक्त संगीत परमार्थ का साधक बताया गया है। जगदगुरू शंकराचार्य के प्रादुर्भाव से पहले भारत में तंत्रयुग प्रवर्तित था। तंत्रों में 'यामल' बहुत पुराना माना जाता है। तान्त्रिक संगीत से देवी की आराधना करते थे। उपासनों के अंत में बली दी जाती थी। बलि के समय विभिन्न वाद्यय यंत्र बजाये जाते थे[2]।

योग एवं आगम ग्रन्थों में नाद तथा लय दोनों का सर्वाधिक महत्व है। योग ग्रन्थ में लय का वही स्थान है जो हठ योग, राज योग, मन्त्र योग का है। शैवागम में नाद की तीन अवस्था बताई गई है। 1-नाद, 2-आहत नाद, 3-अनाहत नाद[3]

नाद अर्थात महानाद का उद्भव शक्ति से माना गया है। इसी नाद से बिन्दु नाद का आर्विभाव होता है। जो कि समस्त ब्रह्मण्ड में अनाहत नाद के

रूप में व्याप्त रहता है। इसी नाद का गद्यपद्यादि वाङ्मय आदि में व्यक्त वर्णमूलक रूप आहत कहलाता है। नादानुसंधान लयसिद्धि के लिये परम साधक माना जाता है। लय का अर्थ ध्येय वस्तु से सम्पूर्ण एकतानता, जो नाद के माध्यम से सहज साध्य मानी जाती है।

नाट्यशास्त्र के अनुसार स्नान, जप, तप आदि साधनों के उपेक्षा संगीत परमार्थ प्रप्ति के लिये अत्यन्त सहायक है। आगमों की यही परम्परा शिव तथा शक्ति की उपासना में प्रस्फुटित हो उठी। भगवान शिव स्वयं संगीताचार्य नटराज है। वे भारतीय नृत्यकला के कला के प्रतिमान है। उनका अर्द्धनारी नटेश्वर का रूप प्राचीन भारतीय कला तथा साहित्य में बहुतायत दिखलाई पडता है। भगवान शिव द्वारा प्रवर्तित ताण्डव एवं लास्य उभय नृत्य प्रकार की जगवर्णित है।

नाट्य के अन्तर्गत नृत्य का प्रयोग शैव परम्परा की देन है। नाट्य शास्त्र में भरत द्वारा एक कथा वर्णित है कि देवताओं ब्रह्मा जी के निर्देान पर त्रिपुरदाय नामक डिम प्रयोग का निर्माण किया और उसका अभिनय महादेव के समक्ष प्रस्तुत किया। देवताओं के अभिनय कौशल को देखते हुए महादेव जी ने उसमे नाट्य जोड़ने का सुझाव दिया। ताण्डव नृत्य के प्रर्वतक भगवान स्वयं शिव है और इस तत्व के प्रथम प्रयोक्ता तण्डु है[4]।

नंदीकेश्वर के अनुसार वाङ्मयीन वर्णों की अभिव्यक्ति संगीत मूलक है। उनकी सम्मति में साहित्य तथा संगीत दोनों का स्त्रोत भगवान शिव है। ताण्डव नृत्य के अन्त में नटराज शिव ने अपना डमरू 14 बार निनादित किया। जिससे 14 महेश्वर सूत्रो की उत्पत्ति हुई। नन्दीकेश्वर की अन्यकृति ''रूद्र डमरू भवविवरण'' में इसी कल्पना का विकास पाया जाता है।

पाणिनीय शिक्षा में वर्णों के सम्बन्ध में शम्भुमत का निर्देशन हुआ जो साहित्य में शैवपरम्परा का सकेत करता हैं। मंतगक्रत राग बृहदेशी पर शैवागम का प्रभाव स्पष्टतः परिलिक्षित होता है। इनके अनुसार धवनि से वर्ण तथा पद का संयोग होने पर क्रमाः गान्धर्व का उद्भव होता है और इसका उद्भव मंतग महादेव के मुख से बताते है[5]।

शिव पुराण, स्कन्द पुराण तथा पदम पुराण में शैवागम का बहुनायव विवरण प्राप्त होता है तथा शैव परम्परा के अन्तर्गत संगीत के महत्वपूर्ण स्थान का विवेचन पाया जाता है। यामलाटक तंत्र में संगीत शास्त्र लिखा गया है उसमें 'उड्डीा महामंत्रोदय' में ताल विधान प्रकरण दिया गया है उसमें शंकर की स्तुति है[6]।

शिव उपासना में संगीत तत्व के गौरव से महाकवि कालीदास भी परिचित है। शिव के प्रबोधन काल पर किन्नर के द्वारा गाये जाने वाले कौाकिराग का उल्लेख कुमार सम्भव में पाया जाता है। मेघदूत में महाकाल़ेवर की उपासना के समय संगीत अराधना का उल्लेख भी कालीदास करते है। उपासना के समय देवदासिया नियुक्त की जाती थी। मेघदूत में इस तरह का वर्णित किया गया है[7]।

1. धर्म की अवधारणा - डॉ. संदेश त्यागी गीता से जुडे है, द्विमासिक पत्रिका मई, जून 2017
2. वाद्ययों का ऐतिहासिक अवलोकन - - रसिक लाल मणिकलाल पंडया वाद्य संगीत अंक जनवरी 2004 प . 30
3. पुराण तथा तन्त्र ग्रन्थों में संगीत विद्या - शरद चन्द्र श्रीधर पराजपे भारतीय संगीत का इतिहास पृ. 231
4. पुराण तथा तन्त्र ग्रन्थों में संगीत विद्या - शरद चन्द्र श्रीधर पराजपे भारतीय संगीत का इतिहास पृ. 232
5. पुराण तथा तन्त्र ग्रन्थों में संगीत विद्या - शरद चन्द्र श्रीधर पराजपे भारतीय संगीत का इतिहास पृ. 233
6. वाद्ययों का ऐतिहासिक अवलोकन - - रसिक लाल मणिकलाल पंडया वाद्य संगीत अंक जनवरी 2004 प . 30
7. पुराण तथा तन्त्र ग्रन्थों में संगीत विद्या - शरद चन्द्र श्रीधर पराजपे भारतीय संगीत का इतिहास पृ.-234

8. भरत कालीन संगीत—शरद चन्द्र श्रीधर पराजपे भारतीय संगीत का इतिहास पृ.

शैव वाड़गमय के रूप में शिव तथा शक्ति को क्रमशः ताण्डव तथा लास्य का प्रर्वतक माना गया है। दक्षिण की चिदम्बर मंदिर मं शिव तथा शक्ति के युगल नृत्य का चित्र उपलब्ध है। परम्परा के अनुसार यह युगल नृत्य, परस्पर, स्पर्धा कें रूप में किया गया था तथा इसी स्पर्धा के आवेश में अभिभूत होकर नटराज ने ऊर्ध्वताण्डव नामक अभिनव करण का आर्विभाव किया है। प्राचीन तामिल साहित्य में नृत्य कला के प्रर्वतक के रूप में नटराज शिव का गौरवगान हुआ है[8]।

निष्कर्ष रूप से हम कह सकते है कि तंत्र तथा आगम साहित्य में संगीत की विभिन्न धाराओं में शिव शक्ति किसी न किसी रूप में सर्वविद्यमान रही है चाहे वह गायन हो, वादन हो शिव और शक्ति संगीत के हर पहलू में निहित है।

संगीत में शिवशक्ति

डॉ. इला शर्मा

शोध छात्रा

संगीत का प्राचीनता अनेक विलक्षण एवं पौराणिक गाथाओं के अनुसरण एवं धार्मिक ग्रन्थों पर आधारित है अतः संगीत का वर्णन पुराणों में मिलने के कारण संगीत का सम्बन्ध धर्म से जोड़ दिया था इन परिस्थितियों में संगीत के जन्म का इतिहास खोजने के लिए हमें पौराणिक अवलोकन व पूर्वकाल के अवशेष जो भी प्राप्त हुए उन्हीं के आश्रय स्वरूप संगीत में शिव शक्ति को दर्शाने की चेष्टा की है।

संगीत प्रकृति के कण कण में मौजूद है भगवान शिव को संगीत का जन्मदाता कहा गया है। शिवमहापुराण के अनुसार शिव के पहले संगीत के बारे में किसी को कोई भी जानकारी नहीं थी। नृत्य वाद्य यन्त्रों को बजाना और गाना उस वक्त कोई नहीं जानता था, अर्थात् इस विद्या के एकमात्र जानकी शिव ही थे जिन्होंने ब्रह्मांड में अवतरित होकर संगीत एक माध्यम के रूप में सृष्टि के सृजन में संगीत के मुख्य योगदान को जीवान्वित किया। इससे स्पष्ट होता है कि शिव ही इस ब्रह्माण्ड में सर्व प्रथम आये।

पुराणों के अनुसार सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्मानाद से जब शिव प्रकट हुये तो उनके साथ सत, रज और तम ये तीनों गुण भी जन्मे थे। यही तीनों गुण शिव के तीन शूल अर्थात् त्रिशूल कहलायें।

भगवान शिव दो तरह से तांडव नृत्य करते हैं। पहला जब वो गुस्सा होते हैं तब बिना डमरू के तांडव करते हैं और दूसरा तांडव नृत्य तब जब वह डमरू भी बजाते हैं तब प्रकृति में आनन्द की वर्षा होती थी। ऐसे समय में शिव परम आनन्द से परिपूर्ण रहते हैं लेकिन जब वो शांत समाधि में होते हैं तो नाद करते हैं।

अर्थात् नाद और भगवान शिव का अटूट सम्बन्ध है अतः नाद एक ऐसी ध्वनि है जो ऊँ से ही भगवान शिव का जन्म हुआ है, संगीत के सात स्वर तो आते जाते रहते हैं परन्तु उनका केन्द्र स्वर नाद में ही समाहित होता है, अपितु नाद से 'ध्वनि' और ध्वनि से वाणी की उत्पत्ति हुई है शिव का डमरू नाद साधना का प्रतीक माना गया है।

भरतमुनि ने नाट्य शास्त्र का पहला अध्याय लिखने के बाद अपने शिष्यों को तांडव का प्रशिक्षण दिया था। उनके शिष्यों में गन्धर्व और अप्सराएँ थीं। नाट्यवेद के आधार पर प्रस्तुतियाँ भगवान शिव के समक्ष प्रस्तुत की जाती थीं।

भरतमुनि के दिये ज्ञान का प्रशिक्षण के कारण उनके नर्तक तांडव भेद अच्छी तरह जानते थे और उसी तरीके से अपनी नृत्य शैली में परिवर्तन कर लेते थे पार्वती ने यही नृत्य बाणासुर की पुत्री को सिखाया था। धीरे-धीरे ये नृत्य युगों-युगान्तर से वर्तमान काल में भी जीवंत है। शिव का यह रूप तांडव नटराज रूप का प्रतीक माना गया।

नटराज भगवान शिव का ही रूप है, जब शिव तांडव करते हैं तो उनके उस स्वरूप को नटराज कहा जाता है। नटराज शब्द दो शब्दों से मिलकर

बना है नटराज नट का अर्थ होता है कला और राज का अर्थ राजा।

भगवान शंकर का नटराज रूप ही इस का सूचक है कि अज्ञानता को सिर्फ ज्ञान संगीत और नृत्य से ही दूर किया जा सकता है।

नाट्यशास्त्र में उल्लेखित संगीत, नृत्य, योग, व्याकरण, व्याख्यान आदि के प्रवर्तक शिव ही हैं। शिव पुराण भी 29 उप-पुराणों में से एक हैं इसमें 24000 श्लोक हैं जिनमें शिव का संगीत के प्रति स्नेह को विस्तृत रूप से वर्णन किया गया है।

वर्तमान में शास्त्रीय नृत्य से संबधित जितनी भी विद्याएँ प्रचलित हैं वह तांडव नृत्य की ही देन है तांडव नृत्य की तीव्र प्रतिक्रिया है वही लास्य सौम्य है लास्य शैली में वर्तमान में भरत नाट्यम कुचिपुडी, ओड़िसी और कत्थक नृत्य रूप में जाने जाते हैं यह सभी लास्य शैली से प्रेरित है जबकि कत्थक नृत्य तांडव से प्रेरित हुआ है।

शंकर जी द्वारा पिनाक का अविष्कार किया जिसे वाद्ययों का पिता कहा जाता है कि जब महादेव जी ने त्रिपुर राक्षस का संहार किया तो वे प्रसन्नता से नृत्य करने लगे उनके नाच की संगति के लिए ब्रह्माजी ने उनके पुत्र गणेशजी को डमरू नामक ताल वाद्य बनाकर दिया, इतना ही नहीं विशेष सूचक चिन्ह शिव की शत्तिफ को प्रद्र्शित करते हैं शिव स्वरूप में समाहित हर वो चिह्न शिव शक्ति का द्योतक है जिससे शिव शक्ति का व्याख्यान सुलभता से किया जा सकता है। संगीत में शिव शक्ति के महत्त्व को समझने के लिए शिव विशेष त्रिशूल जिसका वर्णन मूर्ति रूप, चित्रों द्वारा देखने को मिलता है। शिव शक्ति के आगे कोई भी शक्ति ठहर नहीं सकती त्रिशूल 3 प्रकार के कष्टों दैनिक, दैविक, भौतिक के विनाश का सूचक भी है इसमें 3 तरह की शक्तियाँ है सत, रज, तम, (प्रोटॉन, न्यूट्रॉन और इलेक्ट्रॉन)।

त्रिशूल के तीन शूल सृष्टि के क्रमशः उदय संरक्षण और लयीभूत होने का प्रतिनिधित्व करते भी है, शैव मतानुसार शिव इन तीनों भूमिकाओं के अधिपति हैं। यह शैव सिद्धान्त के पशुपति, पशु एवं पाश का प्रतिनिधित्व करता है। माना जाता है कि यह महाकालेश्वर के 3 कालों (वर्तमान, भूत, भविय) का प्रतीक भी है। इसके अलावा यह स्वपिंड, ब्रह्मांड और शक्ति का परम पद से एकत्व स्थापित होने का प्रतीक है अर्थात् बाम अंग में स्थिर इड़ा दक्षिण, सुषमा नाड़ियों का प्रतीक है।

विभिन्न देवी देवताओं के साथ कोई न कोई वाद्य यंत्र अवश्य दिखाई देता है, जो संगीत पद्धति सृष्टि में संगीत की महत्वता का व्याख्यान करते हैं। इसी कड़ी के रूप में भगवान शिव के पास सदा डमरू रहता था जो नाद का प्रतीक है इसीलिए भगवान शिव को संगीत का जनक माना गया। उनसे पूर्व कोई साक्ष्य नहीं प्राप्त होते जिन्हें गाना, बजाना, नाचना आता हो, भगवान जब डमरू के साथ नृत्य करते प्रकृति आनन्दित हो उठती थी।

नाद की उत्पत्ति की वात करें तो नाद अर्थात् ऐसी ध्वनि जो ब्रह्मांड में निरन्तर जारी है जिसे ऊँ कहा जाता है संगीत में अन्य स्वर तो आते ही हैं पर नाद सम्पूर्ण समाज में गुंजायमान है। नाद से वाणी के चार रूपों की उत्पत्ति मानी जाती है।

1. पर
2. पश्यंती
3. मध्यमा
4. बैरवरी

आहत नाद विषय नहीं अर्थात् अनाहत नाद का विषय है बिना किसी के आघात किये उत्पन्न चिंदानंद, अखंड, अगम और अलख रूप सूक्ष्म ध्वनियों का प्रस्फुटन अनाहत या अनहद नाद है इस अनाहत नाद का दिव्य संगीत सुनने सं गुप्त मानसिक शक्तियाँ प्रकट हो उठती हैं नाद पर ध्वनि की एकाग्रता से शयने शयने समाधि अवस्था आने लगत है, डमरू इसी नाद साधना का प्रतीक चिह्न रूप है, जो शिव शक्ति का विशेष उदाहरण है, शिव शक्ति का द्वितीय उदाहरण शिव का वाहन वृषभः शिव का वाहन जो अधिकांशतः उनके समीप उस शक्ति को दर्शाता है, उनके सम्पूर्ण महत्व के कारण

वे शिव के करीब रहकर सृष्टि को अपनी उपस्थिति की अनिवार्यता को स्पष्ट करते हैं।

वृषो हि हि भगवान धर्मः

वेद ने धर्म को चार पैरों वाला प्राणी कहा है उसके चार पैर धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष है महादेव इस 4 पैर वाले वृषभ की सवारी करते हैं अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष उनके अधीन हैं। वृषभ को नदी भी नाम से जाना जाता है अतः यह शिव के गण के रूप में विख्यात है। शिव की शक्ति नंदी ने ही धर्म शास्त्र, अर्थशास्त्र कामशास्त्र और मोक्षशास्त्र की रचना की इसलिए शिव की शक्ति के रूप में उनके समीप रहकर उनकी शक्ति के रूप में शोभायमा है। इतना ही नहीं शिव शक्ति को बहुल्यः रहस्य है जो उनके हर उस अंश में विद्यमान हैं जिसे हम शिव का प्रतीक चिह्न रूप से पहचानते हैं, जटायें, व्योमकेश शिव को पुकारा जाता है आकाश जटास्वरूप है उनका व जटाए वायुमण्डल का प्रतीक है वायु आकाश में व्याप्त रहती है। सूर्यमंडल से उफपर परमेष्ठित मंडल है, अतः अर्थ तत्व को गंगा की संज्ञा दी गई, गंगा शिव की जटा में प्रवाहित होती है शिव के स्वरूप को उग्र और संहारक रूप धारक भी माना गया है, गंगा जो शिव के जटाओं से अविरल कल कल बहती है जो खुद से एक अपना कलरब करते हुए एक ध्वनि को प्रदर्शित करती है गंगा जैसी अपार शत्तिफ को समेटना और नियंत्रित करना शिव शक्ति को महिमा को उजागर करता है उपक्रम हुआ तो यह शंका उठी कि गंगा अगर इस अपार तीव्रता अपार वेग से बहेगी तो धरती में विशालकाय छिद्र हो सकता है और गंगा पाताल में समा सकती है इस समस्या के समाधान हेतु शिव ने गंगा को अपनी जटाओं में स्थान दिया और पिफर उसे धरती पर अवतरित किया, गंगोत्री इसी का उदाहरण है। गंगा तक ही सीमित नहीं बल्कि शिव स्वरूप में स्थित हर वो चीज जो शिव के समीप है, जिसे हम अक्सर उनके स्वरूप में देखते है वो हर चीज शिव शक्ति का बखान करती है शिव की भस्म जो शिव के शृंगार सामग्री के रूप में जानी जाती है जिसको शिव ने इसलिए आत्मसात किया ताकि वह उद्देश्यात्मक रूप में हमें सिखा सकें कि भस्म जगत की निस्सारता को बोध कराती है, भस्म आकर्षण मोह आदि से मुक्ति का प्रतीक है, प्रलयकाल में सब कुछ नष्ट हो जायेगा केवल भस्म ही अस्तित्व रूप में उपस्थित रह जायेगी इसके अलावा वो अनेक प्रतीक चिह्न शिव महिमा को उजागर करते हैं जिसमें शिव के तीन नेत्रा, पीनिअलग्लैंड हास्ति चर्म, व्याघ्र चर्म, शिव धनुष (पिनाक) शिव चक्र, तिलक, कुण्डल, रूद्राक्ष आदि सृष्टि निर्माण में सहायक होने का साक्ष्य हैं उसी प्रकार सृष्टि के हर कण में शिव शक्ति विद्यमान है। सूक्ष्म रूप से अवलोकन करने के लिए हम संगीत में शिव शक्ति को अहम इसलिए मानते हैं। कि यही शिव शक्ति जिसे हम संगीत रूप में समझते हैं सृष्टि निर्माण में और संरक्षण में इसका महत्वपूर्ण स्थान रहा है, प्रागैतिहासिक काल से ही संगीत की समृद्धि परम्परा रही है। संगीत का प्रारम्भ हमें सिन्धु घाटी की सभ्यता के काल में मूर्तियाँ साख्य स्वरूप में प्राप्त हुई, उसके वाद वैदिक काल में संगीत की अवस्था को दर्शाया श्लोक व भजन मंत्रों के उच्चारण से ईश्वर आराधना अन्य रूप में भारतीय महाकाव्य-रामायण, महाभारत में संगीत का प्रभाव रहा, सांस्कृतिक काल से आधुनिक काल तक संगीत रूप परिवर्तित करता गया परन्तु संगीत में जो शक्ति निहित है वह शिव शक्ति ही है इसलिए शिव ही संगीत के जनक माने गये, इसलिए भारतीय संगीत में यह माना गया है कि संगीत के आदि प्रेरक शिव और सरस्वती है इसका तात्पर्य कि मानव इतनी उच्चकला को बिना किसी दैवीय प्रेरणा के केवल अपने बल पर विकसित नहीं कर सकता, शिवशक्ति ही हमारे लिए सुलभ सामग्री थी जिसने संगीत की अविरल धारा को जीवन में प्रवाहित किया और समय चक्र ने संगीत को परिवर्तित रूप प्रदान कर उसे संगीत शास्त्र रूप में संरक्षित किया।

संगीत में शिवशक्ति : लोकगीत के संदर्भ में

डॉ. नीरला दास

संगीत प्रकृति के हर कण में मौजूद है। भगवान शिव को संगीत का जनक माना जाता है। शिव महापुराण के अनुसार शिव के पहले संगीत के बारे में किसी को भी जानकारी नहीं थी। नृत्य वाद्ययंत्रों को बजाना और गाना उस समय कोई नहीं जानता था क्योंकि शिव ही इस ब्रह्मांड में सर्वप्रथम आए हैं। पुराणों के अनुसार सृष्टि के आरंभ में ब्रह्मनाद से जब शिव प्रकट हुए तो उनके साथ सत, रज और तमयेती नोंगुण भी जन्मे थे। य ही तीनों गुण शिव के तीन शूल यानी त्रिशूल' कहलाए। भगवान भोलेनाथ दो तरह से तांडव नृत्य करते हैं। पहला जब वो गुस्सा होते हैं तब बिना डमरू के तांडव नृत्य करते हैं। लेकिन दूसरे तांडव नृत्य करते समय जब वह डमरू भी बजाते हैं तो प्रति में आनंद की बारिश होती थी। ऐसे समय में शिव परम आनंद से पूर्ण रहते हैं। लेकिन जब वो शांत समाधि में होते हैं तो नाद करते हैं। नाद और भगवान शिव का अटूट संबंध है। दरअसल नाद एक ऐसी ध्वनि है जिसे 'ऊं' कहा जाता है। पौराणिक मत है कि ऊं से ही भगवान शिव का जन्म हुआ है। संगीत के सात स्वर तो आते-जाते रहते हैं लेकिन उनके केंद्रीय स्वर नाद में ही हैं। नाद से ही ध्वनि और ध्वनि से ही वाणी की उत्पत्ति हुई है। शिव का डमरू नाद-साधना का प्रतीक माना गया है भरत मुनि ने नाट्यशास्त्र का पहला अध्याय लिखने के बाद अपने शिष्यों को तांडव का प्रशिक्षण दिया था। उनके शिष्यों में गंधर्व और अप्सराएं थीं। नाट्यवेद के आधार पर प्रस्तुतियां भगवान शिव के समक्ष प्रस्तुत को जाती थीं।

भरतमुनि के दिए ज्ञान और प्रशिक्षण के कारण उनके नर्तक तांडव भेद अच्छी तरह जानते थे और उसी तरीके से अपनी नृत्य शैली परिवर्तित कर लेते थे। पार्वती ने यही नृत्य बाणासुर की पुत्री को सिखाया था। धीरे-धीरे ये नृत्ययुगों- युगान्तरों से वर्तमानकाल में भी जीवंत है। शिव का यह तांडव नठराज रूप का प्रतीक है। नटराज भगवान शिव का ही रूप है जब शिव तांडव करते हैं तो उनका यह रूप नटराज कहलता है। नटराज शब्द दो शब्दों के मेल से बना है। नट और राजनट का अर्थ है कला और राज का अर्थ है राजा भगवान शंकर का नटराज रूप इस बात का सूचक है कि अज्ञानता को सिर्फ ज्ञान संगीत और नृत्य से ही दूर किया जा सकता है।

नाट्यशास्त्र में उल्लेखित संगीत नृत्ययोग व्याकरण व्याख्यान आदि के प्रवर्तक शिव ही हैं। शिव महापुराण भी 29 उप-पुराणों में से एक है। इसमें 24,000 श्लोक हैं। जिनमें शिव का संगीत के प्रति स्नेह के बारे में विस्तार से वर्णन किया गया है। वर्तमान में शास्त्रीय नृत्य से संबंधित जिनती भी विद्याएं प्रचलित हैं। वह तांडव नृत्य की ही देन हैं। तांडव नृत्य की तीव्र प्रतिक्रिया है। वही लास्य सौम्य है। लास्य शैली में वर्तमान में भरतनाट्यम कुचिपुडी ओडिसी और कत्थक नृत्य किए जाते हैं यह लास्य शैली से प्रेरित हैं। जबकि कथकली तांडव नृत्य से प्रेरित है।

मानवीय भाषा में शिव का यह जो करना व होना है उनकी जो अभिव्यक्ति है– वही शक्ति है। उसी अविभाजित पृष्ठ भूमि में बदलाव की प्रतीतिशक्ति है। यूं कहें कि शिव और शक्ति कोई दो अलग सत्ताएं नहीं हैं। जब शिव अभिव्यक्त होता है तो शक्ति हो जाता है और जब शक्ति अभिव्यक्ति समेट ले तो शिव हो जाती है। नटराज रूप में हमें शिव और शक्ति एक साथ मिल जाते हैं। नटराज में नृत्य का जो रूपक है वह नाद से भी जुड़ा है। बिना संगीत के नृत्य भला कहां संभव है नट और नाट्य दोनों शब्द एक ही धातु से बने हैं और भरतमुनि के अनुसार नाट्य में संगीत तो अनिवार्य ही है। शिव और शक्ति के एकीकरण को हृदय में धारण करने के लिए चैतन्य के नाद से स्वयं को जोड़ना होगा। यह नाद क्या है यह कोई ध्वनि मात्र नहीं बल्कि चराचर में चेतना की गूंज है। यह नाद है प्रेम का जो हमें अविभाजित चैतन्य में ले जाता है- जहां कोई दूसरा नहीं होता जहां कोई भेद नहीं होता जहां सिर्फ अपनत्व होता है। उस हृदय में नाद स्वयं बज उठता है नटराज का नृत्य थिरक उठता है और शिव-शक्ति का संगम हो जाता है। भगवान शिव को अक्सर दिखाया गया है अपने हाथों में एक प्रारंभिक प्रकार की वीना पकड़े हुए। जो कि रेतघड़ी के आकार वाले डमरू की तरह होता था। यह रुद्रवीणा उनके दैवीय गुणों में से एक माना जाता था।

उपर्युक्त चित्र में दिखाए गए वाद्ययन्त्र बजाने की मुद्रा महाबलीपुरम में चट्टान नक्काशी पर दिखाई देती जिस में रूद्र वीणा बजाने वाले शिव को दिखाया गया है। एक बेहद गुंजयमान यंत्र (अजंता में एक चट्टाननक्काशी) बाएं हाथ की हथेली से सीने के साथ लगा कर बजाया जाता है। इस वाद्ययंत्र जिसे अल्पानी भी कहा जाता है के आकार एवं बनाने की तकनीकी तथा इसे बजाने की अलग अलग विधि के बारे में कई मध्ययुगीन-भारतीय संगीत संबंधी ग्रंथों में चर्चा की जाती है। पहली सदी के अंत तक आते आते एक तार वाले वीणा बहुत ही प्रचलित थे। इस दौरान भारत की यात्रा करने वाले अलग अलग अरब साहित्यकारों ने इसके बारे में काफी कुछ लिखा और कहा है। वैदिक साहित्य इस बात पर एक मत है की ओम ईश्वर का मुख्य नाम है। योग दर्शन में यह स्पष्ट है कि ओम शब्द 3 अक्षरों से मिलकर बना है। प्रत्येक अक्षर ईश्वर के अलग-अलग नामों को अपने में समेटे हुए हैं, जैसेअ से व्यापक सर्वदेशीय और उपासना करने योग्य है उसे बुद्धिमान सभी अच्छाइयों का मूल और नियम करने वाला है। म से अनंत, अमर, ज्ञानवान और पालन करने वाला है। यह तो बहुत थोड़े से उदाहरण है जो ओम के प्रत्येक अक्षर से समझे जा सकते हैं वास्तव में अनंत ईश्वर के अनगिनत नाम केवल इस ओम शब्द में ही आ सकते हैं और किसी में नहीं। सत्यम शिवम सुंदरम शब्द जीवन का मूल है। तीन अक्षर भगवान शिव को प्रिय हैं। शिव हमारे चारों ओर हैं। आज हम जो भी आचरण कर्म व्यवहार करते हैं इन सभी का मूल शिव है। शिव एक है उसका रंग रूप और आकार नहीं होता। उनका का एक ही महामंत्र है ओम। यह ओम ही सर्वव्यापक है। ऋग्वेद का प्रसिद्ध और सिद्ध मंत्र ओम ही है। जीवन की बहुत गहन अध्ययन से ही हम उस ध्वनि पर पहुंचे हैं। ओम ही सृष्टि का सृजन के मूल है। इसमें शक्ति सामर्थ एवं प्राण देखा गया है कि ईश्वर के नामों में सर्वोपरि मान्यता इसी अक्षर का है जो सर्वोपरि भी है और शुभ एवं मंगल भी है। ओम मंत्र का यदि नियमित रूप से जाप किया जाए तो इसका मन और शरीर पर निश्चित रूप से आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ता है। उपनिषद में भी स्पष्ट रूप से कहा गया है ओम ही समागायक गान प्रारंभ करते हैं। ओम का प्रथम उच्चारण करके ही वेद पाठ याद गान प्रारंभ किया जाता है। ऋषि सबका आदि मध्य और अंत है। ओम ही तो ब्रह्म और परमब्रह्म है। अक्षतानाद ब्रह्म ओम का सर्वप्रथम ज्ञान ब्रह्मा जी को मिला। यह भी कहा जाता है कि ब्रह्माजी को ब्रह्म की अनुभूति ओम रूप में संगीत क स्वर के रूप में हुई। वेदज्ञान

प्राप्त करते समय सर्वप्रथम ओंकार की ध्वनि सुनाई पड़ी।

नचारी

1. शिव हेरब तोर बटिया कतेक दिनमा
शिव हेरब तोर बटिया कतेक दिनमा
मृत्तिका के कोड़ि-कोड़ि बनायल महादेव,
सुख के कारण शिव पूजत महेश, कतेक दिनमा
तोड़ल मे बेलपत्र, सेहो सूखि गेल
जिनका लेल तोड़ल, सेहो रूसि गेल, कतेक दिनमा
काशी में ताकल, ताकल प्रयाग
ओतहि सुनल शिव गेला कैलाश, कतेक दिनमा
सबहक बेर शिव लिखि पढ़ि देल
हमरहि बेर कलम टुटि गेल हे, कतेक दिनमा
भनहि विद्यापति सुनू हे महेश
दरिद्रहरण करू मेटत कलेश, कतेक दिनमा
शिव हेरब तोर बटिया, कतेक दिनमा
2. हे भोला हमर अनमोला, हमर दुखहारी
आब दर्शन दियऽ त्रिपुरारी
नाथ, नैया पड़ल मझधार यो
नाथ, क्यो नि उतारै पार
अय गौरी के बर त्रिशुलधारी
आब दर्शन दिअ त्रिपुरारी
नाथ, दुख नहि सहल जाइ आब यो
हर, राखू शरण सरकार यो
अय अशरण ढरण, दीन-दुखीक हरण सुखकारी
आब दर्शन दियऽ त्रिपुरारी
3. तीन नयन सँ सुतला महादेव
सभ धन लए गेल चोर
आ हे मा, पर हे परोसिन
शिव जी के दियनु जगाइ गे मा
धन मे धन मल, बसहा बरद छल
आर छल भांगक झोरी, गे मा
खोजि-जोहि लायब बसहा बरद हम
कहाँ सँ लायब भंगझोरी, गे माई
भनहि विद्यापति गाओल
इहो थिका त्रिभुवन नाथ गे माई
कहू-कहू आहे सखि शम्भु उदेश
कतहु ने भेटला हमरो महेश
देखलहुँ शिवके घुमैत मशान
डिमडिम डमरू बसहा असवार
कहू-कहू आहे सखि शम्भु उदेश
देखलहुँ हर के घुमैत कैलाश
गले बीच विषधर, त्रिशूल भाल
कहू-कहू आहे सखि शम्भु उदेश
कार्छतक गणपति छथिन अज्ञान,
कोना हम छोड़ि शिव के खोजब मशान,
कहू-कहू आहे सखि शम्भु उदेश
4. शिव हो उतरब पार कओने विधि ना
भरल-पूरल अछि नहि परिवार
सपनहु सुख नहि, चिन्ता सवार
नहि हमरा रूप अछि, ने धनक शृंगार
तन अति खिन अछि, फूटल कपार
नहि हम मण्डन, नहि कालिदास
नहि हम विद्यापति, उगना खबास
जौं दरशन नहि पायब तोहार
जन्म बितायब तोरहि दुआर
5. पूजा के हेतु शंकर आयल छी हम पुजारी
जानी ने मंत्र-जप-तप, पूजा के विधि नेजानी
तइयो हमर मनोरथ, पूरा करू हेदानी
चुप भए किए बइसल जी, खोलूने कने के बारी
बाबा अहाँ के महिमा, बच्चे सँहम जन इछी
दर्शन दिअऽ दिगम्बर, दर्शन के रहम भिखारी
हे नाथ हम अनाथे, वर दय करू सनाथे
मिनती करू नमेश्वर, कर जोड़ि दुनू हाथे
डामरु कने बजाउ, गाबइछी हमन चारी
6. हे हर विपति पड़ल सिर भारी
अन्न-बसन बिनुतन-मन बे कल, पुरजन भेल दुखारी हे
अपन कि आन कानन हिसू नय, गूनय जानि भिखारी हे
मंगने कहय हाथ अछि खाली, रहितो द्वार बखारी हे

गंग नियर बसु गायब हमहँसि बन बजे तोर पुजारी हे

अछैत मनोरथ सभ भेल बेरथ, बनलहुँ अन्त भिखारी हे

लिखल-पढ़ल कत बात गढ़ लकत, किछुओने भेल हितकारी हे

शशिनाथ माथ पद टेकल, आबहुल एह उबारी हे

7. सभहक दुख अहाँ हरै छी भोला, हमरा किए बिसरै छीयो

हमहूँ सेवक अही के भोला, कोनो विधि निमहै छीयो

कपारो फूटल, बेमायो फाटल, किन्तु हम चलै छीयो

द्वारे ठाढ़ अहां के हमहूँ, पापी जानि टारै छीयो

सेवक अहाँ कपुका रिरहल अछिद्र झाड़खण्ड बैसल छीयो

आबो पाकरू प्रभु हमरा पर, दुखिया देखि भुलै छीयो

त्रिभुवननाथ दिगम्बर भोला, सभटा अहाँ जनै छीयो

8. अओ शिव शंकर त्रिपुरारी

कओन विधि निमहब हो बाबा, बिपति पड़ल सिर भारी

धरहि प्रतिज्ञा के लौं बाबा, कामरु लेल उठाई

जँए हिबेर भोला पारल गाएब, आयब फेरू अगारी

भक्त अहाँ कपुका रिरहल अछि, राख बलाज विचारी

बनि सेवक हम द्वार ठाढ़ छी, बनल हीन दुखियारी

मनक आस पूरल नहिदानी, कयल कतबो सेवकाई

जाबत धैर्य धरब अपने पर, ताबत ठाढ़ दुआरी

अओ शिव शंकर त्रिपुरारी

9. भोला ने नेचलू हमरो अपन नगरी

अपन नगरीयो कैलासपुरी

पारबती के हम टहल बजायब

नित उठि नीर भरब गगरी

बेल कपतिया फूल चढ़ायब

नित उठि भांग पिस बरगड़ी

भन ही विद्यापति सुनूहेम नाइनि

इहो थिका दानीक माथक पगड़ी

महेशवाणी

10. डर लगैए हे डेराओन लगैए

गौरी हम नहि जायब तोरा अंगना,

भयाओन लगैए

हे अजगर के खम्हा पर धामिन के बरेड़िया

गहुमन के कोरो फुफकार मारइए, गौरी हम...

कड़ैत के बत्ती पर सांखड़ के बन्हनमा

बिढ़नी के खोता घनघन करइए, गौरी हम...

सुगबा के पाढ़ि पर ढ़ोरबा के ढोलनमा

पनिया के जीभ हनहन करइए, गौरी हम...

ताहि घरमे बइसल छथि अपने महादेव

बिछुआ के कुण्डल सनसन करइए, गौरी हम...

11. देखिते भोला के सुरतिया, सखिया पागल भेलै ना

अंग विभूति गले सर्पमाला, पहिरन हिनकर बाघक छाला

बसहा के कएल पलकिया,

से सखिया पागल भेलै ना

हाथ त्रिशूल डामरु बजाबे, जटामे गंगा विराजे

रूद्रमाल हृदय बिच लटके, भूत-पिशाच बरिअतिया

से सखिया पागल भेलै ना

हाला-डालामे भांग-धथूरा, रहनि ने एको मिठाइ

पौती-पिटारी नाग भरल अछि, मारे ढोंढ़ फुंफकारी

से सखिया पागल भेलइ ना

12. गेमाई हमन हिशि वसँगौरी बिआहब, मोर गौरी रहती कुमारी

गेमाई भूत-प्रेत बरिआती अनलनि, मोर जिया गेल डेराइ

गे माइ गालो चोकटल, मोछो पाकल, पयरो मे फाटल बेमाइ

गे माइ गौरी लए भागब, गौरी लए जायब, गौरी लए पड़ायब नइहर

गे माइ भनहि विद्या पति सुनू हे मनाइनि, इहो थिका त्रिभुवन नाथ

शुभ-शुभ कए गौरी के बियाहू, तारू हो उस नाथ गे माइ

13. देखल ने एहन जमाइ गे माइ

भन-भन भृंग भनकय, सखि हे सह-सह करनि साँप

आगू-पाछू भूत भभूत लए कर, देखि जिय थर-थर काँप

गे माइ बाघक छालक पहिरन देखल, लटपट बसहा असबार

एक हाथ डिमडिम डामरू बजाबय, एक हाथ मनुष कपार

गे माइ जटाजूट सिर छाउर लगाओल, गर बीच शोभे रूद्रमाल

देखितहि रूप इहो मैना पड़यली, सखि सब भेली बेहाल

गे माइ हरलक मति पुनि मैनाक योगिया, दूरि कएल हुनक गेयान

रामचन्द्र हर ईश सगुन रूप, जेहि कर वेद बखान

भारतीय संगीत और शिव शक्ति

डॉ. प्रभा भारद्वाज

असोसिएट प्रोफेसर

संगीत विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

शिव क्या है? मानो तो यह एक बहुत बृहद विषय है अन्यथा जन साधारण के लिए हिन्दु धर्म में त्रिदेव (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) में से एक पूजनीय देव हैं। इन्हें महादेव के नाम से भी जाना जाता है। वास्तव में शिव का आाय रिक्तता या शून्य से भी लिया जाता है। शिव का शाब्दिक अर्थ है जो नहीं है, जिसका अस्तित्व ही नहीं है अर्थात जो निराकार है। कोई कोई विद्वान तो शिव को ही विज्ञान मानते हैं। शिव को दुनिया का सर्वोत्कृष्ट तपस्वी या आत्म संयमी और सजगता की साक्षात मूरत कहा जाता है। इन्हें अजन्मा और अमर अर्थात अजर अमर भी माना जाता है।

साधारण रूप में यदि हम शिव की व्याख्या करें तो वह अधूरी मानी जाएगी क्योंकि शिव और शक्ति दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। यदि सांसारिक भाषा में कहें तो प्रत्येक पुरुष शिव है और प्रत्येक स्त्री शक्ति है। इन दोनों के मिलन से सृष्टि का (गृहस्थी) का निर्माण होता है और सृष्टि सृजन प्रारम्भ होता है।

शिव इस सृष्टि का परम सत्य हैं और उनकी आराध्य त्रिपुरसुन्दरी, माता भुवनेवरी, माँ पार्वती उनकी अर्धांगिनी शक्ति का स्वरूप हैं। शिव 'मृत्युंजय' है तो शक्ति बगला, काली, तारा, भुवनेश्वरी के नाम से जानी जाती हैं। निराकार ब्रह्म जब साकार रूप धारण करते हैं तो 'शिव' कहलाते हैं और माँ गौरी उनकी पत्नी, उनकी 'शक्ति' स्वरूपा हैं। मां भगवती ही शक्ति के नाम से जानी जाती हैं जिनके अनेक नाम हैं और वे सब शक्ति के ही रूप हैं।

शिव-शक्ति कल्याणकारी हैं। इनके बिना सृष्टि की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। 'शिव' को जहाँ संहारक माना गया है वहीं 'शक्ति' को सृजना, रचयिता की संज्ञा दी गई है। यह भी शाश्वत सत्य है कि मातृसत्ता के बिना सृष्टि की कल्पना ही निराधार है। इसलिए संसार में जहाँ माँ है वहीं पूर्णता है। आत्मा परमात्मा में 'म' 'शिव-शक्ति' का बोध करवाते हैं। संपूर्ण सृष्टि कालाधारित है। शिव महाकाल प्रथम और आद्या शक्ति महाकाली के नाम से जानी जाती है।

प्रत्येक जीवात्मा के शरीर के आधार चक्र में 'शक्ति' स्थापित हैं और सिर के ऊपर 'सहस्रार' में 'शिव' विराजमान हैं। किन्तु वे नीचे नहीं उतरते, स्वयं शक्ति ही सारे चक्रों का भेदन कर उनसे जा मिलती हैं। शिव परम तत्व हैं किन्तु उन्हें भी शक्ति प्रदान करने वाली माँ (गौरी, जगदम्बा, काली आदि-आदि) ही हैं। शिव को आदि देव और शक्ति को आद्या भी कहा जाता है।

शिव-पुराण के अनुसार शिव-शक्ति का संयोग ही परमात्मा है। शिव की पराशक्ति से चित्त शक्ति प्रकट होती है और चित्त शक्ति से आनंद का प्रादुर्भाव होता है और यदि जीवन में आनन्द का

प्रादुर्भाव हो गया है तो समस्त जीवन स्वयं ही व्यवस्थित हो जाता है।

'ऊँ' की उत्पत्ति के विषय में कहा गया है कि ज्ञान शक्ति से 'उ' उकार, क्रिया शक्ति से 'अ' अकार और इच्छा शक्ति से 'म' मकार प्रकट हुआ। इस प्रकार ओम की उत्पत्ति हुई।

शिव-शक्ति और संगीत का आपस में बहुत गहरा संबंध है। संगीत प्रकृति के कण-कण में विद्यमान है। हमारी प्रकृति में हर चीज़ लयबद्ध है। संगीत आनन्द का आविर्भाव है और आनन्द शिव का स्वरूप है। संगीत में शिव अर्थात ईश्वर के स्वरूप को मानते हुए संगीत की साधना करते हैं और मोक्ष की कामना करते हैं। शब्द युगीन संदर्भों में अपना अर्थ बदलते रहते हैं। समय-समय पर भिन्न भिन्न विद्वानों ने संगीत को परिभाति किया है। यथा–

"गीतं वाद्यं नृत्यं च त्रयम् संगीत मुच्यते।
नृत्य वाद्यानुगम् प्रोक्तं वाद्यं गीतानुवृत्ति॥"[1]

अर्थात संगीत का अभिप्रायः गान, वाद्य और नृत्य तीनों कलाओं से है। गीत का अनुकरण वाद्य करता है और वाद्य का अनुकरण नृत्य करता है।

नाद (संगीत) और भगवान शिव शक्ति का अटूट संबंध है। एक पौराणिक कथा के अनुसार 'ऊँ' से ही भगवान शिव का जन्म हुआ। 'ऊँ' नादात्मक है और संगीत के सातों स्वरों की उत्पत्ति का आधार भी नाद है। नाद से ध्वनि और ध्वनि से वाणी की उत्पत्ति हुई मानी जाती है। यथा–

"नकार प्राण मानं दकार नलं विदुः।
जात प्राणाग्नि संयोगात्तेन नाद्रोभिधीयते।।"[2]

अर्थात नकार प्राणवाचक (वायुवाचक) है तथा दकार अग्निवाचक है। अतः जो वायु और अग्नि से उत्पन्न होता है उसी को नाद कहते हैं। शिव का डमरू नाद साधना का प्रतीक है।

एक दन्तकथानुसार सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्मनाद से शिव प्रकट हुए तो उनके साथ सत, रज और तम ये तीनों गुण भी जन्मे। यही तीनों गुण शिव के तीन शूल अर्थात त्रिशूल कहलाए। भगवान शिव को संगीत का जनक माना जाता है। ऐसा भी माना गया है कि सृष्टि के आदि पुरुष 'शिव' और आद्या स्त्री 'शक्ति' थीं। शिव महापुराण के अनुसार शिव से पहले संगीत की जानकारी किसी को नहीं थी क्योंकि उनसे पूर्व कोई था ही नहीं।

संगीत की व्युत्पत्ति के विषय में–पौराणिक कथाओं के अनुसार यह विद्या ब्रह्मा द्वारा क्रमशः शिव, सरस्वती व नारद तक आई तथा नारद से इसकी शिक्षा क्रमशः यक्ष, किन्नर, गन्धर्व और अप्सरा आदि को दी जिनसे भरतादि ऋषियों ने संगीत की शिक्षा प्राप्त की।[3] संगीत की उत्पत्ति के अनेक मत हैं। हम उन समस्त मतों की चर्चा न करते हुए अपने मूल विषय पर आते हैं। हमारा विषय शिव शक्ति और संगीत को ध्यान में रखते हुए वर्णन करते हैं। क्योंकि भारत एक आध्यात्मिक देश है और हम ईश्वरीय सत्ता में विश्वास रखते हैं और अपना प्रत्येक कार्य ईश्वर में आस्था रखते हुए आरम्भ कर सम्पन्न करने का प्रयास भी करते हैं। ईश्वर के प्रति दृढ़ विश्वास के अधीन होकर हम यही मानते हैं कि धरती पर संगीत 'शिव' द्वारा ही आया।

भरत ने नाट्यशास्त्र का प्रथम अध्याय लिखने के बाद सर्वप्रथम अपने शिष्यों को ताण्डव का प्रक्षिण दिया था। उनके शिष्यों में गन्धर्व और अप्सराएँ भी थी। नाट्यवेद के आधार पर प्रस्तुतियाँ भगवान शिव के समक्ष ही प्रस्तुत की जाती थी। भरत मुनि के दिए ज्ञान और प्रशिक्षण के कारण ताण्डव भेद भली भांति जानते थे और उसी तरीके से नृत्य शैली परिवर्तित कर लेते थे। शिव का यह ताण्डव नटराज के रूप में विख्यात है। 'नट' का अर्थ 'कला' और 'राज' का अर्थ राजा से है। भगवान शिव का 'नटराज' रूप इसी बात का सूचक है कि अज्ञानता को सिर्फ ज्ञान, संगीत और नृत्य से ही दूर किया जा सकता है। नाट्यशास्त्र में उल्लेखित संगीत, नृत्य, योग व्याकरण, व्याख्यान

आदि के प्रवर्तक शिव ही हैं। शिव महापुराण में 24000 श्लोक हैं जिनमें शिव का संगीत के प्रति स्नेह का विस्त त वर्णन मिलता है।[4]

आदि देव महाशिव का ताण्डव एक लयबद्ध कथा नृत्यरूप में निबद्ध की गई है। ताण्डव नृत्य की दो भंगिमाएं हैं—रौद्र और आनंद। विविध रूपों में 'ताण्डव' नृत्य वास्तव में एक कलात्मक सृजन का रूपक है जिसमें एन्द्रिक आनन्द, संहार और सृजन के दर्शन तत्व हैं। शिव द्वारा ताण्डव दो ही स्थितियों में किया गया। जब सृष्टि को समाप्त करना और नवनिर्माण करना जिसे रौद्र भंगिमा कहा गया और दूसरा आनंद अवस्था में जब शिव प्रसन्न हुए। 'ताण्डव' और 'लास्य' ये दोनों 'शिव' और 'शक्ति' द्वारा किए गए नृत्य हैं। इनके भी वही दो रूप हैं आनन्दावस्था में—'शिव' ताण्डव करते हैं और 'शक्ति' 'लास्य' करती हैं। शिव जब रौद्र रूप में नृत्य करते हैं वह संहार अवस्था होती है। तब शिव को शान्त करने के लिए 'शक्ति' 'लास्य' नृत्य करती हैं तब सृष्टि का नव सृजन होता है। यह देवी पार्वती (शक्ति) द्वारा ही प्रारम्भ हुआ। इस नृत्य की मुद्राएं बहुत ही कोमल, स्वाभाविक और प्रेमपूर्ण होती हैं। वर्तमान में ताण्डव और लास्य शास्त्रीय नृत्य की दो शैलियां है। यह भी विश्वास किया जाता है कि ताण्डव की व्युत्पत्ति ताण्डव के 'ता' और लास्य के 'ल' से मिलकर हुई। प्राचीन कथाओं के अनुसार देवी और देवता प्रायः गीत-संगीत का आयोजन किया करते थे। यूं तो शिव को नृत्य सम्राट कहा जाता है किन्तु लास्य नृत्य का ज्ञान उन्होंने हिमाचल की कन्या पार्वती से प्राप्त किया। जहां शिव का 'ताण्डव' संपूर्ण ब्रह्माण्ड के विनाश का प्रतीक है वहीं 'लास्य' मोह, प्रेम, स्नेह, सौन्दर्य और सृजन का प्रतीक है। आधुनिक शास्त्रीय नृत्य या तो ताण्डव से प्रेरित हैं या लास्य से। ताण्डव में नृत्य की तीव्र प्रतिक्रिया है वहीं 'लास्य' सौम्य और मंथर है। 'ताण्डव' की तरह ही 'लास्य' के भी दो प्रकार हैं—जरिता लास्य व वायू का लास्य।[5]

ऐसा माना जाता है कि आधुनिक शास्त्रीय नृत्य 'ताण्डव' और 'लास्य' की ही देन है किन्तु इसके कोई विशेष प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं। वर्तमान में कत्थक, ओड़िसी, भरतनाट्यम और कुच्चिपूड़ी आदि लास्य शैली से प्रेरित माने जाते हैं। केवल कथकली ताण्डव से मिलता जुलता है।

सारांश स्वरूप में शिव और शक्ति का भारतीय संगीत से, भारतीय आध्यात्म से अटूट संबंध है। शिव हमारे आदि देव संगीत के प्रणेता हैं जिसे हम अनदेखा नहीं कर सकते।

संदर्भ ग्रंथ

1. पं. शारंगदेव—संगीत रत्नाकर (स्वरगत अध्याय) पृ.-13
2. पं. शारंगदेव—संगीत रत्नाकर (स्वरगत अध याय) पृ.-64
3. डॉ. प्रभा भारद्वाज—संगीत का सांस्कृतिक व सामाजिक पक्ष, पृष्ठ-19
4. दैनिक जागरण से साभार
4. पूजा प्रजापति—शिव और ताण्डव www.abhivyakti.hindi.org) 24 फरवरी का आलेख

संगीत में शिव शक्ति

डॉ. रश्मि

सत् सृष्टि ताण्डव रचयिता
नटराज राज नमो नमः

शिव! महादेव, जो देवों के देव हैं, उनकी चर्चा शक्ति के बिना अधुरी है और वह शक्ति है माँ पार्वती। 'शिव-पुराण' में भी चर्चा की गई है कि शिव-शक्ति का संयोग ही परमात्मा है। माँ भगवती भगवान शिव की आदि शक्ति है। उन्होंने एक ओर विनय और प्रेम से पति के आधे अंग मे स्थान प्राप्त किया और उन्हें अर्द्धनारीश्वर बनाया। वहीं स्वामी को अपनी विराट शक्ति देकर मृत्युंजय के रूप में प्रतिष्ठित किया। अपने दोनों पुत्रों को भी इन्होंने सेनानी एवं गणाध्यक्ष बनाया तथा स्वयं भी लोक कल्याण के लिए शस्त्र धारण कर चंड-मुंड विनाशिनी, चामुंडा बनीं। शिव की जो पराशक्ति है उससे चित् शक्ति प्रकट होती है, इसी चित् शक्ति से आनंद शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ और तब इच्छा शक्ति, ज्ञान शक्ति और इन्हीं से निवृत्ति आदि कलाएँ उत्पन्न हुई। अर्थात् इन्हीं दोनों के हम संतान है, पुरुष भगवान सदाशिव के अंश हैं एवं स्त्रियाँ भगवती शिवा की अंगभूता हैं। शक्ति के बिना शिव 'शव' हैं। शिव और शक्ति एक दूसरे के वैसे ही अभिन्न हैं, जिस प्रकार सूर्य और प्रकाश, आग्नि और ताप। शिव में 'इ' कार ही शक्ति है। शास्त्रों के अनुसार बिना शक्ति की सहायता के शिव का साक्षात्कार नहीं होता। अतः आदिकाल से ही शिव-शक्ति की संयुक्त उपासना होती रही है। शिव के हर कार्य में माँ पार्वती सहभागिनी रही हैं और उनके ही सहयोग से शिव ने संगीत को भी जन्म दिया। कहा जाता है कि शंकर भगवान ने पार्वती की शयन मुद्रा को देखकर उनके अंग-प्रत्यंगों के आधार पर रूद्र वीणा बनाई और पंचमुख से पाँच राग बनाये बाद में छठा राग माँ पार्वती के मुख से उत्पन्न हुआ जिन्हें क्रमशः भैरव, हिंडोल, मेघ, दीपक, श्री एवं कौशिक के नाम से जाना जाता गया। इसकी विस्तृत चर्चा 'शिव-प्रदोष' स्त्रोत में लिखा प्राप्त हुआ है। पृथ्वी पर ये राग नारद द्वारा गाए गये और बाद में अनेकों विद्वानों ने संगीत एवं नृत्य कला की विवेचना अपने-अपने ढंग से की। इसी क्रम में नाद को संगीत का मुख्य आधार माना गया। नाद अर्थात् सांगितिक ध्वनि, जो शिव-शंकर के डमरू से ही निकला है। इसे दो भागों में बाँटा गया—आहत एवं अनाहत नाद। नाद संगीत शास्त्र का विशेष महत्वपूर्ण अध्याय है जिसका अटूट संबंध भगवान शिव से है, क्योंकि नाद अर्थात् ध्वनि को ही 'ऊँ' कहा जाता है। संगीत के सात स्वर 'नाद' में ही है। नाद से ही ध्वनि और ध्वनि से ही वाणी की उत्पत्ति हुई है। नाद की उत्पत्ति करने वाला शिव का डमरू, नाद साधना का प्रतीक माना गया है जिसे हम संगीत का मूल आधार भी कह सकते हैं और यह मूल ध्वनि चूँकि भगवान के डमरू से उत्पन्न हुई है, तो यह स्पष्ट है कि संगीत के जन्मदाता भगवान शिव ही हैं। हम सदियों से

यही जानते हैं कि शिव सर्वशक्तिमान एवं पूरी सृष्टि के रचयिता हैं। शिव अनादिकाल नित्य, निर्विकार, अज, सर्वोपरि तथा सनातन देव हैं। देवों के देव शिव की तुलना और किसी से भी नहीं की जा सकती। ब्रह्मा भी इनके आगे शीश नवाते हैं। इस चराचर जगत के रचयिता भी शिव हैं एवं संहारकर्त्ता भी। अतः यही सत्य है कि शिव ही सत्य है, शिव ही सुंदर है, पूरा जगत् शिव पर आश्रित है।

एको ही रूद्रा न द्वितीयाय।
तर्स्युय इमतलोकानीगत ईश निधिः ॥

अर्थात् एक ही है जो पूरी कायनात को अपने अधिकार में रखते हैं।

अतः संगीत के आदि-प्रेरक शिव के डमरू से ही संगीत नाद की उत्पत्ति हुई। 'शिव ब्रह्म पुराण' के अनुसार शिव के पहले संगीत था ही नहीं। नृत्य-वाद्य यंत्र इत्यादि को गाना एवं बजाना दोनों ही डमरू की ही देन है और यह भी अकाट्य सत्य है कि जब सर्वप्रथम शिव ही ब्रह्मांड में आए और इन्होंने ही माँ सरस्वती के द्वारा इस विद्या को पृथ्वी लोक पर भेजा। माँ सरस्वती विद्या की देवी हैं, इनके हाथों में वीणा और पुस्तक है जो कि स्पष्ट करता है कि माँ ही अपने बच्चों में इस विद्या रूपी भंडार का संचार करवाती हैं।

प्रागैतिहासिक काल से ही भारत में संगीत की समृद्ध परंपरा देखी गई है और कहा जाता है कि यह परंपरा ईश्वरीय देन है। सिन्धु घाटी की सभ्यता काल से ही संगीत सामने आया। हालाँकि बाद में इसपर कई विवाद भी हुए परंतु गुफाओं की दीवारों पर पाए गए नृत्य करती बालाएँ, कास्य की मुर्ति और नाटक एवं संगीत के देवता रूद्र अर्थात् शिव-शिवा की पूजा का प्रचलन पाया गया है।

इन सारे चित्रों एवं मुर्तियों को देखकर स्पष्ट हो जाता है कि शिव ने ही नृत्य-वाद्य एवं गायन को पृथ्वी पर भेजा एवं जन-जन को इस विद्या से अवगत करवाया।

भगवान भोलेनाथ के 'ताण्डव' विशय में भी इतिहास के अनेक प्रकार की चर्चायें प्राप्त हुई है, जिनके द्वारा यह भी सामने आया कि भगवान दो प्रकार के ताण्डव किया करते थे।

प्रथव जब वो क्रोधित होते थे तब वे बिना डमरू के नृत्य करते थे और दूसरे नृत्य में वे आनन्द एवं रस में डूबकर डमरू के साथ नृत्य करते थे, इस नृत्य में उनकी भंगिमा परमानंद की होती थी। डमरू हाथ में लेकर आनन्द चित्त से नृत्य कर प्रकृति के हर कण में संगीत की लहरी समाहित हो जाती थी और संगीत के जनक शिव मनुष्यों के हृदय में संगीत स्वर लहरी के साथ समाधिस्थ अवस्था में ग्राह्य पाये जाते थे। शैव भक्त ईश्वर को अनादि देव को अपने में समाए हुए उनकी स्तुति किया करते थे। 'शिव महापुराण' के अनुसार भी शिव से पूर्व संगीत विश्व में था ही नहीं। पुराणों में भी इसकी पुष्टि की गई है कि सृष्टि के प्रारंभ में ब्रह्मनाद से जब शिव प्रकट हुये तो उनके साथ 'सत्ता-रज और तम' ये तीनों गुण ने भी जन्म लिया। यही तीनों गुण त्रिशूल कहलाये।

भरत मुनि ने 'नाट्य-शास्त्र' का पहला अध्याय लिखने के बाद अपने शिष्यों को ताण्डव का प्रशिक्षण दिया था। उनके शिष्यों में गान्धर्व और अप्सरायें भी थी। नाट्यवेद के आधार पर प्रस्तुतियाँ भगवान शिव के समक्ष प्रस्तुत की जाती थी। भरत मुनि के दिए ज्ञान और प्रशिक्षण के कारण उनके नर्तक ताण्डव भेद अच्छी तरह जानते थे, और उसी तरीके से अपनी नृत्य शैली परिवर्तित कर लेते थे। माँ पार्वती ने भी यही नृत्य वाणासुर की पुत्री को सिखलाया था, धीरे-धीरे युग-युगान्तरों के बाद यह नृत्य पृथ्वीवासियों को भी सिखने को मिला। शैव सम्प्रदाय के लौकिक वाक्यों की संज्ञा भी लौकिक, ऋक, लौकिक गाथा और लौकिक साम रखी। शैव संप्रदायों में यह भी कहा गया कि ऐसे गीतों का निर्माण ब्रह्मा ने शिव स्तुति के लिए किया था और उनसे मोक्ष प्राप्ति के लिए विनय किया था।

इसी क्रम में 'अभिनव दर्पण' के लेखक श्री नंदकेश्वर भगवान शिव को नमस्कार करते हुए कहते हैं–

आङ्गिकं भुवनं यश्य वाचिकं सर्ववाङ्मयम्।

आहार्य चन्द्रतारादि तं नुमः सात्विकं शिवम्॥

अर्थात् 'हम उन सात्विक शिव को नमस्कार करते हैं जिनका आंगिक संसार, वाचिक समस्त भाषाएँ और आहार्य चन्द्र तारागण है। संस्कृत के उक्त दो पंक्तियों में संसार में नृत्य की घनिष्ठता एवं संसार में उनका महत्व स्पष्ट हो जाता है।

अतः भारतीय परंपरा में यह मानना कि नृत्य के आदि प्रवर्त्तक भगवान शिव हैं, वे नित्य संध्याकाल में अपनी मस्ती में झूमकर नाचते हैं। शिव के इस आनंद-नर्तन में सभी देवगण सम्मिलित होते हैं। उनकी विराटता में ब्रह्मा ताल देते हैं, विष्णु मृदंग बजाते हैं, माँ सरस्वती अपनी वीणा झँकृत करती हैं, सूर्य-चंद्र बाँसुरी फूँकते हैं, अप्सरायें एवं किन्नरियाँ श्रुतियों का ध्यान रखती हैं, नंदी व श्रृंगी, डमरू व माँदल बजाते हैं। इसके साथ-साथ नारद स्वर मिलाते हैं। शिवजी के पदाघातों से पृथ्वी और हाथों के संचालन से नक्षत्र-मण्डल गतिमान होता है। इसीलिए यह कथन सत्य है कि यह पूरा संसार नृत्यमय है–

'नृत्यमयं जगत'

शिवजी ने इस प्रकार नृत्य करते हुए जिन मुद्राओं का आविष्कार किया उन्हें ताण्डुमनी (नंदीश्वर) एक-एक कर संकलित करते गये और लय-ताल में बैठाकर अभ्यास करने लगे। अब ब्रह्मा जी की आज्ञा से भरतमुनि ने अपनी मंडली के साथ कैलाश पर्वत पर जाकर शिवजी के समक्ष 'त्रिपुरदाह' नाम का नाटक प्रस्तुत किया तब शंकर भगवान ने इस नाट्य प्रयोगों में नृत्य की योजना करने का सुझाव दिया और अपने प्रिय शिष्य ताण्डुमुनि को आदेश दिया कि भरतमुनि नृत्य शिक्षा प्रदान करें। इस प्रकार ताण्डु के द्वारा सिखाए जाने के कारण ही शिवजी का प्रसिद्ध नृत्य 'ताण्डव' कहलाया। भरत मुनि ने इसकी शिक्षा अपने पुत्रों को दी, बाद में यह नृत्य पृथ्वी लोक में प्रचलित हो गया।

अन्ततः हम यह कह सकते हैं कि संगीत रूपी विद्या जो युगों-युगों से हृदय रंजन के साथ-साथ मनुष्यों को मोक्ष प्राप्ति की ओर ले जाने में एक कारगर औजार की तरह सक्रिय है, वह शिव एवं शक्ति की ही देन है। अतः समस्त मानव जाति, उन्हें शत-शत नमन करती है।

कर्पूरगौरम् करूणावतारम् संसारसारम्
भुजगेन्द्रहारम्।

सदा वसन्तं हृदयारविन्दे **भवं भवानी सहितं नमामि॥**

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में शिव शक्ति

डॉ. कुमारी बीभा

+2 प्रोजेक्ट कन्या उच्च विद्यालय धमधाहा, पूर्णिया

शिव या महादेव हिन्दू धर्म में सबसे महत्वपूर्ण देवताओं में से एक है। इन्हें देवों के देव भी कहते हैं। इन्हें भोलेनाथ, शंकर, महो, रूद्र, नीलकंठ आदि नाम से भी जाना जाता है। तंत्र साधना में इन्हें भैरव के नाम से भी जाना जाता है। वेद में इनका नाम रूद्र है।

भगवान शिव को संहार का देवता कहा जाता है। भगवान शिव सौम्य आकृति एवं रौद्र रूप दोनों के लिए विख्यात है। सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति एवं संहार के अधिपति शिव है। त्रिदेवों में भगवान शिव संहार के देवता माने गए हैं। शिव का अर्थ यद्यपि कल्याणकारी माना गया है, लेकिन वे हमेशा लय एवं प्रलय दोनों को अपने अधीन किये हुए हैं।

शिव पुराण के अनुसार शिव-शक्ति का संयोग ही परमात्मा है। शिव की जो पराशक्ति है उससे चित शक्ति प्रकट होती है। चित्त शक्ति से आनंद शक्ति का पादुर्भाव होता है। आनंद शक्ति से इच्छाशक्ति का उद्भव हुआ है। इच्छाशक्ति से ज्ञान शक्ति और ज्ञान शक्ति से पाँचवी क्रियाशक्ति प्रकट हुई है। इन्हीं से निवृत्ति आदि कलाएँ उत्पन्न हुई है।

शिव और शक्ति की लीला को समझने के लिए हमें सबसे पहले उनका नटराजस्वरूप समझना होगा। वह रूप जिसमें शिव नृत्यरत है। शिव का नृत्य है तांडव। जिसके दो रूप है—रौद्र तांडव और आनंद तांडव। जब शिव रौद्र तांडव करते हैं तो वे रूद्रत्व को प्राप्त होते हैं। वही शिव जब आनंद तांडव के उल्लास में मग्न होकर नाचते हैं तो वे नटराज कहलाते है। जहाँ रौद्ररूप में वे संहार का कार्य करते हैं वहीं नटराज के रूप में वे सृजन करते हैं।

'शिव' शब्द का अर्थ शुभ, स्वाभिमानिक अनुग्रहील, सौम्य, दयालु, उदार, मैत्रीपूर्ण होता है। ऋग्वेद में शिव के 12 ज्योतिर्लिंग की चर्चा की गई है जो अलग-अलग जगह विद्यमान है। हिन्दू धर्म में वेद पुराणों के अनुसार जहाँ भगवान शिव खुद प्रकट हुए उन 12 स्थानों पर स्थित भगवान शिव के शिवलिंगों को ज्योतिर्लिंग के रूप में पूजा जाता है। ऐसा कहा जाता है कि इन स्थानों पर भगवान शिव साक्षात रूप में वास करते है।

शिव के ज्योतिर्लिंगों की संख्या 12 है जो अलग-अलग जगहों पर विद्यमान हैं—

1. सोमनाथ ज्योतिर्लिंग

सोमनाथ ज्योतिर्लिंग इस पृथ्वी का पहला ज्योतिर्लिंग माना जाता है। यह मंदिर गुजरात के सौराष्ट्र क्षेत्र में स्थित है। शिवपुराण के अनुसार जब चंद्रमा को दक्ष प्रजापति ने क्षय रोग होने का श्राप दिया था, तब चंद्रमा ने इसी स्थान पर तप कर इस श्राप से मुक्ति पाई थी। ऐसा भी कहा जाता है कि इस शिवलिंग की स्थापना स्वयं चंद्रदेव ने की थी।

2. मल्लिकार्जुन ज्योलिंग

यह ज्योतिर्लिंग आन्ध्र प्रदेश में कृष्णा नदी के तट पर श्री शैल नाम के पर्वत पर स्थित है। इस मंदिर का महत्व भगवान शिव के कैलाश पर्वत के समान कहा गया है। एक पौराणिक कथा के अनुसार जहाँ पर यह ज्योतिर्लिंग है, उस पर्वत पर आकर शिव का पूजन करने से व्यक्ति को अश्वमेध यज्ञ के समान पुण्य फल प्राप्त होते हैं।

3. महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग

यह ज्योतिर्लिंग मध्यप्रदेश के धार्मिक राजधानी उज्जैन में स्थित है। महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग की विशेषता है कि ये एकमात्र दक्षिणमुखी ज्योतिर्लिंग है। यहाँ प्रतिदिन सुबह की जाने वाली भस्मारती विश्व भर में प्रसिद्ध है। महाकालेश्वर की पूजा विशेष रूप से आयु वृद्धि और आयु पर आए हुए संकट को टालने के लिए की जाती है।

4. ओंकारेश्वर ज्योतिर्लिंग

ओंकारेश्वर ज्योतिर्लिंग मध्यप्रदेश के प्रसिद्ध शहर इंदौर के समीप स्थित है। ज्योतिर्लिंग के स्थान पर नर्मदा नदी वहती है और पहाड़ी के चारों ओर नदी वहने से यहाँ ऊँ का आकार वनता है। यह ज्योतिर्लिंग औंकार अर्थात् ऊँ का आकार लिए हुए हैं, इस कारण इसे ओंकारेवर नाम से जाना जाता है।

5. केदारनाथ ज्योतिर्लिंग

यह ज्योतिर्लिंग भगवान शिव के 12 प्रमुख ज्योतिर्लिंगों में आता है। यह उत्तराखंड में स्थित है। स्कन्द पुराण और शिव पुराण के अनुसार यह तीर्थ भगवान शिव को अत्यन्त प्रिय है। जिस प्रकार कैलाश का महत्व है उसी प्रकार का महत्व शिव जी ने केदार क्षेत्र को भी दिया है।

6. भीमाशंकर ज्योतिर्लिंग

भीमाशंकर ज्योतिर्लिंग महाराष्ट्र के पूर्ण जिले में सह्याद्रि नामक पर्वत पर स्थित है। भीमाशंकर ज्योतिर्लिंग को मोटेश्वर महादेव के नाम से भी जाना जाता है। इस मंदिर के विषय में मान्यता है कि जो भक्त श्रद्धा से इस मंदिर के प्रतिदिन सुवह सूर्य निकलने के बाद दर्शन करता है, उसके सात जन्मों के पाप दूर हो जाते हैं तथा उसके लिए स्वर्ग के मार्ग खुल जाते है।

7. काशी विश्वनाथ ज्योतिर्लिंग

काशी विश्वनाथ ज्योतिर्लिंग शिव के 12 ज्योतिर्लिंगों में से एक है। यह उत्तर प्रदेश के काशी नामक स्थान पर विराजित है। काशी की मान्यता है कि संसार में प्रलय आने पर भी भगवान शिव का यह स्थान वना रहेगा। काशी की रक्षा के लिए भोलेनाथ इस स्थान को अपने प्रिय त्रिशूल पर धारण कर लेंगे और प्रलय टल जाने के बाद काशी को उसके स्थान पर पुनः स्थापित कर देंगे।

8. त्र्यंबकेश्वर ज्योतिर्लिंग

यह ज्योतिर्लिंग गोदावरी नदी के करीव महाराष्ट्र राज्य के नासिक जिले में स्थित है। भगवान शिव का एक नाम त्र्यंबकेश्वर भी है। कहा जाता है कि भगवान शिव को गौतम ऋषि और गोदावरी नदी के आग्रह पर यहाँ ज्योतिर्लिंग रूप में रहना पड़ा।

9. वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग

श्री वैद्यनाथ शिवलिंग का समस्त ज्योतिर्लिंगों की गणना में नौवां स्थान वताया गया है। यह स्थान झारखण्ड प्रान्त बिहार प्रान्त के संथाल परगना के दुमका नामक जनपद में पड़ता है।

10. नागेश्वर ज्योतिर्लिंग

यह ज्योतिर्लिंग गुजरात के वाहरी क्षेत्र में द्वारिका स्थान में स्थित है। भगवान शिव का एक अन्य नाम नागेश्वर भी है। इस ज्योतिर्लिंग की महिमा में कहा गया है कि जो व्यक्ति पूर्ण श्रद्धा और विश्वास के साथ यहाँ दर्शनों के लिए आता है। उसकी सभी मनोकामनाएँ पूरी हो जाती है।

11. रामेश्वरम ज्योतिर्लिंग

यह ज्योतिर्लिंग तमिलनाडु राज्य के रामनाथ पुर नामक स्थान में स्थित है। शिव जी के इस ज्योतिर्लिंग की मान्यता है कि इसकी स्थापना स्वयं भगवान श्री राम ने की थी।

12. घृष्णेश्वर ज्योतिर्लिंग

घृष्णेश्वर महादेव का प्रसिद्ध मंदिर महाराष्ट्र के संभाजीनगर के समीप दौलताबाद के पास स्थित है। भगवान शिव के 12 ज्योतिर्लिंग में से यह सबसे आखिरी ज्योतिर्लिंग है।

शिव शब्द एक विशेषण के रूप में प्रयोग किया जाता है। इस विशेषण का प्रयोग विशेष रूप से साहित्य के वैदिक परतों में कई देवताओं को संबोधित करने हेतु किया गया है। यह शब्द वैदिक रूद्रा-शिव से महाकाव्यों और पुराणों में नाम शिव के रूप में विकसित हुआ। एक शुभ देवता के रूप में, जो निर्माता, प्रजनक और संहारक होता है।

शिव हैं अविभाजित चैतन्य जिसमें दानों ही रौद्र व आनंद प्रकट हो रहे हैं जिस तरह किसी शांत झील में लहरें पैदा हो रही हो। यह संसार ही इन दानों तांडवों की अभिव्यक्ति है। यहाँ प्रतिपल सृजन चलता रहता है, साथ ही विनाश भी। इस संसार की पृष्ठभूमि हैं शिव वह अनादि चेतना जिसमें निर्माण संहार का खेल होता हुआ जान पड़ रहा है। संसार का अर्थ है जो निरंतर सरकता रहे, परिवर्तित होता रहे यही अपरिवर्त्तनीय चेतना शिव है।

शिव और शक्ति एक-दूसरे से उसी प्रकार अभिन्न है जिस प्रकार सूर्य और उसका प्रकाा, अग्नि और उसका ताप तथा दूध और उसकी सफेदी। शिव में 'इ' कार ही शक्ति है। शास्त्रों के अनुसार बिना शक्ति की सहायता के शिव का साक्षात्कार नहीं होता। अतः आदिकाल से ही शिव-शक्ति की संयुक्त उपासना होती रही है।

संदर्भ ग्रंथ

1. निबन्ध संगीत–लक्ष्मीनारायण गर्ग पृ-376
2. भारतीय संगीत का ऐतिहासिक विश्लेषण- स्वतंत्र शर्मा
3. संगीत पत्रिका–2014

संगीत में शिव शक्ति

डॉ. सारिका विवेक

श्रावणे (संगीत विभाग) स्व.छ.मु. कढी कला महाविद्यालय
अचलपूर कॅम्प परतवाडा, अमरावती-444805
ईमेल : sarikashrawane@rediffmail.com

प्रस्तावना

आदिकाल से मानव विचार एवं भावना अभिव्यक्ति के लिए प्रयास करते है। भाषा, कला निर्मिति एवं विकास इनकी ही फलश्रुति है। भाषा उत्पत्ति के पूर्व संगीत की निर्मिति हुई है। भारतीय समाज एवं संस्कृति धर्मप्रधान है। हमारे संस्कृति का प्रत्यांग धर्म से जुड़ा है इसमें कोई संदेह नहीं और इस विचारधारा से प्रभावित भी था। गुणीजनों ने संगीत को नाद वेद नाम दिया और उत्पत्ति सृष्टिकर्ता ब्रह्मा को माना, ब्रह्मा से शिव, सरस्वती, नारद इस तरह यह कला विकसित हुई इन्होंने यक्ष, किन्नर, अप्सरा इनको प्रदान की इस पश्चात भरत आदि ऋषियों ने इस विद्या को ग्रहण किया इस तरह मनुष्यप्राणी तक यह कला प्रसारित हुई। भारतीय संगीत मे जो तत्, अवनद्ध, सुशिर और घन वाद्य है इन वाद्यों को श्रीकृष्णजी ने धरती पर लाया ऐसा भी एक मत है। एक मतानुसार ऐसा भी उल्लेख मिलता है कि शिवजी ने त्रिपुरासुर पर विजय प्राप्त कर जो नृत्य किया उसके साथी के लिए ब्रह्मा ने अवनध वाद्यों की निर्मिति की तथा शिवपुराण के कथानुसार शिवजी ने पार्वती की शयन मुद्रा देखकर उस आधार पर 'वीणा' वाद्य की निर्मिति की जो रूद्रवीणा के नाम से जानी जाती है। शिवजी का नृत्य प्रभाव, रागनिर्मिति, वाद्यनिर्मिति इनका संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत शेधनिबंध में मैं करना चाहूंगी।

संगीत की पृष्ठभूमि

संगीत की पृष्ठभूमि अध्यात्म से बनी है। कवि 'वारख' इन्होंने लिखा है ''संगीत का एक ही ध्येय है, ईश्वर का जय-जयकार'' प्राचीन संगीत का भी हम यही उद्देश मानते है जो ईश स्तुति पर रचनाओं से अभिव्यक्त होता है। संगीत में ईश्वर से साक्षात्कार करने की असीम शक्ति होती है। सृष्टि के समय स्पंदन होने के साथ ही जो ध्वनि उत्पन्न हुई उसे 'ओमकार' की ध्वनि या नाद संज्ञा दी गई, वही नाद हमारे कलाओं में से एक संगीत कला में प्रयोग की गई धर्म की दृष्टि से संगीत कला देवी सरस्वती, नारदमुनि, गणेशजी, सृष्टि निर्माणकर्ता स्वयं नटेश्वर इत्यादि से परिलक्षित होती है। समस्त विद्वानों का मुलाधार संगीत है। इसका निर्माण विश्व की वर्तमान-विसंवादी प्रवृत्तियों के निराकरणार्थ ईश्वर के द्वारा हुआ है।

संगीत उत्पत्ति के जनक

संगीत उत्पत्ति संदर्भ में आध्यात्मिक दृष्टि से देखा जाए तो नारदजी की घेार तपस्या से प्रसन्न होकर महादेवजी ने उन्हें संगीत की यह अद्भूत कला प्रदान की। इसी कला को नारद ने मनुष्यों

तक पहुंचाया। माना जाता है कि, माँ पार्वतीजी की शयनमुद्रा देखकर महादेवजी ने उनके अंग-प्रत्यंगों के आधार पर 'रूद्रवीणा' का निर्माण किया व पांच श्री मुखों से पांच राग-भैरव, हिंडोल, मेघ, दीपक और श्री राग की उत्पत्ति की। तथा छठा राग कौशिक पार्वती जी द्वारा उत्पन्न किया गया। 'शिव-प्रदोष' ग्रंथ में वर्णित है कि जगत जननी माँ गौरी को स्वर्ण सिंहासन पर बिठाकर शिव ने नृत्य करने की इच्छा प्रकट की। सरस्वती ने वीणा, इंद्र ने वेणु, ब्रह्माजी ने करताल किया, लक्ष्मीजी गाने लगी और विष्णु जी मृदंग बजाने लगे। इस नृत्यमयी संगीत का आनन्द लेने के लिये गंधर्व, सिध्द, देवी, देवता, यक्ष, किन्नर, अप्सराएं आदि वहाँ उपस्थित हो गये। इसी के चलते सभी ने संगीत के ज्ञान व उसके आनन्द की अनुभूति की। यही संगीत फिर पृथ्वी लोक पर मानव जाती का प्राण बना व इसी के सहारे उसने मोक्ष व चिंतन का रास्ता ढूंढ़ा। भारतीय संगीत में इस तरह की अनेक धार्मिक मान्यताएँ व आशाएँ सामने आती है जो संगीत उत्पत्ति के जनक का प्रमाण देती है। जिससे यह पता चलता है कि भारत का मानस बल्कि यूँ कहें कि समस्त विश्व का मानव संगीत की पवित्रता को सीधा अपने ईश्वर से जोड़ता। यह संगीत की उत्कृष्टता व पवित्रता का ही एक उच्च प्रमाण है।

संगीत मे शिव शक्ति

शिव याने कल्याणकारी। शिव शक्ती कोई दो अलग सत्ताएं नहीं हैं। जब शिव अभिव्यक्त होता है तो शक्ति हो जाता है और जब शक्ति अभिव्यक्ति समेट ले तो शिव हो जाती है। नटराज रूप में हमें शिव और शक्ति एकसाथ मिल जाते हैं। क्योंकि नटराज भगवान शिव का ही रूप है नट और राज अर्थात् नट का अर्थ कला और राज अर्थात राजा। भगवान शंकर का नटराज रूप इस बात का सूचक है कि अज्ञानता में सिर्फ ज्ञान, संगीत और नृत्य से ही दूर किया जा सकता है। नटराज में नृत्य का जो रूपक है वह नाद से जुड़ा है। और वीना संगीत के नृत्य भला कहा संभव है।

अमृत मंथन के वाद ब्रह्मा की आज्ञा से महर्षि भरत ने शंकरजी के निवास स्थान पर 'त्रिपूर दाह' नाट्य प्रयोग किया। इस प्रयोग से भगवान शंकरजी प्रसन्न हुए और बोले मैंने भी प्रतिदिन संध्याकाल नृत्य करते हुए 'नृत्य' का अर्विभाव किया है जो विभिन्न करणों एवं अंगहारों से विभूति है, आप इसकी योजना पूर्व रंग विधि में किजिए । तत्पश्चात ब्रह्मा की प्रार्थना पर भगवान शंकर ने ताण्डू को बुलाकर भरत को अंगहारों का प्रयोग सिखाने की आज्ञा दी तण्डू ने भुवनेश्वर की आज्ञा का पालन कर भरत को अंगहारों का प्रयोग बनाया।

भगवान शंकर ने रेचकों, अंगहारों एवं पिण्ड बन्धों की सृष्टि कर के तण्डु को सिखाया। उन्होंने गान-भाण्ड समन्वित जिस नृत्य प्रयोग की सृष्टि की, वह 'ताण्डव' कहलाया। इस जहां की सारी हलचल अपने तांडव नृत्य से ही करने वाले श्रेष्ठ भगवान शिवजी हैं। संगीत मे तीन घटक का समावेश है 1. गायन 2. वादन और नृत्य इन तीनों मे भी भगवान शिवजी की शिवशक्ति है इसकी अनुभूति करनेवाली कथाएँ हम आज भी पढ़ते हैं। आज भी चिदंबर स्थित पत्थरों में निकाले गए बहुत से अलग-अलग नृत्य के प्रकार है। चिदंबर के मंदिरों में पांच सभागण है, उस सभा में शिवजी ने कालिका को हराया था । वह कथा कुछ इस प्रकार है कि चिदंबर में पहले दो क्षेत्र थे एक शिवजी और दूसरा कलिका को अर्पण किया था। एक बार शिवजी ने सिर्फ अपने शिष्यों को सभा में आने की अनुमती दी और कलिका को नृत्य सभा मे प्रवेश नहीं दिया। दोनों में ही दैवी शक्ति होने के कारण उनकी स्पर्धा अपने शिष्यों में ही शुरू हुई । कालिका ने शिव के समान सारे नृत्य किए। आखिर में शिव ने अपने बांए पांव को सर पर रखकर ऊर्ध्वतांडव की भंगिमा में खडे हुए नाटयशास्त्र ग्रंथ में इसे 'ललाटि तिलक' भंगिमा कहा जाता है। यह कलीका नहीं कर सकी और उसने वहां का स्थान छोड़

दिया। एक अन्य कथा अनुसार एक समय में तारका जंगल में नास्तिक ऋषियों ने होमहवन करके मिले हुए फल से वे गर्व और अहंकार से रहने लगे यह अहंकार तोड़ने के लिए शिवजी ने भिक्षुका का वेश धारण करके उन ऋषियों के साथ झगड़ना शुरू किया। तब गुस्से से उन्होंने एक शेर को निर्माण करके उसको मारने के लिये भेजा तब शिवजीने उसे मारकर उसके चर्म को अपने कमर पर बांध लिया। फिर एक विषकारी नाग को भी उन्होंने गले में बांध लिया। बाद में उन्होंने एक अपस्वार नामक राक्षस का निर्माण किया। तब शिवजी ने उसे जमीन पर पटक कर उसकी गोद में तांडव नृत्य किया। कुल 7 प्रकार के तांडव नृत्य के वर्णन प्राप्त होते हैं जो शिवजी ने समय-समय पर किये थे—1. आनंद तांडव 2. संध्या तांडव 3. उमा तांडव 4. गौरी तांडव 5. कलिका तांडव 6. त्रिपुरा तांडव 7. संहार तांडव। शिवजी लय और तांडव के आदिदेवता, वे कनक सभा में नृत्य करते थे, नहीं तो श्मशान रूद्रभूमि जो जगत में निस्वार्थी भक्त का हृदय ही कहते हैं। शिव अंत मे आत्मा को मोक्ष मार्ग दिखाते हैं। शिवपुराण के अनुसार शिवशक्ति का संयोग ही परमात्मा है, जो की संगीत का मुल उद्देश है।

निष्कर्ष

अपनी आध्यात्मिक चेतना के कारण ही संगीत कला 'नादब्रह्म' है। जप-तप-ध्यान और योग आदि भक्ति के समस्त साधनों में 'नाद रूप संगीत' का सबसे अधिक महत्व रहा है। स्व. डॉ. सुभद्रा कुमारी ने कहा है—''यहाँ सभी कलाएँ, विद्या एवं शास्त्र उस एक ही तत्व की ओर उन्मुख हैं जिसे सचिनान्द ब्रह्म परमब्रह्म परमात्मा चैतन्य आदि विभिन्न नामों से अभिहित किया गया है। अर्थात संगीत कला की दैविक पार्श्वभूमि प्रबल है। शिवशंकर, महर्षि नारद, महर्षि तंबरु, हनुमान, श्रीगणेश यह अत्यंत ज्ञानी संगीतकार एवंम कलाकार थे। इस माया जगत की सृष्टि विविध चक्र चलानेवाला भगवान है। भगवान शिव को संगीत का जनक माना जाता है। शिवपुराण के अनुसार शिव के पहले संगीत के बारे में किसी को भी जानकारी नहीं थी। नृत्य, वाद्ययंत्रों को बजाना उस समय कोई भी नहीं जानता था वीणा, मुरज तथा डमरु इस अवनद्य वाद्योकां संबध शिवजी से है। इस प्रकार राग निर्मिति, वाद्य और नृत्य इन तीनों घटको में शिव शक्ति है। क्योंकि शिव ही इस ब्रह्मांड में सर्वप्रथम आये है।

संदर्भ ग्रंथ

1. नाट्यशास्त्र 4/14
2. नाट्यशास्त्र—भरत मुनि पृष्ठ 4/16
3. भारतीय कंठ संगीत और वाद्य संगीत—डॉ. अरूण मिश्रा
4. प्राचीन भारत में संगीत—डॉ. पूनम मिश्रा
5. संगीत कला विहार—फेब्रुवारी 2015

संगीत में शिव शक्ति

डॉ. जयश्री विश्राम कुलकर्णी

संगीत विभाग, स्व.सी.एम.कढी कला महा., अचलपूर कॅम्प-444 805

ई-मेल : drjayshri70@gmail.com

प्रस्तावना

12 वे शतक से संगीत की धारा संत संगीत जैसे भजन, कीर्तन, जागर इस माध्यम में जिंदा रही है। तो दूसरी तरफ दक्षिण प्रांत के मंदिर में काकडा, जागर, शेजारती, धुपारती इस माध्यम में स्थित है। इसके अलावा लोक संस्कृति के माध्यम में शाश्वत रही है। इससे ये कहा जा सकता है की, लोकसंगीत के माध्यम से जातिगायन, संतसंगीत, मंदिर संगीत, ईराना संगीत इस चार प्रवाह अपने गुणविशेषानुसार स्थित है। पर आगे जाकर ईराना संगीत ही लोकप्रिय हुआ।

संगीत कला सर्वश्रेष्ठ कला है। वह स्वयंप्रेरित है। मानवी जीवन के बहुत निकट है। बाकी कला बाह्य वस्तु से प्रेरित है। जैसे की चित्रकला निसर्ग अथवा वस्तु पर आधारित है। पर संगीत कला गायक कलाकार के मन की भावना से प्रेरित है। इसलिये संगीत कला को हृदय की कला कहते हैं।

संगीत कला सबके लिये है। वो प्रांत, देश, धर्म लिंग, भेद नहीं मानती।

बहुत साल पहले मानव का जीवन कैसा होगा इसकी कल्पना उत्खनन में जो आधार मिला है, उसपर से स्पष्ट होता है।

ओम 'अऊम' ये तीन अ रोस बना हुआ है। ये तीन अ र शक्ति का प्रतीक मानते है।

अकारों विष्णु रुदिष्ट उकारास्तु महेश्वरः।
मकारेत्येच्यर्त ब्रम्हा प्रणवेत त्रयोभक्तः॥

'अऊम' इस बीज मंत्रों से सृष्टि की उत्पत्ति हुई है। और उसीसे नाद की उत्पत्ति हुयी। सूरसंगीत की सुंदर मनभावन धरा सदाशिव से प्रवाहित हुयी है। शिवजी को संगीत कला का आदिगुरु माना जाता है। नटराज के रूप में भी शिवजी विख्यात हैं। माँ पार्वती ने शिवशक्ति ने लास्य नृत्य का आविष्कार किया और शक्ति ही बाणासूर की पत्नी उषा को ही ये नृत्य सिखाया। मतंग मुनिजी ने अपने बृहददेशी इस ग्रंथ में भगवान शिव को ही मार्गी और देशी संगीत के उत्पत्ति कर्ता माना है।

महादेव मुखोद्भूतान देशी मार्गेच संस्थिताना॥ संगीत के मूलस्त्रोत देवीदेवता ही है। और ये कला जन्मतः मानव को भगवान की ओर से देन है। इसलिये संगीत कला सर्वश्रेष्ठ कला है।

विषय : भारतीय संगीत शास्त्र में संगीत की उत्पत्ति भगवान शंकर (शिवजी) के तांडव नृत्य से होती है। ऐसा मानते हैं। उन्होंने ये कला महर्षि नारदजी को सिखायी। उनसे गंधर्व, गायन करने वाले, किन्नर–वादन करने वाले इन लोगों को मिली। इसका प्रतीक अर्जिठा, वेरुळ और अन्य पुरातन शिल्प और चित्रों से मिलता है।

आगे जाकर ये कला भरत, हनुमंत और ऋषि गणों को मिली और उन्होंने इसका प्रचार और प्रसार पृथ्वी पर किया।

कोई विद्वान पंडित लोगों का यह मानना है कि, आदिमानव के साथ ही संगीत की उत्पत्ति हुई है।

आदि मानव जब जंगल में घूमता था। तो वो पंछियों के आवाज (नाद) सुनता था तो वैसी ही नकल करता था। फिर उसमें हर्ष, आनंद, क्रोध ये

भावनाएं थीं। ये नाद ही संगीत की उत्पत्ति का पहला आविष्कार था ऐसा लोगों का मानना है।

दामोदर पंडित जीने सात सुरों की उत्पत्ति प्राणीयों से बतायी है।

1. शडज - मूर
2. रिषभ - चातक
3. गांधार - बकरा
4. मध्यम - कावळा
5. पंचम - कोकीळा
6. धैवत - मेंढा
7. निषाद - हषी

ये हुआ सुरोका पर ऐसा मानते है की वाद्यों की निर्मिति हत्यारों से हुयी है।

1. पत्थर की हत्यारों से इनवाद्य
2. धनुष से तंतूवाद्य
3. प्राणीयों के कातडी से–चर्मवाद्य
4. लकड़ली से सुशीरवाद्य

मानव मुलतः बहुतही बुद्धीमान और कल्पक प्राणी रहा है। जैसे उन्होंने अन्न, वस्त्र, निवारा, ये तीनों का शोध लगा था वैसे ही संगीत कला भी विकसित हुआ। जैसे, ईश्वर स्तुति, धार्मिक कार्यो में संगीत का उपयोग करने लगे।

प्राचीन काल में उदात्त, अनुदात्ता, स्वरित इन तीनों स्वरों में दामोदर पंडितजी ने ऊपर बताया जैसे सात सुरों का साज चढ़ाया।

माँ देवी सरस्वती को हम संगीत की अधिष्ठात्रि देवता मानते हैं। उनके हाथों में वीणा है। शिवजी के हाथों में डमरू है।

ये भी कहा जाता है कि, संगीत कला की उत्पत्ति वेदों के निर्माता ब्रह्मदेव जीने की है। उन्होंने ये कला शिवजी को प्रदान की, उन्होंने सरस्वती को, और माँ सरस्वती ने महर्षि नारद को प्रदान की है।

कुछ विद्वान पंडितों का ये मानना है कि, महर्षि नारदजी ने बहुत साल योगसाधना करके शिवजी को प्रसन्न किया। और उनसे ये कला सीखी है।

देवी पार्वती के शयनमुद्रा की तरफ देखकर शिवजी ने रूद्रवीणा बनायी है। और अपने पाँच मुख से पाँच रागों की उत्पत्ति की है। शिवजी के पाँच मुख है पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण और आकाश इनसे उन्होंने क्रमशः भैरव, हिंडोल, में, दीपक और श्री राग प्रकट किये थे। और पार्वती देवी द्वारा कौशिक राग की उत्पत्ति हुयी है। इस पूरे विश्व की जननी माँ गौरी ने सुवर्ण के सिंहासन पर बैठकर प्रदोष के समय शिवजी ने नृत्य करने की इच्छा प्रकट की थी। तो सभी देवताओं ने शिवपार्वती का स्तुतीगायन किया। माँ सरस्वती ने वीणा बजायी। इंद्रदेव ने और ब्रह्मदेव ने करताल बजाया, लक्ष्मी ने गायन किया और भगवान विष्णु ने मृदंग बजाया था।

ये नृत्यमय संगीत का उत्सव देखने के लिये, गंधर्व, यक्ष, पतंग, उरग, सिद्ध, साध्य, विद्याधर, देवता, अप्सरा ये सभी देवगण उपस्थित थे। सुर और लय की तरफ आकर्षण ये मानव मन की सहजता है। सुर का आकर्षण ये नैसर्गिक प्रक्रिया है। और जब ये आकर्षण बढ़ जाता है। तभी संगीत का निर्माण होता है।

शब्दों का उगम जैसे नैसर्गिक भाव और जरूरत की वजह से हुआ, वैसा ही संगीत का प्रथम रूप लोकसंगीत में दिखायी देता है।

आगे जाकर शब्द के साथ सुरों में भी बाढ़ होने लगी। कुछ विद्वान लोगों के मतानुसार स्त्री-पुरुष के निकट आने से संगीत की निर्मिति हुई। धार्मिक भावना से ही भारतीय संगीत का उगम हुआ है। मन की शांति के लिए ईश्वर की आराधना करने के लिये संगीत की निर्मिति हुयी है। सागर की लाटों की आवाज, में गड़गड़ाहट, बिजली की कड़कड़ाहट, तूफान की आवाज इन सारी चीजों में एक विशेष प्रकार का नाद व लय है।

इन सभी से प्रेरणा लेकर मानव ने मानवी बुद्धी, कल्पकता और समाज इन सभी देणगी का उपयोग लेकर संगीत का विकास किया। मनोरंजन ही मानव को संघर्षमय जीवन से थोड़ी शांती दे सकता है।

जरूरत शोध की जननी मानते हैं। और स्वर, लय, शब्द इन सभी से आनंद मिल सकता है। ये बात समझ में आयी होगी फिर इसी से ही उन्होने संगीत का आनंद लिया है। ईश्वर से वरदान मिलने

के लिये मानव नृत्य और संगीत का आधार लेता है। और इसी से ही संगीत का जन्म हुआ है।

कुछ विद्वान का ऐसा कहना है कि ओम शब्द से ही संगीत का जन्म हुआ।

अ - से ब्रह्मा

ऊ - से विष्णु

म - से महेश

अऊम इन 3 अक्षरों से ही ध्वनि उत्पन्न होती है। ओम वेदों का बीजमंत्र है। मनु का कहना है कि ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद इनसे अऊम ये तीन अक्षर बन गये और 'प्रणव' 'ओम' शब्द बन गया।

श्रुति - स्मृति के अनुसार प्रणव परमात्मा का नाम है। ओंकार से संगीत की उत्पत्ति ये हमारे भारतीय संस्कृत का द्योतक है।

गंधर्ववेद और पंचमवेद और मुक्ति मिलाने का साधना जो हमारी संगीत कला है उसकी श्रेष्ठता हम सब जानते ही हैं। वेदकाल मे संगीत चार स्वरों में था। और ईश्वर प्राप्ति के लिए ओंकार का उपयोग किया गया। संगीत की उत्पत्ति सामवेद से की गयी है। इसके लिये किसी भी लोगों में मतभेद नहीं है।

सामवेदादिदं गीतं संजग्राह पितामहः।

सामवेद ये ब्रह्मदेव ने निर्माण नही किया परंतु उन्होंने वो ग्रहण किया। सामवेद ही संगीत का मूल आधार है। सामवेद का गायन चार प्रकारों से किया जाता है।

1. ग्रामगेयगान 2. अरण्यगान
3. उहगान 4. उह्यगान

साममाना द्रुतं विष्णुः प्रसीदत्यमराधिपः। न तथा यज्ञज्ञानायै सत्य मेतन्महामुने॥

महषि नारदजी की संहिता में लिखा है कि, भगवान विष्णु यज्ञ और दान से प्रसन्न नहीं होते, परंतु सामगायन से बहुत ही जल्दी प्रसन्न होते हैं। भगवान विष्णु नारदजी को कहते हैं नाहंवसामि वैकुंठे योगिनां हृदयेनच। मदभक्ता यत्रगायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ॥

मैं वैकुंठ में या योगि लोगों के हृदय में नहीं रहता, तो जहाँ मेरे भक्त संगीत की आराधना करते हैं, वहाँ मैं रहता हूँ।

संगीत भावना की भाषा है। ओंकार रूप नाद से सष्टि का निर्माण हुआ। और वही नादतत्व सष्टि का अंतिम तत्व है। और उसी से ही संगीत की उत्पत्ति हुयी है।

ईश्वर प्राप्ति और मोक्षप्राप्ति के लिये संगीत की आराधना की जाती है। सामवेद ही सर्वश्रेष्ठ वेद है। और वही मैं हूँ वेदानां सामवेदोऽस्मि ऐसे भगवान श्रीकृष्ण ने गीता मे कहाँ है।

यज्ञ के चार ऋत्विज मे उद्गाता है। उससे ही यज्ञ पूरा हो सकता है। वेदों का सबसे पवित्र मंत्र गायत्री ये छंद है। जिसका गायन किया जाता है। इसलिये उसे गायत्री कहाँ जाता है। और ऋषि ही इस यज्ञ का गायक होगा अग्नि को ही उन्होंने संगीत की उपमा दी है।

उपनिषद काल के बाद भरतमुनि का नाट्यशास्त्र ग्रंथ आया है। उसके बाद संगीत रत्नाकर ग्रंथ आया। रागांग, भाषांग, क्रियांग, उपांग ऐसे चार भेद है।

16वीं सदी में संगीत उच्च शासन पर विराजमान था और आज 21वीं सदी में संगीत कला प्रगति के पथ पर है।

निष्कर्ष : संगीत कला शिवशक्ती से ही निर्मित है। मनःशांति के लिये संगीत का उपयोग किया जाता है।

संगीत सम्राट तानसेनजी के संगीत का प्रभाव ये भारतीय संगीत का सर्वश्रेष्ठ सम्मान है।

संगीत कला में प्राचीन कला से अब तक कालामान के अनुसार परिवर्तन हो गया है। और इस कला मे लवचिकता भी है। आज भी रिमिक्स का जमाना है।

The Art of Music still exists Because It is variable and flexible.

मैं इस कला के आगे नतमस्तक

संदर्भ ग्रंथ

1. संगीत विशारद–वसंत
2. भारतीय संगीत–एक चिकित्सक अभ्यास डॉ. विजयालक्ष्मी वर्वे
3. संगीतशास्त्र परिचय–डॉ. महोना मार्डीकर

Lord Shiva as Hanuman Avatar in Thai Ramkien

Dr. Jitendra Pratap Singh

Asst. Professor (History) New Standard College Of Higher Education Raebareli

Lord Shiva is considered as the supreme God in the Hinduism. For setting Up an ideal work on the earth in front of his creatures he had taken variety of the Avatars an incarnations Some of his avatars are related to protecting his devotees from the devils and proud Gods as Well. How ever, Five avatars of all his incarnations are hideously Important as well as assumed to be the most valuable and effective for his devotees

Lord Shiva took birth on the earth as the **elven Rudras** from the Kashyap wife's **(Surabhi)** womb. These forms of the eleven Rudras are associated with the battles with demos in the past in order to save the people and Gods.The incarnateions of demos .

Hanuman avatars is considerd as the Supreme avatar of him Lord Shiva has taken this avatar during the time Lord Rama to present a Good example of the Lord and Bhakt in front of the people.

Hanuman the hindu Monkey God, is one of the most celebrated and worshipped figures in Indian Religion, but mention him out side of India and you are likely to be met with a blank stare. So who is Hanuman and what does he represent to the Hindu faith.

As is the case for many of India's gods. Several Stories are told explaining Hanuman's origin. In one Interpretation Shiva and Parvati dexcide to transform the selves in to monkeys and indulge in amorous games in the forest, As a result Parvati becomes pregnant , Shiva conscious of his godly responsibilites and desiring to confirm to the laws of Nature directs the god vayu to carry the offspring from **parvati's** womb to that of **Anjana** and **Apsara** with the form of a Monkey who has prayed to be granted a boy Child. In another version of the story. He is the son of the king and Queen of the Monkey.

Many stories are also told of Hanuman's Childhood. As the Son of Shiva and a Monkey. Hanuman is Vanriously described as spirited, restless, energetic and inguisitve, one point all the major text agree on his mischievous nature.

As a youth Hanuman often abused his powers to pester the saints and holymen living in a nearby forest, with

tricks such as beard pulling and the dousing of sacred fives.

Lord Hanuman is the 11th Rudra Avatar of Lord Shiva and since Lord Shiva is known as the destructor of troubles (Sanket Mochan) As per the Valmiki Ramayana. It is said that **Anjana** performed intense prayers for 12 Long Years and pleased Lord Shiva to get the blessing for a child. Lord Hanuman is there fore, a result of Lord shiva's blessing. But Lord Hanuman is also known as P{awan Putra or **vayu putra.** There are three different notions about his birth where the lord of winds had a role to play.

When **Anjana** was praying to Lord Shiva for a Child, King Dashratha, of Ayodhya was performing a **putrakama Yagna** to have Children. After the Yagna. The Sacred pudding was the prasadam that was to be distributed amongst his three wives. But by same divine power, a kite snatched a apart of the pudding and the wind took the kite to wards anjana in the forest she was praying in Anjana took the pudding deliverd to her by vayudev and consumed it, due to Which Lord Hanuman was born.

In another version it is said that Anjana and Kesari praayed to lord Shiva for a Child and by Lord Shiva instructions, **Vayudev** Transferred his male energy in to Anjana's womb. Hense Lord Hanuman is known as Vayuputra and an incarnation of Lord Shiva.

To Understand Hanuman's birth, we must go back long ago when the gods churned a great ocean of milk. many treasures began to surface and a great battle was fought between the gods and demons over the vessel Containing the Amrita Nectar. The demons managed to snatch up the vessel. When they saw what happened, the gods went to Lord Vishnu and asked him to do some Thing Lord Vishnu took on the beautiful feminine from **Mohini** so that he could infiltrate their castle and distract the demons long enough for the gods to drink the nectar. Vishnu did so and created multiple women to trick the demons. The demons snateched up the women and took them to The nether world. The God came and drank the nectar, and the demons returned. When they saw what had happend they were enraged and another battle ensued.

The gods won the battle and returned home with the rectar. When Lord Shiva heard of battle, he wanted to see this Moahini for him-self. When he did, Shiva became svery attracted to **vishnu's** beauty Shiva released his seed on to the ground. With the permissin of Lord Shiva, The Saptarishis or seven sages placed Shiva's seed inside the womb of Anjani who had been praying dilligently to Lord Shiva, and so, the great and mighty Hanuman Came into being. **Shivpurana** tells us about the origin of Hanuman as follows.

With love of Rama Shiva also used to help him. Once Shiva saw Vishnu in the form of **Mohini** and fell in love with her. Consequently, his semen. intended for doing the work of Rama, fell down. The seven Risis (Saages) Collected the semen on a leaf and poured it in the ear of **Anjani,** Gautama's daughter and, as a result, Anjani gave birth to a son. He was named Hanuman.

Still as a Child, Hanuman was very Powerfull. Seeing the disc of the sun in early morning, he mistook it for a small fruit and started to eat it. God asked him not to do so and granted him boons on knowing that he was the incarnation of Shiva.

In the **Valmiki Ramayana** the origin of **Hanuman** is as follows an Aapsaras **Punjikasthala,** also known as Anjana was cursed to be a female Monkey. She was the daughter of a Monkey King **Kunjara** and wife a **Monkey Kesari**. One day She dressed Beautifully and walked on top of a mountain, Vayu, the wind-god pulled her clothe away and was enchanted by the beauty of her naked body. He embraced. Her amorously and told her that because of his embrace she would have a powerful Son. As a result **Anjana** gave birth to **Hanuman**. As a Child he thought that the sun was some kind of fruit so he left to grab it. **Indra** threw his thunderbold to prevent him from doing so. He fell down on a Mountain uncon Scious and his Jaws broke. As a result, he was named Hanuman Vayu is the as Paranyms of Rudra.

The Origin of Hanuman according to the **Ramakirti (Ramkian),** the Thai version of The Ramayana, is as follows- After having established him self firmly on the Throne of **Khidkhin (Kiskindha) Phali (Valin)** was introduced to a powerful Monkey Called Hanuman who is actually his own nephew, being the son of his step sister **Svaha. Svaha** was the daughter of Kala-acna (Ahalya), Wife of Sage Gotama (Gautama) were born from Indra and Aditya respectively. **Svaha** was Crused by **kala-acna** to stand on one beg with one hand holding a branch of a tree. She would be tree from the curse only when she gave birth to a son. Isuan (Shiva) took pity on her and took this opportunity to help Rama in his fight against demons.

He ordered wind-god, Vayu, to put his own (Shiva's) power and the power of all divine weapons in the mouth of **Svaha**. All the Combind powers resulted in forming Hanuman, being born through the mouth of Svaha and having Vayu as his father. **Sivas Trisula** (Trident) become his limbs and also his handy weapon, stuck to his chest, which could be talken oul only time he needed, His mother told his that he had some special invisible marks on his body namely two ear rings, diamond canines, white coiled hair, only an incarnation of **Narayana (Vishnu)** could, see them, whom he should serve devotedly. Svaha was released from Kala-acna's curse after giving birth to **Hanuman.** Once Hanuman play mischievousiy as a monkey damaging the gards of goddess **uma.**

She cursed him so as to reduce his strength to half and the curse could become ineffective when Rama fondled him all the way from head to tail.

Vayu took Hanuman to meet Shiva who bestowed upon him the boon of immortality and towht him how to change his from and disappear at will Shiva sent for kakas **(Valin) and Sugriva** to come to mount **Kailas (Kailasa)** so as to intro duce Hanuman, There nephew, to them. He also created to Monkey named **chomphuphan (Jambavan)** and gave

him to Valin as his faster child. There after chomphuphan and Hanuman aceompanied valin and **Sugriva to Kiskindha**.

The account of the origin of Hanuman in the Ramkirti (Ramakien), The Thai version of Ramayana, Seems to have strong influence of Savism,.

Mahabhagavata (Devi) Purana States the Shiva took the form of Hanuman to assist Rama in his search for Sita . It also states that Sita is the daughter of **Mandodari.** Which agrees with the **Thai Ramakien.**

The episode on the rescue of Rama from the Captivity of **Maiyarab (Mahiravana)** by Hanuman in the **Ramakien** is found also in the Sivapurana in which Hanuman also killed **Mahiravana** in the Rama's war with Lanka and rescued Rama and **Laksmana** but it does not exit in the **Valmiki Ramayana**. The episode in the Ramakien There fore must have derived directly or indirectly from the **Purana**, in spite of the fact that they are different in particular details.

It is interesting to note that the protecting amulets and tattoos that have Hanuman as the object are also quiet poputar among some sections of Thai people.**Hanuman** reflect that of Siva.

This reflects the tantric in-fluence in the social life of the thais through the Thai **Ramakien**. Trantric practice is also one of the features of **Saivism**, Even though many plots of the Thai **Ramamkien** agree with **Valmiki Ramayana** but it may not be directly derived from the latter.

It might have been gathered from different sources both from written documents and from oral Traditions. Hanuman of the Ramakien seen to be influence by **saivism** as he was born through Shiva who commanded wind-god to put siva's power and the power of other divine weapons in the mouth of svaha so as to make her give birth to Hanuman. This reflects the account given in **sivamahapurana** and other literary sources. As a result the characteristic and some traits of thai **Ramakien's.**

संगीत में शिव-शक्ति का वर्णन

डॉ. ज्योति विश्वकर्मा

असिस्टेंट प्रोफेसर (संगीत विभाग, जगद्गुरु रामभद्राचार्य विकलांग विश्वविद्यालय, चित्रकूट उत्तर प्रदेश)

हिन्दू धर्म का नृत्य, कला, योग और संगीत से अटूट संबंध रहा है। हिन्दू धर्म की मान्यता है कि ध्वनि और शुद्ध प्रकाश से ही ब्रह्मांड की उत्पत्ति हुई है। आत्मा इस जगत का निमित्त है। हिन्दू धर्म में कुछ ध्वनियों को पावन और रहस्यमयी स्वीकार किया गया है, जैसे—मंदिर की घंटी, शंख, बांसुरी, वीणा, मंजीरा, करतल, पुंगी या बीन, ढोल, नगाड़ा, मृदंग, चिमटा, तुनतुना, घाटम, दोतार, तबला और डमरू इत्यादि।

प्राचीन काल सेभारत में संगीत की अबाध परंपरा रही है। गिने-चुने देशों में ही संगीत की ऐसी पुरानी एवं इतनी समृद्ध परम्परा पायी जाती है। माना जाता है कि संगीत का प्रारम्भ सिंधु घाटी सभ्यता के काल में हुआ हालांकि इसका एकमात्र प्रमाण है उस समय की एक नृत्य बाला की मुद्रा में कांस्य मूर्ति और नृत्य, नाटक और संगीत के देवता रूद्र अथवा शिव की पूजा का प्रचलन भी है। इस सभ्यता के पतन के पश्चात् वैदिक संगीत का काल प्रारम्भ हुआ जिसमें संगीत की शैली में भजनों और मंत्रों के उच्चारण से ईश्वर की पूजा और अर्चना की जाती थी।

वैदिक युग में 'संगीत' समाज में स्थापित हो चुका था। सबसे प्राचीन ग्रन्थ ऋग्वेद में आर्यों के आमोद-प्रमोद का मुख्य साधन संगीत को बताया गया है। अनेक वाद्यों का आविष्कार भी ऋग्वेद के समय में बताया जाता है। 'यजुर्वेद' में संगीत को अनेक लोगों की आजीविका का साधन बताया गया, फिर गान प्रधान वेद 'सामवेद' आया, जिसे संगीत का मूल ग्रन्थ माना गया। 'सामवेद' में उच्चारण की दृष्टि से तीन और संगीत की दृष्टि से सात प्राकार के स्वरों का उल्लेख है। 'सामवेद' का गान (सामगान) मेसोपोटामिया, फेल्डिया, अक्कड़, सुमेर, बवेरु, असुर, सुर, यरुशलम, ईरान, अरब, फिनिशिया व मिस्र के धार्मिक संगीत से पर्याप्त मात्रा में मिलता-जुलता था।

उत्तर वैदिक काल के 'रामायण' ग्रन्थ में भेरी, दुंदभि, वीणा, मृदंग व घड़ा आदि वाद्य यंत्रों व भँवरों के गान का वर्णन मिलता है, तो 'महाभारत' में कृष्ण की बाँसुरी के जादुई प्रभाव से सभी प्रभावित होते हैं। अज्ञातवास के दौरान अर्जुन ने उत्तरा को संगीत-नृत्य सिखाने हेतु बृहन्नला का रूप धारण किया। पौराणिक काल के 'तैत्तिरीय उपनिषद', 'ऐतरेय उपनिषद', 'शतपथ ब्राह्मण' के अलावा 'याज्ञवल्क्य-रत्न प्रदीपिका', 'प्रतिभाष्यप्रदीप' और 'नारदीय शिक्षा' जैसे ग्रन्थों से हमें उस समय के संगीत का परिचय मिलता है। चौथी शताब्दी में भरत मुनि ने 'नाट्यशास्त्र' के छः अध्यायों में संगीत पर ही चर्चा की है। इनमें विभिन्न वाद्यों का वर्णन, उनकी उत्पत्ति, उन्हें बजाने के तरीकों, स्वर, छन्द, लय व विभिन्न कालों के बारे में विस्तार से लिखा गया है। इस ग्रन्थ में भरत मुनि ने गायकों और वादकों के गुणों और दोषों पर भी खुलकर लिखा है। बाद में छः राग 'भैरव', 'हिंडोल', 'कैशिक', 'दीपक', 'श्रीराग' और 'मेध' प्रचार में आये। पाँचवीं शताब्दी के आसपास मतंग मुनि द्वारा रचित महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ 'वृहददेशी' से पता चलता है कि उस समय तक लोग रागों के बारे

में जानने लगे थे। लोगों द्वारा गाये-बजाये जाने वाले रागों को मतंग मुनि ने देशी राग कहा और देशी रागों के नियमों को समझाने हेतु 'वृहद्देशी' ग्रन्थ की रचना की थी। मतंग ही पहले व्यक्ति थे जिन्होंने अच्छी तरह से सोच-विचार कर पाया कि चार या पाँच स्वरों से कम में राग बन ही नहीं सकता। पाणिन के 'अष्टाध्यायी' में भी अनेक वाद्यों जैसे मृदंग, झाईर, हुड़क तथा गायकों व नर्तकों सम्बन्धी कई बातों का उल्लेख है। सातवीं आठवीं शताब्दी में 'नारदीय शिक्षा' और 'संगीत मकरंद' की रचना हुई। 'संगीत मकरंद' में राग में लगने वाले स्वरों के अनुसार उन्हें अलग-अलग वर्गों में बाँटा गया है और रागों को गाने-बजाने के समय पर भी गम्भीरता से विचार किया गया गया है।

ग्यारहवीं शताब्दी अतिरिक्त भारतीय महाकाव्यों– रामायण और महाभारत रचना में संगीत का मुख्य प्रभाव रहा है। भारत में सांस्कृतिक काल से लेकर आधुनिक युग तक आते-आते संगीत की शैली और पद्धति में अभूतपूर्व परिवर्तन हुआ है। भारतीय संगीत में यह मान्यता रही है कि संगीत के आदि प्रेरक शिव और मां सरस्वती हैं। इसका तात्पर्य यही जान पड़ता है कि मानव इतनी उच्च कला को बिना किसी दैवी प्रेरणा के, केवल अपने बल पर, विकसित नहीं कर सकता था।

सर्वप्रथम शिव ने ही धरती पर जीवन के प्रचार-प्रसार का प्रयास किया इसलिए उन्हें आदि देव भी कहा जाता है। आदि का अर्थ प्रारंभ या शुरुआत। इसलिए शिव को 'आदिनाथ' भी कहा जाता है। आदिनाथ होने के कारण उनका एक नाम आदिश भी है। भगवन शिव अपने हाथों में डमरू धारण किए हैं। सृष्टि के आरंभ में जब देवी सरस्वती प्रकट हुई तब देवी ने अपनी वीणा के स्वर से सृष्टि में ध्वनि को जन्म दिया। लेकिन यह ध्वनि सुर और संगीत विहीन थी। उस समय भगवान शिव ने नृत्य करते हुए चौदह बार डमरू बजाए और इस ध्वनि से व्याकरण और संगीत के छंद, ताल का जन्म हुआ। कहते हैं कि डमरू ब्रह्म का स्वरूप है जो दूर से विस्तृत नजर आता है लेकिन जैसे-जैसे ब्रह्म के करीब पहुंचते हैं वह संकुचित हो दूसरे सिरे से मिल जाता है और फिर विशालता की ओर बढ़ता है। सृष्टि में संतुलन के लिए इसे भी भगवान शिव अपने साथ लेकर प्रकट हुए थे।

हिंदू धर्म में सबसे महत्वपूर्ण देवताओं में से एक शिव हैं। वे त्रिदेवों में एक देव हैं। इन्हें देवों के देव भी कहते हैं। इन्हें भोलेनाथ, शंकर, महेश, रुद्र, नीलकंठ, गंगाधार के नाम से भी जाना जाता है। तंत्र साधना में इन्हे भैरव के नाम से भी जाना जाता है। इनके नाम पर ही भैरवी राग का प्रतिपादन किया गया है। वेदों में इनका नाम रुद्र है। ये व्यक्ति की चेतना के अन्तर्यामी हैं। इनकी अर्धांगिनी (शक्ति) का नाम पार्वती है। हमारे देश में शिव और पार्वती(शक्ति) का संबंध संगीत से रहा है शिव और पार्वती भाव मय गान और नृत्य के लिए प्रसिद्ध हैं। विशेषकर शिव को नृत्य और गायन के अधिक समीप माना गया है पार्वती के नृत्य-संगीत के विषय में नहीं कहा जाता भगवान शिव के एक हाथ में डमरु है। शिव आनंद और उल्लास में आकर नृत्य करते हैं तथा नृत्य करते करते डमरु भी बजाते हैं।

ताण्डव नृत्य भगवान शिव द्वारा किया जाने वाला अलौकिक नृत्य है। ऐसा माना जाता है कि इसके अंदर भगवान की शक्तियां त्राहि मचाती हैं यह नृत्य शिव काली जैसे देव करती हैं शिव की तीसरी आंख के खुलने से हाहाकार हो जाता है। तांडव के संस्कृत में कई अर्थ होते हैं। इसके प्रमुख अर्थ हैं उद्धत नृत्य करना, उग्र कर्म करना, स्वच्छन्द हस्तक्षेप करना आदि। भारतीय संगीत में चौदह प्रमुख तालभेद में वीर तथा बीभत्स रस के सम्मिश्रण से बना तांडवीय ताल का वर्णन भी मिलता है।शास्त्रों में प्रमुखता से भगवान् शिव को ही तांडव स्वरूप का प्रवर्तक माना जाता है। शिव को संगीत के जनक के रूप में स्वीकार किया जाता रहा है।

भगवान भोलेनाथ दो तरह से तांडव नृत्य करते हैं। पहला जब वो गुस्सा होते हैं, तब बिना डमरू के तांडव नृत्य करते हैं। लेकिन दूसरे तांडव नृत्य करते समय जब, वह डमरू भी बजाते हैं तो प्रकृति में आनंद की बारिश होती थी। ऐसे समय में शिव परम आनंद से पूर्ण रहते हैं। लेकिन जब वो शांत समाधि में होते हैं तो नाद करते हैं। नाद और भगवान शिव का अटूट

संबंध है। दरअसल नाद एक ऐसी ध्वनि है जिसे 'ऊं' कहा जाता है। पौराणिक मत है कि 'ऊं' से ही भगवान शिव का जन्म हुआ है। संगीत के सात स्वर तो आते-जाते रहते हैं, लेकिन उनके केंद्रीय स्वर नाद में ही हैं। नाद से ही 'ध्वनि' और ध्वनि से ही 'वाणी की उत्पत्ति' हुई है। शिव का डमरू 'नाद-साधना' का प्रतीक माना गया है। नाट्य शास्त्र में उल्लेखित संगीत, नृत्य, योग, व्याकरण, व्याख्यान आदि के प्रवर्तक शिव ही हैं। शिवमहापुराण भी 29 उप-पुराणों में से एक है। इसमें 24,000 श्लोक हैं। जिनमें शिव का संगीत के प्रति स्नेह के बारे में विस्तार से वर्णन किया गया है। वर्तमान में शास्त्रीय नृत्य से संबंधित जिनती भी विद्याएं प्रचलित हैं। वह तांडव नृत्य की ही देन हैं। तांडव नृत्य की तीव्र प्रतिक्रिया है। वहीं लास्य सौम्य है। लास्य शैली में वर्तमान में भरतनाट्यम, कुचिपुडी, ओडिसी और कत्थक नृत्य किए जाते हैं यह लास्य शैली से प्रेरित हैं जबकि कथकली तांडव नृत्य से प्रेरित है।

इस प्रकार से भगवान शिव और उनकी शक्ति पार्वती का भारतीय संगीत से अटूट संबंध रहा है बिना शिव शक्ति के भारतीय संगीत की परिकल्पना ही अधूरी है आदि नाथ प्रवर्तक भगवान शिव ही हैं। भारतीय संगीत शिव के नृत्य और वादन से परिपूर्ण है।

संदर्भ ग्रंथ

1. शर्मा, डॉ. रामविलास, संगीत का इतिहास और नवजागरण की समस्याएँ
2. m-patrika.com
3. उपाध्याय, भगवतशरण, भारतीय संगीत की कहानी
4. रचियत्री देवकी, संगीत प्रभा
5. भातखण्डे पं. बिष्णु नारायण, हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति

संगीत में शिव-शक्ति

प्रा. के.ओ. जिरापुरे

(असि. प्रोफेसर संगीत) स्व. सी.एम.कढी. कला महा., अचलपूर, कॅम्प., जिला-अमरावती (महाराष्ट्र)

सारांश

भारतीय संगीत का इतिहास बहुत प्राचीन है। उसकी प्राचीन परंपरा का अध्ययन करने के बाद में हमे यह पता लगता है की, भगवान शिव के ताण्डव-नृत्य से इसका उद्‌भव हुआ और इसके बाद ही कहा गया कि–

नादः धीनम् जगत

यही कारण है की, प्राचीन समय से अब तक हिंदुस्तानी संगीत हमारे आध्यात्मिक जीवन का अनिवार्य अंग है। हमारी कलात्मक अनुभूतियों को भी इस कला से बहुत प्रोत्साहन मिला है। यदि कला सौंदर्य उपासना का सजीव प्रतीक और माध्यम है, तो इसमें कोई संदेह नही कि हिंदुस्तानी संगीत हमारी आध्यात्मिक और रसात्मक भावनाओं को पूरी तरह समर्पित है। इसलिये जब हम उसके प्राचीन इतिहास का अध्ययन करते है, तो यह सिद्ध होता है की, संगीत की उत्पत्ति सृष्टि के साथ हुई। सत, चित्ता, आनंद स्वरुप ब्रम्हा ने अपने त्रिगुणात्मिका प्रकृति के द्वारा इस संसार की रचना की। भारतीय परंपरानुसार संगीत का संबंध वेदों से मान्य है। वेद का बीज मंत्र है 'ओउम'। ओउम के तीन अक्षर अ, उ, और म तीन ईश्वरीय शक्ति के द्योतक है।

अ. बह्मा की शक्ति का द्योतक है।
उ. विष्णु की शक्ति का द्योतक है।
म. महेश की शक्ति का द्योतक है।

ब्रह्म आनंद स्वरुप है। इस आनंद तत्व से ही संगीत शब्द की उत्पत्ति हुई। ब्रह्म ने प्रथम अपने को तीन रूपों मे प्रकट किया ब्रह्म, विष्णु और महेश इन तीनों ने क्रमशः सरस्वती, लक्ष्मी व काली इन शक्तियों से इस सत्, चित्, आनंदमय विश्व की उत्पत्ति की। इन त्रिशक्तियों का पुंज ही त्रिमूर्ति परमेश्वर है। इन तीन अक्षरों के संयोग से 'ओउम' शब्द निर्मित हुआ है। 'ओउम' शब्द ही संगीत का जनक है। समस्त कलायें 'ओउम' मे ही निहित है। और यही तीन शब्द में स्वर, लय और ताल का समावेश है जो की हमारे संपूर्ण संगीत का आधार है। ब्रह्मा के चार मुख है। और यही चार मुखों से क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद और सामवेद की उत्पत्ति हुयी है।

इन चारों वेदो में से सामवेद को संगीत का उद्‌गम स्थल माना जाता है। उसके सभी मंत्र गेय उदात्त, अनुदात्त और स्वरित इन तीनों स्वरों में गाए जाते है। सामवेद के भाष्यकारों ने यह कहा है की, इन तीन स्वरों में सा रे ग म प ध नि यह सात स्वरों का समावेश है।

उदात्ते निषादगान्धारावनुदात्ते ऋषभधैवतौ।
स्वरिते प्रभवाहोते त्तउजमध्यमपंचमाः॥

संगीत मे शिव शक्ति का योगदान–

शास्त्र में 64 कलाओं का वर्णन मिलता है। उनमे संगीत कला को सर्वाधिक लोकप्रिय कला कहा गया है क्यों की यह कला मनुष्य हृदय पर

तात्कालिक प्रभाव डालती है। पं. शारंगदेव अपने ग्रंथ संगीत रत्नाकर में इस प्रकार का उल्लेख करते है की, संगीत के द्वारा ईवर प्रसन्न होते है, उन्होंने प्रथम अध्याय में इस प्रकार उल्लेख किया है।

गीतेन प्रीयते देवः सर्वज्ञः पार्वतीपतिः।
गोपीपतिरन्तोपि वंश-ध्वनि - वंशगतः। 26।
सामगीत्तिरतो बह्म वीणा सक्ता सरस्वती। 27।

संगीत की परंपरा प्राचीन है। पुराणों में भी इसका उल्लेख मिलता है। सर्वप्रथम ओउम शब्द आकाश में गूँज उठा। और यही गूँज से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल और उसके बाद पृथ्वी की रचना हुयी। कहा जाता है की ओउम शब्द प्रकृति के अणु-परमाणु में समाया गया हुआ है। और यही अनहत नाद है जिसे सुनने के लिये तपस्वी लोग ध्यान लगाकर बैठते है।

महादेवजी ने तांडव नृत्य के अंत मे अपने डमरु से चौदा सूत्रों को उत्पन्न किया चौदा सूत्रों में प्रथम सूत्र है अ, इ, उ, ण और इसका प्रथम अक्षर अकार है, भगवतगीता में कृष्ण भगवान कहते है

''अक्षराणामकारोस्मि''

इसका तात्पर्य यह है की, मैं अकार हूं

संगीत जगत में ऐसी धारणा है की, एक शुभ तिथि को महादेव जी ने देवताओं और ऋषियों की सभा में भारतीय संगीत को जन्म दिया। इसी सभा में महादेव जी ने तांडव नाचते समय अपने पाँच मुखों से पाँच राग आलापे और पार्वतीजी ने लास्य नाचते हुये छटा राग नटनारायण सुनाया शिवमत से छह रागों के नाम क्रमशः भैरव, श्री, बसंत, पंचम, मेघ और नटनारायण है। आगे जाने के बाद यह भी मत प्रवाह सामने आता है की, संगीत को प्रारंभिक रूप देने के बाद महादेवजीने डमरू, तानपूरा और वीणा वाद्य भी बनाये। संगीत का वास्तविक रुप स्थिर करने के लिये उन्होंने स्वरों पर काल का नियंत्रण लगाया, जिससे तालों का निर्माण हुआ।

पौराणिक ग्रंथ के कथनानुसार प्रद्रोकाल मे देवगण रजतगिरि कैलाा पर नटराज शिव के तांडव मे सम्मिलित हुए उसी समय देवी पार्वतीने जो उस कार्यक्रम मे अध्यक्षता की पद थी अपने रत्नसिंहासन पर बैठकर तांडव नृत्य करने की अनुमती प्रदान की। उसी समय वहा नारद महामुनीका आगमन हुआ और वे भी उस तांडव नृत्य मे सम्मिलित हुये। जब भगवान शिव तांडव नृत्य करने लगे तब सरस्वती देवी विणा बजाने लगी, इंद्रदेव बासुरी बजाने लगे, स्वयं ब्रह्मदेव हाथ से ताल देने लगे, और लक्ष्मीदेवी गायन करने लगी, विष्णु भगवान मृदंग बजाने लगे, तथा बाकी देवगण, एवं गंधर्व, यक्ष, सिद्ध, अप्सराएँ स्तुति करने में लीन हुये। और जब तांडव नृत्य संपन्न हुआ तब भगवती पार्वती देवी बहुत प्रसन्न हुयी, तो उन्होने भगवान शिव को पुछा कि आप क्या चाहते है? तो पुरे देवों ने भगवती पार्वती से पूछा कि, इस संगीत का आनंद केवल हम लोग ही लेते हैं, पर मृत्युलोक में जो हमारे हजारों भक्त हैं, वे इस आनंद से वंचित रहते हैं। अतः मृत्युलोक भी इस आनंद का मजा ले सकें ऐसा कुछ कीजिये। तो भगवान शिव ने कहा कि, अब मैं तांडव नृत्य की जगह लास्य करूंगा। इस बात को सुनकर पार्वती देवी ने एवमस्तु कहा और देवगणों से मनुष्य अवतार लेने को कहा तथा स्वयं भगवती पार्वती देवी जिन्हें आद्या महाकाली कहते हैं उन्होंने शामसुंदर का अवतार लेकर श्री वृन्दावन धाम में आयी और प्रत्यक्ष शिवजी ने राधा जी का अवतार लेकर ब्रज में देवदुर्लभ 'रासमंडल' की आयोजना की और वही पर 'नटराज' की उपाधी श्यामसुंदर को दी गयी।

पौराणिक ग्रंथ में भगवान शिव को नृत्य का आदि प्रवर्तक माना गया है। ऐसा भी उल्लेख मिलता है कि, शिवजी के पदाघातों से पृथ्वी और हस्त संचालन से नक्षत्र-मंडल गतिमान होता है। इसीलिये कहा गया है कि–

'नृत्यमयं जगत'

अर्थात यह समस्त संसार ही नृत्यमय है। शिवजी ने नृत्य करते हुए जिन मुद्राओं का अविष्कार किया नंदेश्वर ने एक-एक करके उन्हें लय-ताल में

बिठाकर उनका अभ्यास किया। भरत मुनि ने ब्रह्मा जी के आज्ञानुसार कैलाश पर्वत पर शिवजी के समक्ष जब 'त्रिपुरदाह' नाम का नाटक प्रस्तुत किया तो भगवान शंकर ने इस नाट्य में नृत्य की योजना करने का सुझाव दिया और नंदेश्वर को आदेश दिया कि वे भरत मुनि को शिक्षा प्रदान करें। इस प्रकार तंडु मतलब नंदेश्वर के द्वारा सिखाए जाने के कारण ही भगवान शंकर का प्रसिद्ध नृत्य तांडव कहलाया। उसके उपरांत भरत मुनि ने इसकी शिक्षा अपने पुत्रों को दी जिनसे यह नृत्य मृत्यु लोक में प्रचलित हुआ।

शिवजी का नृत्य देखकर भगवती पार्वती ने भी सुकोमल अंगहारों से एक नृत्य की रचना की जिसे लास्य कहा गया। और वह नृत्य उन्होंने बाणासुर की पुत्री उषा को सिखाया। और जब उषा का विवाह भगवान कृष्ण के प्रपौत्र अनिरुद्ध से हुआ तब उषा ने वह नृत्य द्वारिका के स्त्रियों को सिखाया। इस प्रकार पार्वती द्वारा निर्मित लास्य नृत्य पृथ्वी पर अवतरित हुआ।

निष्कर्ष

धार्मिक मतानुसार भगवान शंकर को संगीत का सृष्टिकर्ता माना गया है। अैसा भी पढने को मिलता है कि, ब्रह्मा ने यह कला शिव को दी और शिव के द्वारा सरस्वती को प्राप्त हुयी। इसीलिये सरस्वती को वीणा पुस्तक धारिणी कहकर संगीत साहित्य की अधिष्ठात्री माना गया है। सरस्वती ने संगीत कला का ज्ञान नारद को दिया और नारद ने स्वर्ग के गंधर्व, किन्नर तथा अप्सराओं को संगीत शिक्षा दी। वहाँ से ही भरत, नारद और हनुमान, आदि ऋषि संगीत कला में पारंगत होकर पृथ्वी पर संगीत कला के प्रचारार्थ अवतीर्ण हुये।

उपरोक्त विवेचन पर से एवं वेदों मे बताये कथनानुसार भगवान शिव एवं भगवती पार्वतीजी इन्हें ही संगीत का आविकारक, प्रचारक एवं प्रगतिशील बनाने का श्रेय जाता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. भारतीय संगीत की परंपरा, लेखक–डॉ. हरीकिशन गोस्वामी
2. हमारा आधुनिक संगीत, लेखक–डॉ. सुशीलकुमार चौबे
3. संगीत विशारद, लेखक–वसंत

वैश्विक सन्दर्भ में शिव-शक्ति

डॉ. कामना अवस्थी

एम.ए., पी.एच.डी., प्रवक्ता-एस.एन.जी. गर्ल्स डिग्री कॉलेज,
जिला-उन्नाव-209801 (उत्तर प्रदेश)

शिवशक्ति और वैदिक सन्दर्भ–

शिव ही ब्रह्म है

श्वेताश्वेतरोपनिषद के प्रारम्भ में ब्रह्म के संबंध में जिज्ञासा उठायी गई है पूछा गया है कि जगत का कारण जो ब्रह्म है वह कौन है–

किम् कारणम् ब्रह्म '1 ।1

श्रुति ने आत्रे चलकर इस ब्रह्म शब्द के स्थान पर 'रूद्र' और शिव शब्द का प्रयोग किया है।

एको हि रूद्रः ।3 ।2

स.....शिवः ।3 ।11

समाधान में वताया गया है कि जगत का कारण स्वभाव आदि न होकर स्वयं भगवान शिव ही इसके अभिन्न निमित्तोपादान कारण हैं–

एको हि रूद्रो न द्वितीयाय तस्थुर्य इमाल्लोकाशीनात ईशनीभिः प्रत्यङजनातिष्ठति संचुकोचान्तकाले संसृज्य विश्वा भुवन' ानि गोपा।।3 ।2

अर्थात जो अपनी शासन शक्तियों के द्वारा लोकों पर शासन करते हैं। वे रूद्र भगवान एक ही हैं। इसलिए विद्वानों ने जगत के कारण के रूप में किसी अन्य का आश्रयण नहीं किया है। समस्त जीवों का निर्माणकर पालन करते हैं तथा प्रलय में सबको समेट भी लेते हैं।

इस तरह 'शिव' और 'रूद्र' ब्रह्म के पर्यायवाची शब्द ठहरते हैं। 'शिव' को रूद्र इसलिए कहा जाता है कि अपने उपासकों के सामने अपना रूद्र शीघ्र ही प्रकट कर देते हैं–

कस्मादुच्यतेरूद्रः ?यस्मादृषिभिः.....द्रुतमस्य रूपमुपलभ्यते। (अथर्वशिर0 उप04)

भगवान शिव को रूद्र इसलिए भी कहते हैं क्योंकि ये रूत् अर्थात दुःख को विनष्ट कर देते हैं– रूत्-दुःखम् द्रावयति नाशयति रूद्रा।

तत्व एक है नाम अनेक

शिवतत्व तो एक ही है–एकमेवाद्वितीयं ब्रह्मा (छा0उप0 6 ।2 ।1) उस अद्वय तत्व के अतिरिक्त और कुछ नहीं है–'कमेव सत् ।ष्नेह नानास्ति किंचन।'(वृह0उ04 ।4 ।19) किन्तु एस अद्वय के नाम अनेक होते हैं–'एकं सद् विप्रा वहुधा वदन्ति (-0 1 ।164 ।46) अर्थात् उस अद्वय तत्व को विज्ञ गण अनेक नामों से पुकारतें हैं।

रूप भी अनेक

नाम की तरह उस अद्वय तत्व के रूप भी अनेक होते हैं ऋग्वेद ने 'पुरूरूपः' (2 ।12 ।9) लिखकर इस तथ्य को स्पष्ट कर दिया है। दूसरी श्रुति ने उदाहरण देकर समझाया है कि एक ही भगवान अनेक रूपों में कैसे आ जाते हैं–

अग्निर्यथैको भुवं प्रविष्टो
रूपं रूपं प्रतिरूपं बभूव
एकस्तथा सर्वभतान्तरात्मा
रूपं रूपं प्रतिरूपो बहिश्च ॥

जैसे कण कण में अनुस्यूत अग्नि एक ही है किन्तु अनेक यपों में हमारे सामने प्रकट होती है वैसे भगवान शिव एक होते हुए भी अनेक रूपों में प्रकट

होते हैं। लोक कल्याण के लिए सद्योजात वामदेव तत्पुरुष अघोर ईशान आदि अनेक अवतार रूपों में वे प्रकट हुए हैं। (शिवपु. शतरूद्र संहिता)

अनेक रूप नाम क्यों?

जिज्ञासा होती है कि शिव एक ही है तब वे अनेक नामों और अनेक रूपों को क्यों ग्रहण करते हैं? इसके उत्तर में श्रुति ने कहा है–

प्रयोजनार्थ रूद्रेण मूतिरेका त्रिधा कृता (रूद्र हृदय उप. 15)

अर्थात प्रयोजनवश भगवान शिव अपनी अनेक मूर्तियां बना लेते हैं अब देखना है कि आखिर वह कौन सा प्रयोजन है जिसके लिए वह अद्वय तत्व अनेक नामों और रूपों को ग्रहण करता है।

विविधता का कारण लीला

इसका समाधान ब्रह्मसूत्र से होता है। वहाँ बताया गया है कि लीला (क्रीड़ा) के अतिरिक्त इस सृष्टि रूप विविधता का और कोई प्रयोजन नहीं है–

लोकवत् तु लीलाकैवल्यम्।

अर्थात् वह अद्वय तत्व जो सृष्टि के रूप में आता है। उसका प्रयोजन एकमात्र लीला है। इसके अतिरिक्त सृष्टि का और कोई प्रयोजन नहीं है।

आप्तकाम की कामना व्याहत नहीं

प्रश्न उठता है कि ईश्वर तो आप्तकाम है अर्थात् उनकी सब इच्छा, पूर्ण रहती है फिर वे खेल की कामना कैसे कर सकते हैं? ईश्वर को 'आप्तकाम' कहना और फिर उनमें किसी कामना का कहना व्याहत है। हम लोगों को तो तरह-तरह के अभावों से जूझना पड़ता है जिनकी पूर्ति के लिए हम कामनाएं किया करते हैं। ईश्वर को तो किसी वस्तु का अभाव तो है नहीं, फिर वे कामना किसकी करेंगे? यह जिज्ञासा महात्मा विदुर को भी व्यग्र करती थी। उन्होंने मैत्रेयी जी से पूछा था–'ब्रह्मन्' भगवान तो शुद्ध बोध स्वरूप निर्विकसर और निर्गुण है। फिर उनके साथ लीला से ही गुण और क्रिष का संबंध कैसे हो सकता है। बालको में जो खेल की प्रवृत्ति होती है वह कामना प्रयुक्त होती है किन्तु भगवान तोअसंग है और नित्य तृप्त है फिर लीला के लिए संकल्प ही कैसे करेगे?

ब्रह्मन् कथं भगवतश्चिन्मात्रस्याविकारिणः
लीलयो चापि युज्येरन्निगुर्णस्य **गुणाः क्रियाः॥**
क्रिडायामुधमो **र्भस्य कामाश्चिक्रीडिषान्यतः।**
स्वतस्तृप्तस्य च कथं निवृतस्य सदान्यतः॥

लीला स्वरूप भूत

बात यह है कि ईश्वर प्रेम रूप है 'तस्मात प्रेमानन्दात्' (साम. उप.) और प्रेम क्रीड़ा, होती है क्योंकि लीला प्रेम का स्वभाव है। प्रेम अपने प्रेमास्पद पर सब कुछ न्योछावर कर देना चाहता है। वह अपने प्रिय को निरन्तर देखता ही रहे। वह कभी नहीं चाहता कि उसका प्रेमास्पद कभी उसकी आंखों की ओट में रहे प्रेम में इस तरह की अनगिनत लीलाएं चला करती हैं। शिव ही लीला स्थली और खेलने वाले भी बन गए।

किन्तु जब ईश्वर एक है अद्वितीय है तब देखा देखी और अर्पण का यह खेल किसके साथ खेलें और कहाँ रहकर खेलें?

इसकी पूर्ति के लिए सन्मय, चिन्मय और आनन्दमय प्रभु स्वयं स्थावर भी बन जाते हैं और जंगम भी। उनका स्थूल रूप है–ब्रह्माण्ड जो क्रीड़ास्थली का काम देता है–

विशेषस्तस्य देहोयं स्वविष्ठश्च स्थवीपसाम्।
यत्रेदं दृश्यते विश्वं भूतं भव्यं भवच्चसत्।।
(श्रीमदभाक्रवत 2।1।24)

अर्थात् यह ब्रह्माण्ड जिसमें भूत, वर्तमान और भविष्य की समस्त वस्तुएं दीख पड़ती हैं। भगवान का स्थूल से स्थूल शरीर है।

प्राकृत होने के कारण प्रारम्भ में यह ब्रह्माण्ड निर्जीव था। भगवान ने इसमें प्रवेशकर इसे जीवित कर दिया–'जीवो जीवेन जीवयत्' (श्रीमदभागवत्)। फिर वे विराट पुरुष के रूप में आये उसके बाद दो पैर वाले बहुत से शरीर बनाये और अंश रूप में इनमे भी प्रविष्ट हो गये।

पुरश्चक्रे द्विपदःपुरश्चक्रे चतुष्पदः।
पुरः स पक्षी भूत्वा पुरः पुरुष आविशत् ॥

इस तरह क्रीड़ास्थली भी तैयार हो गयी और खेल में भाग लेने वालों की भीड़ भी इकट्ठा हो गयी। इन प्राणियों के जो अनन्त पैर हैं अनन्त आंख और अनन्त सिर हैं ये सब उन्हीं के ब्रह्माण्ड देह में है। इसी से प्रभु को "सहस्रशीर्षा सहस्राक्षः सहस्रपात्" कहा गया है।

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्
स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशा गुलम्
(2वें उ.3।14)

भगवान शिव ने सब जगह आंखें मुँह और पैर कर लिये।

विश्वतश्चक्षुरूत विश्वतोमुखो
विश्वतोबाहुरूत **विश्ग्रस्यात्** ॥ **(2वे. उ. 3।3)**

इसलिए कि अपने प्रेमिया का हजार-हजार नेत्रों से निरन्तर निहारा करे। अपने प्रेमियों के अर्पित वस्तुओं का भोग लगा सके। उन्हें स्नेह से गले लगा सके और जहाँ कहीं बुलाया जाए वहाँ तत्काल पहुँच भी सके। श्रुति कहती है–

यो देवानां प्रभवश्चोदभवश्च विश्चाधिपो :द्रो महर्षिः।

हिरण्यगर्भं जनयामासपूर्वं स नो बुद्धया शुभया संयुनक्तु ॥

अर्थात जो रूद्र भगवान देवताओं की उत्पत्ति एवं वृद्धि के हेतु है जो विश्व के नाथ हैं और सर्वज्ञ हैं तथा जिन्होंने सृष्टि के आदि में हिरण्यगर्भ को उत्पन्न किया था वे हमें शुभ बुद्धि से संयुक्त करें।

इस तरह रूद्र भगवान क्रीड़ा स्थली का निर्माणकर एवं जीवों को प्रकट कर इनके शरीर रूपी नगर में बाह्यजगत में बसकर लीला कर रहे हैं–

नवद्वारे पुरे देही हँसो लेलायते बहिः।
(श्वे.30 3।18)

रूचि के अनुरूप रूप

प्रेम में रूचि का अत्यधिक महत्व है। लोगों की रूचि भिन्न भिन्न हुआ करती है। रूचि के अनुरूप नाम और रूप न मिले तो उपासना मे प्रगति नहीं हो पाती। रूचि के विपरीत उपासना से तुकाराम जैसे संत भी घबराते हैं। संत तुकाराम की रूचि विटठ्ल रूप गोपाल कृष्ण पर थी। राम कृष्ण हरि नाम ही उन्हें रूचता था। इनके गुरुदेव ने स्वप्न में इन्हें इन्हीं नामों और रूपों की उपासना की दीक्षा दी। इससे संत तुकाराम को बहुत ही संतोष हुआ। उन्होंने कहा–

'गुरु ने मुझे कृपासागर पाण्डुरंग ही जहाज हृदया गुरुदेव ने वही सरल मंत्र मुझे बताया। जो मुझे अतिप्रिय था। जिससे कोई बखेड़ा नही।'

भक्त अपनी रूचि के अनुसार भगवान के नाम और रूप का वर्णन कर सके। इसलिए वे अनन्त नामों और रूपो में आते हैं–

चिन्मयस्याद्वितीयस्य निष्कलस्यशरीरिणः।
उपासकानां कार्यार्थं ब्रह्मणो रूपकल्पना।
(श्रीराम.पू.उ. 1।7)

अर्थात् ब्रह्म चिन्मय अद्वितीय प्राकृत शरीर से रहित है फिर भी वह उपासकों के हित के लिए उनकी रूचि के अनुसार वरण करने के लिए भिन्न भिन्न रूपों में प्रकट होता है।

वही विराट् पुरुष के रूप में आता है, विष्णु, दुर्गा, गणेश और सूर्य के रूप में आता है–'ब्रह्मण्येवं हि पंचधा' (श्रीराम. पू. उ. 1।10)

पाँच ही नहीं, सम्पूर्ण व्यक्त और अव्यक्त के रूप में प्रभु ही तो आये हैं–

तमादिमध्यान्तविहीनमेकं विभु चिदानन्दमरूपम
उमासहायं परमेश्वरं प्रभुं त्रिलोचनं नीलकण्ठं प्रशान्तं॥ (कैवल्योपनिषद)

यदि ब्रह्म की अभिव्यक्ति इस रूप में न होती तो इस रूचि वाले व्यक्ति की आध्यात्मिक भूख कभी शान्त नहीं होती। बेचारे की परमार्थिक उन्नति मारी जाती। जब वह शास्त्रों में देखता है कि हमारे उपास्य ही एकमात्र सर्वश्रेष्ठ देव है, परब्रह्म है वही विष्णु है यही प्राण है) काल, अग्नि, चन्द्रमा है जो कुछ स्थावर जंगम है सब हमारे ही प्रभु है तब इस रूचि वाले उपासकों को सब तरह से संतोष हो जाता है।

स ब्रह्म स शिवः सेन्द्रःसोऽक्षरः परम् स्वराट्।
स एव विष्णुः स प्रा.श्च स कालोग्निश्च स चन्द्रमा।
स एव सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यं सनातनम् ॥
(कैवल्योपनिषद् 8-9)

वही अद्वय तत्व देवी के रूप में

इसी तरह यदि किसी की रूचि जगदम्बा की ओर है तो उसके लिए परमात्मा देवी के रूप में आते है। वेद ऐसे उपासकों को बताता है कि सृष्टि के आदि में एकमात्र ये देवी ही थी। इन्हीं देवी ने ब्राह्मण पैदा किया (इन्हीं से ब्रम्हा) विष्णु रूद्र पैदा हुए।

देवीह्यकाग्र आसीत् सैव जगदएडमसृजत् तस्या एव ब्रह्म अजीजनत्। विष्णुरजीनत् **रूद्रो जीजनत्। सर्वे मरूद्गणा अजीजनन्। गन्धर्वा सरसः किन्नरा वारिवादिनः** समन्तादजीजनन्.....सर्वमजीजनत्। **(बह्वचोपनिषद्)**

यदि पराम्बा स्वयं अपने श्रीमुख से कहें कि 'वत्स! मै ही ब्रह्म हूँ मैं ही प्रकृति पुरुषात्मक जगत हूँ। शून्य और अशून्य मैं ही हूँ। मैं ही आनन्द हूँ और मैं ही अनानन्द हूँ मैं ही विज्ञान हूँ और अविज्ञान हूँ तो इन उपासकों को कितना आश्वासन प्राप्त होता है–

अहं ब्रह्मःपिणी !मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं जगत शून्यं चाशून्यं च। अहमानन्दं आनन्दौ। विज्ञानाविज्ञाने अहम्॥ (देव्युपनियत्)

वही अद्वय रूप सूर्य के रूप में

इसी तरह किसी का रुझान प्रत्यक्ष देवता सूर्य की ओर होवे उसका हृदय इस ज्योतिर्मय देवता में रम गया। ऐसे उपासकों के लिए यदि ब्रह्म आदित्य रूप में न आते तो इसकी आध्यात्मिक प्रवृत्ति कैसे होती? और वह आदित्य पूर्ण ब्रह्म न हो केवल देवता हो तो भी उपासक की रूचि को ठेस लग सकती हैं। अतः ब्रह्म आदित्य के रूप में आये। वेद ने सूर्योपासक को आश्वासन दिया कि तुम जिसकी ओर झुके हो वह परब्रह्म परमात्मा है वही अद्वय तत्व है उसी से सबकी उत्पत्ति होती है–

आदित्याद्वार्युर्जायते, आदित्याद्भूमिर्जायते। **आदित्यादापो जायन्ते। आदित्याज्ज्योतिर्जायते।** आदित्याद्व्योम **दिशो जायन्ते।** आदित्याद्देवा **जायन्ते। आदित्यो वा एष एतन्मण्डलं तपति। असावादित्यो ब्रह्म।** (सूर्योपनिषद्)

उपर्युक्त पंक्तियों से यह स्पष्ट है कि शिव तत्व एक ही है, उसी के ब्रह्मा, विष्णु, गणपति, दुर्गा आदि भिन्न-भिन्न नाम रूप हैं।

इस तथ्य की जानकारी न होने से लोगों को भ्रम हो जाता है कि शैव ग्रन्थों में शिव की सर्वात्मकता बतायी गयी है और वैष्णव ग्रन्थों में विष्णु की जो परस्पर विरुद्ध है।

शिव सर्वात्मक है अतः सबका सम्मान करो

ऊपर की पंक्तियों में ईश्वर के संबंध में हिन्दू धर्म की अन्य धर्मों की अपेक्षा एक विशेषता भी दिखाई देती है। अन्य धर्म असत् को भगवान नहीं मानते, किन्तु वेद कहता है कि सत्-असत् जो कुछ भी है सब ईश्वर है। ईश्वर के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

तदात्मकत्वात् सर्वस्य तस्माद्भिन्नं **नहि क्वचित्। (रूद्रह्र., उप.26)**

इस प्रकार वेद ने मानवमात्र के लिए बहुत ही सुगम साधन प्रस्तुत कर दिया है। जब हम समस्त जड़ चेतन को भगवन्मय देखते हैं, तब सबका सम्मान करना हमारे लिए आवश्यक हो जाता है। अपमान करने वाले का भी सम्मान करना होम है। हमारे साथ उसका जो अभद्र व्यवहार हो रहा है, उसका मूल कारण तो वस्तुतः हम ही हैं। हमसे जो कभी अभद्रकर्म हो गया था उसी का परिणाम हम भुगत रहे हैं। निमित्त भले ही कोई बन जा, हमें तो निमित्त से प्यार ही करना है–

अथ मां सर्वभूतेषु भूतात्मानं कृतालयं।
अर्ह येद्दानमानाभ्यां मैत्र्याभिन्नेन चक्षुषा॥
(श्रीमद्भग. 3।29।26)

भगवान आदेश देते है कि सब प्राणियों के भीतर में बसे हुए मुझ परमात्मा को उचित रूप से दान और सम्मान प्रदान करो, मुझमें मैत्रीभाव रखो और सबको समान दृष्टि से देखो।

उज्जयिनी की कालिदास चित्राकला प्रदर्शनी में प्रदर्शित चित्राों में शिव-शक्ति चित्राण

खुशबू जांगलवा

शोधार्थी, शा. स्नातको. महा. वि. उज्जैन (म.प्र.)

पुराणों में अवन्तिका या उज्जयिनी की महिमा के विषय में कहा गया है कि–

'अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, काञ्ची अवन्तिका।
पुरी, द्वारावती चैव सप्तैताः मोक्षदायिनी ॥

और इस मोक्षप्रदायिनी उज्जयिनी मे विराजमान भगवान शिव की महिमा में वर्णित पक्तियां के अनुसार–

आकाशे तारकं लिंग पाताले हाटकेश्वर।
भू लोके च महाकालोः लिंग त्रयः नमोऽस्तुते॥1[1]

अर्थात् आकाश में तारक लिंग, पाताल में हाटकेश्वर और वही पृथ्वी लोक में महाकालजी का स्थान है। देवाधि देव महाकाल, महाकवि कालिदास और मोक्षप्रदायिनी उज्जयिनी ये अद्भुत संगंम है ईश्वर, और उसकी कृति व उसकी स्थिति का। जब सृष्टि की रचना की चर्चा हो तो महान् चित्रकार देवाधिदेव महादेव का स्वतः स्मरण हो जाता है ठीक उसी प्रकार जब काव्य का बात हो तो कवि कुलगुरु काव्य शिरोमणि कवि कालिदास का नाम सर्वोच्च शिखर पर अवस्थित होता है। इसीलिए कहा गया है कि–

''पुरा कवीनां गणना प्रसंगे, कनिष्काधिष्ठित कालिदासः।
अद्यापि ततुल्य कवर भावादनामिका सार्थवती वभूव ॥2[2]

महाकाल, उज्जयिनी और महाकवि कालिदास का नाम जहां आता है वहां स्वतः ही चित्रकला, मूर्तिकला, संगीतकला, काव्यकला आदि समस्त ललित कलाओं का महासागर हिलोर मारने लगता है। आज का सेमीनार का मुख्य विशय भी शिव शक्ति और ललित कला है। और ऐसा अवसर शिव की, और महाकवि की, उज्जयिनी के साथ कालिदास संस्थान में सेमिनार का होना भी एक अद्भूत संगंम को दर्शाता है। मान्यता है कि कवि कुलगुरु शिरोमणि, महाकवि कालिदास महाकाली (गढ़कालिका) अर्थात् शिव की शक्ति के प्रति अनन्य भाव रखते थे यह उनके द्वारा रचित काव्यों झलकती है। वे काली के भक्त होने से कालिदास कहलाएं। महाकवि के छोटे से जीवन काल में महाकवि की संस्कृत की सात रचनाओं अभिज्ञान शाकुन्तलम्, मालविकाग्निमित्रम्, विक्रमोर्वशीयम्, रघुवंशम्, ऋतुसंहारम्, कुमारसम्भवम्, मेघदूतम् ने उन्हें विश्व प्रसिद्ध बना दिया। भारतीय जीवन दर्शन, साहित्यिक सौंदर्य की रसानुभूति, लोक कल्याण की भावना, सांस्कृतिक जीवन का त्रिवर्ग त्याग, तपस्या और तपोवन का समावेश महाकवि के संस्कृत काव्य में है। महाकवि ने शिवशक्ति पर महाकाव्य कुमार सम्भवम् की रचना कर करने का अद्भुत साहस दिखाया है। इस काव्य में भगवान शिव व पार्वती का महान् संगम का वर्णन किया है। यह आठ सर्गों में पूर्ण किया गया है। शिवजी में सम्पूर्ण काव्य,

नाद, गीत संगीत का समावेश है। वे सर्व कला भरपूर है। महाकवि कालिदास की यें रचनाएं भारतीय काव्यशास्त्र के लिए वरदान स्वरूप हमें प्राप्त हुई है। पद्मभूषण पं. सूर्यनारायणजी व्यास के संकल्प का साकार रूप हमें के प्रतिवर्ष उज्जयिनी के इसी कालिदास अकादमी परिसर में देंवशयनी एकादशी तिथि से सप्तदिवसीय कार्यक्रम का आयोजन में देखने को मिलता है। अकादमी की स्थापना से पूर्व सन् 1938 ई. से इसका आयोजन होता आ रहा है।[3]

इसी आयोजन का महत्वपूर्ण अंगों में एक है इसमें आयोजित होन वाली राष्ट्रीय चित्र एवं मूर्तिकला प्रदर्शनी। जिसमें चित्रकारों द्वारा कालिदास जी के ग्रंथों के विषय को आधार बनाकर भारतवर्ष की विभिन्न पारम्पारिक व लोक चित्रण शैली के चित्रों व मूर्तिकला को प्रस्तुत किया जाता हैं। कालिदास जी के काव्य पौराणिक घटनाओं पर आधारित है। कुमार सम्भव में महाकवि कालिदास का भारत भूमि के प्रति अटूट अनुराग था। प्रकृति-चित्रण के माध्यम से वसुन्धरा की अपार रमणीयता पर मुग्ध हो उन्होंने पृथ्वी को ही स्वर्ग बना दिया है। कालिदास की रचनाओं के अध्ययन से हमें पता चलता है कि उन्होंने वेदों, उपनिषद्दों, भगवद्गीता, पुराणों तथा सांख्य योग और वेदान्त का गहन अध्ययन किया था। उनकी रचनाओं का आधार भी यही है। पौराणिक आख्यानों को अपनी कमनीय कल्पना का स्पर्श कराकर उसे मौलिक, सरस, सौम्य, सुन्दर और आकर्षक बना दिया। सभी रचनाएँ अपने आप में अद्वितीय हैं। कुमारसम्भव उनकी अनूठी काव्य रचना है। इस कथा का वर्णन स्कन्दपुराण एवं शिवपुराण में सम्पूर्ण विवेचन किया गया है।

उसी कथा को आर्धत्य करके कवि ने कुमार सम्भव महाकाव्य की रचना की है।

पौराणिक कथा के अनुसार तारकासुर नामक दैत्य से आतंकित देवगण ब्रह्मा की सेवा में उपस्थित होकर दैत्य के अत्याचारों से त्रस्त होने का वर्णन करते हैं। ब्रह्मा जी कहते हैं तारकासुर का वध शिव-पार्वती के पुत्र के हाथों से होगा। शिव जी को पार्वती जी से विवाह के लिए राजी करना, इस कार्य के लिए इन्द्र कामदेव को यह कार्य सौंपते हैं। शिवजी कामदेव को भस्म कर देते हैं। तब पार्वती जी शिवजी को पाने के लिए घोर तपस्या करती है। शिवजी प्रसन्न होते हैं और शिव-पार्वती का विवाह रचाया जाता है। कुमार कार्त्तिकेय का जन्म होता है। यही कुमारसम्भव का मूक कथानक है जिसे कवि ने अपनी सूक्ष्म वाग्देवता शक्ति के द्वारा अद्वितीय बना दिया है। पार्वती की तपचर्या, शिव द्वारा परीक्षण, प्रणय, विवाह और शृंगार-सुख-विकास का वर्णन बहुत ही सूक्ष्म, सुन्दर और सरस है। रतिविलास में कवि की करुणा कालिन्दी प्रवाहित होती है और महाकवि अपनी प्रौढ़ प्रतिभा द्वारा एक उत्कृट एवं प्रांजल काव्य की सृष्टि करता है।[4]

'कालिदास ग्रन्थावली' डॉ. मिथिलाप्रसाद त्रिपाठी के द्वारा कालिदास कृत आठ सर्गों का अनुमोदन किया गया है। शिव और शक्ति पर आधारित कोई अन्य ग्रंथ कुमारसम्भव के समक्ष न ठहरता। इस प्रकार महाकवि ने भगवान शिव की महिमा रघुवंशम्, मालविकाग्निमित्रम्, अभिज्ञानशकुंतलम् तीनों में की है।[5]

महर्षि अरविन्द के कथनानुसार–"प्राक्तन संस्कृत साहित्य में कुमारसम्भव का वही महनीय स्थान है जो आंग्ल साहित्य में मिल्टन के "पैराडाइज लास्ट का है।"

कलात्मक दृष्टिकोण से महाकवि कालिदास में चित्रकार एवं मूर्तिकार भी उनकी आत्मा में समाये हुए थे। कालिदासजी स्वयं एक उत्कृष्ट चित्रकार थे उसका अतस्थ प्रमाण उनके काव्यों में मिलता है। कुमारसम्भव में यौवन सम्पन्न पार्वती उनके शंकर को न भायी। उन्हें जीतने की क्षमता महाकवि की तपःपूत पार्वती में ही थी। महाकवि ने अपनी रचनाओं के माध्यम से चित्रकार व मूर्तिकारों को जो प्रेरणा दी है वह है–"अद्यापि ततुल्य कवेर भावात्" आज भी अक्षुण्य है।[6]

अपने युग के सजग चितेरे कालिदास ने शिव-पार्वती को सामान्य नर नारी के समान कामातुर दिखाने का कालिदास के सिवा किसी ने साहस न किया। कुमारसम्भव चराचर में व्याप्त इस कामशक्ति का प्रकाशक है।7[7]

इस ग्रंथ में जो कवि ने पार्वती शंकर जी की सेवा में भेजी गयी उसका वर्णन बहुत ही सुंदर ढंग से किया है कि चित्रकार कि तूलिका स्वतः ही रंगों की छटा के माध्यम से चित्रण करने पर मजबूर हो ही जाती है।

हरस्तु किंचित्परिलुप्तबैर्य्रचंद्रोदयारम्भ इबाम्बुराशि।
उमामुखे बिम्बफलाधरोष्टे व्यापारयामास विलोचनानि॥
विवृण्वती शैलसुतापि भाव भंगैः स्फुरद्वालकदम्बकल्पैः।
साची कृता चारूतरेण तस्थौ मुखेन पर्यस्त विलोचनेन॥8[8]

अर्थात् जैसे चंद्रमा के निकलने पर समुद्र में ज्वार आ जाता है वैसे ही पार्वती को महादेवजी में मन में भी कुछ हलचल सी होने लगी और वे पार्वतीजी के विम्ब के समान लाल लाल होंठों पर अपनी ललचायी दृष्टि डालने लगे और पार्वतीजी भी फले हुए नये कदंब के समान पुलकित अंगों से प्रेम जतलाती हुई लजौली आंखों से अपना अत्यंत सुंदर मुख कुछ तिरछा करके खड़ी रह गयी शिवजी संयमी थे, अपने तृतीय नेत्र से कामदेव को भस्म किया आदि का चित्रण महाकवि ने बखूबी किया। अन्य प्रसंग में शिव चाहते थे पार्वतीजी उनके समान तप करे जैसे शिव है वैसे शक्ति भी हो। कुमार सम्भव के अलावा अन्य रचनाओं में जैसे मेघदूत में भी कवि ने यक्ष को उज्जयिनी का मार्ग टेढ़ा मेढ़ा होने के बावजूद वहां जाकर महाकाल भगवान के दर्शन की प्रेरणा दी है। महाकवि के शब्दों में कुछ इस प्रकार से—

वक पंथा यदपि भवेतः प्रस्थितस्योत्तराशां।
सौधोत्संगप्रणयविमुखो मा स्म भूरूज्जयिन्याः॥9[9]

इसके अतिरिक्त महाकाल के प्रति उनका प्रेम भी श्लोक में भी झलकता है जिसमें वे मेघ से कहते हैं रात महाकालजी की आरती, नगाड़े आदि का वर्णन करते हैं।

भारतीय कलाएं धर्म आध्यात्म से अनुप्राणित् रही हैं। ये कलाएं मोक्षदायिनी मानी गयी हैं। उज्जयिनी की राष्टीय कालिदास चित्र एवं मूर्तिकला प्रदर्शनी में प्रतिवर्ष देश के कई कलाकार अपनी कलाकृतियों को प्रदर्शित करते हैं। शिव शक्ति के विभिन्न लीलाप्रसंगों में शिव विवाह बारात दृश्य, शिवजी द्वारा कामदेव को भस्म करना आदि चित्रकारों के लोकप्रिय दृश्य रहे हैं। भारत की विभिन्न परम्परागत व लोकशैलियों जैसे—महाराष्ट की वरली, बिहार की मधुबनी, म.प्र. की माण्डना आदि में चित्र रचना कर देश की परंपराओं को कालिदास अकादमी के माध्यम से समेटकर रखा है। कालिदास के काव्य ही नहीं वरन् प्राचीन भारतीय युग की परम्परा का अभिन्न अंग है शिवशक्ति का चित्रण। मूर्तिकार के मन में मूर्ति उकेरने के हेतु जो काल्पनिक दृश्य आता है वह चित्र बनकर ही उभरता है और फिर वह साकार रूप मूर्ति के रूप में लेता है। अतःमूर्तिकला चित्रकला से परे न है। इसके प्रमाण हमें विश्व प्रसिद्ध त्रिमूर्ति एलीफेंटा व पार्श्व वीथी के चारों ओर शिव की लीलाओं का अद्‌भूत संसार, ऐलोरा का कैलाश मंदिर, किराडू का शैव मंदिर शिव तांडव की खंडित मूर्ति, रावण कैलाश पर्वत उठाते हुए, कंदारिया महादेव खजुराहों में, शिव तांडव की खंडित मूर्ति आदि है। इसके अलावा कई तीज त्योहार जैसे गणगौर तीज, गौरी व्रत, हरतालिका तीज, सांझी पूजन है जिनमें शिव शक्ति की पूजा की जाती है। कुंवारी कन्याएं अच्छे वर की कामना से व्रत करती है। इन अवसरों पर कभी रेत की मूर्ति बनाकर तो कभी दीवार पर चित्रण करती है शिव पार्वती की पूजा करती है। राजस्थान की मान्यातानुसार सांझी में दीवार पर चित्रण कर कन्याएं सांझी को माता पार्वती मानकर अच्छे वर की कामना करती है।10[10]

निष्कर्ष—निष्कर्ष के तौर पर हम कह सकते हैं कि सनातन संस्कृति की सम्पन्नता अवर्णनीय और अन्यत्र दुर्लभ है। देवाधिदेव महाकाल, कवि गुरु महाकवि और पृथ्वी की अर्थात् मृत्युलोक में उज्जयिनी वह स्थान है जहां से सृष्टि की रचना का प्रारंभ माना जाता है। मान्यता है कि हिन्दू धर्मावलम्बियों के चार धामों की यात्रा की पूर्णता तब मानी जाती है जब अंत में उज्जयिनी के महाकाल जी के दर्शन हो। महाकाल, उज्जयिनी और महाकवि का ऐसा संगम है कि जिसका बखान करने के लिए शब्द भी कम हो जाते है। मान्यता है कि कालिदास काली के भक्त होने से कालिदास कहलाये।

कालिदासजी के ग्रंथों में भगवान शिव की महिमा रघुवंशम्, मालविकाग्निमित्रम्, अभिज्ञानशकुंतलम् तीनों में की है। महाकवि की इन्हीं रचनाओं के संसार को अपनी तूलिका के माध्यम से उज्जयिनी की राष्टीय कालिदास चित्र एवं मूर्तिकला प्रदर्शनी में चित्रकार भारत की विभिन्न लोककलाओं के रंगों को भरते हैं और इस प्रकार कविकुल गुरु कालिदास की रचनाओं पर आधारित इस प्रदर्शनी में प्रदर्षित चित्रों के माध्यम से भारतीय संस्कृति की खुशबू चहुं दिशाओं में फैलती भी और कालिदास संस्थान जैसी इव्रदानी में सुरक्षित भी है।

संदर्भ ग्रंथ

1. पं. सूर्यनारायणजी व्यास—उज्जयिनी दर्शन, प्रकाशक—ईश्वरसिंह परिहार संचालक, सूचना तथा प्रकाशन, अप्रैल-1975
2. अखिल भारतीय कालिदा ससमारोह, उज्जैन, दि. 25 से 30 नवम्बर, 1974 स्मारिका, पृ.-30
3. वृतांत (कालिदास संस्कृत अकादमी समाचार), कालिदास संस्कृत अकादमी, म. प्र. संस्कृति परिषद्, उज्जैन
4. संक्षिप्त स्कंदपुराण-माहत्म्य-केदारखण्ड— पृ.46 से 51
5. पं. सूर्यनारायणजी व्यास—उज्जयिनी दर्शन, प्रकाशक-ईश्वरसिंह परिहार संचालक, सूचना तथा प्रकाशन, अप्रैल-1975
6. अखिल भारतीय कालिदास समारोह, उज्जयिनी, स्मारिका सन् 1974, पृ.-50, 51
7. अखिल भारतीय कालिदास समारोह, उज्जयिनी, स्मारिका सन् 1980, पृ.-27
8. कालिदास ग्रंथावली, कुमारसंभवम्, तृतीय सर्ग, श्लोक-67, 68, पृ. 340, 341
9. (कालिदास ग्रंथावली—मेघदूतम् प्रकाशक—कालिदास संस्कृत अकादमी, उज्जयिनी,. लोक सं.-27) पृ. 435
10. डॉ. जयसिंह नीरज, डॉ. भगवतीलाल शर्मा—राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा, प्रकाशक राज. हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर

संगीत में शिव शक्ति

कुमारी प्रीति

संगीत (एम.ए.) तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर

भारतीय परम्परा अनुसार संगीत का संबंध ईश्वर तथा वेदों से मान्य है। वेद का बीज मंत्र है 'ओम'! ओम के तीनों अक्षर अ, उ, और म तीन ईश्वरीय शक्तियों के ध्योतक है।

अ- ब्रह्म की शक्ति के ध्योतक हैं।

उ- विष्णु की शक्ति के ध्योतक हैं।

म- महेश की शक्ति के ध्योतक हैं।

इन तीन शक्तियों का पुंज ही 'त्रिमूर्ति' परमेश्वर है। इन तीन अक्षरों का ग्रहण ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद से किया गया है। इन अक्षरों के संयोग से ही ओम शब्द निर्मित हुआ है। संगीत के सात स्वर षडज, ऋषभ आदि ओंकार (ओम) के ही अंतर विभाग हैं। शब्द और स्वर की उत्पत्ति ओम के गर्भ से हई है। मुंह से उच्चारित शब्द ही संगीत में नाद का रूप धारण कर लेता है। यथार्थतः ओम शब्द ही संगीत का जनक है। समस्त कलाएं ओम में ही निहित है। जो ओम की साधना करने में समर्थ होते हैं वही संगीत का यथार्थ रूप ग्रहण करने में सफल होते हैं। इसमें लय, ताल, स्वर का समावेश है।

संगीत का माध्यम अति सूक्ष्म है। इसकी सृष्टि नाद से हुई है। नाद ब्रह्म है और मनुष्य का अंतःकरण ब्रम्हस्वरूप है। अतः संगीत एक प्राकृतिक तत्व है। संगीत एक कला तो है ही और यह सभी ललित कलाओं में सर्वश्रेष्ठ है।

संगीत आराधना है, इसमें तन्मयता की अवस्था उपलब्ध होती है और ईश्वर की वंदना भी। मंदिरों में प्राचीन काल से आधुनिक काल तक पूजन-अर्चन के समय गायन-वादन का प्रचलन विद्यमान है। इस समय गेय रागनियों का गायन भी ऐसी स्वरावलियों से हुआ है, जिसमें तन्मयता, करुणाश्रु और हृदय के निश्चल उद्गारों के स्रोत उमड़ पड़ते हैं। मंदिरों में भजन तथा आरती गान द्वारा ईश्वर उपासना, ईसाइयों द्वारा गिरजाघरों में आज भी करुण रागों तथा संगीत वाद्यों का प्रयोग करना, संगीत की महत्ता प्रमाणित करता है।

संगीत प्रकृति के हर कण में मौजूद है और भगवान शिव को संगीत का जनक माना जाता है। शिव महापुराण के अनुसार शिव के पहले संगीत के बारे में किसी को जानकारी नहीं थी। नृत्य वाद्ययंत्रों को वजाना और गाना उस समय कोई नहीं जानता था क्योंकि शिव ही इस ब्रम्हांड में सर्वप्रथम आए हैं। आरंभ में जव देवी सरस्वती प्रकट हुई तव देवी ने अपने वीणा के स्वर से सृष्टि में ध्वनि को जन्म दिया। लेकिन यह ध्वनि सुर और संगीत विहीन थी। उस समय भगवान शिव ने नृत्य करते हुए 14 बार डमरू बजाए और इस ध्वनि से व्याकरण और संगीत के छंद ताल का जन्म हुआ।

पुराणों के अनुसार सृष्टि के आरंभ में ब्रह्म नाद से जब शिव प्रकट हुए तो उनके साथ 'सत' 'रज' और 'तम 'यह तीनों गुण में जन्मे थे। यही तीनों गुण शिव के 'तीन शूल' यानी त्रिशूल कहलाए।

नाद और भगवान शिव का अटूट संबंध है। दरअसल नाद ऐसी ध्वनि है जिसे ओम कहा जाता है।

पौराणिक मत है कि ओम से ही भगवान शिव का जन्म हुआ है। संगीत के सात स्वर तो आते-जाते रहते हैं लेकिन उनके केंद्रीय स्वर नाद में ही है। नाद से ही ध्वनि, और ध्वनि से ही वाणी की उत्पत्ति हुई है। शिव का डमरू नाद साधना का प्रतीक माना गया है।

भगवान भोलेनाथ दो तरह से तांडव नृत्य करते हैं। पहला, जब वह गुस्सा होते हैं तब बिना डमरू के तांडव नृत्य करते हैं लेकिन दूसरे तांडव नृत्य करते समय जब वह डमरू भी बजाते हैं तब प्रकृति में आनंद की बारिश होती है। ऐसे समय में शिव परम आनंद से पूर्ण रहते हैं लेकिन जब वह शांत समाधि में होते हैं तो नाद करते हैं। परमेश्वर वह सर्वोच्च परालौकिक शक्ति हैं जिसे इस संसार का श्रस्टा और शासक माना जाता है।

भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र का पहला अध्याय लिखने के बाद अपने शिष्यों को तांडव का प्रशिक्षण दिया था। उनके शिष्यों में गंधर्व और अप्सराएं थीं। नाट्य वेद के आधार पर प्रस्तुतियां भगवान शिव के समक्ष प्रस्तुत की जाती थी।

भरतमुनि के दिए गए प्रशिक्षण के कारण उनके नर्तक तांडव भेद अच्छी तरह जानते थे और उसी तरीके से अपनी नृत्य शैली परिवर्तित कर लेते थे। पार्वती ने यही नृत्य वाणासुर की पुत्री को सिखाया था। धीरे -धीरे ये नृत्य युगों-युगों से वर्तमान काल में भी जीवंत है। शिव का यह तांडव नटराज रूप का प्रतीक है।

नाट्यशास्त्र में उल्लेखित संगीत, नृत्य, योग, व्याकरण, व्याख्यान आदि के प्रवर्तक शिव ही हैं। शिव महापुराण भी 29 उपपुराणों में से एक है। इसमें 24000 श्लोक हैं जिसमें, शिव का संगीत के प्रति स्नेह के बारे में विस्तार से वर्णन किया गया है।

वर्तमान में शास्त्रीय नृत्य से संबंधित जितनी भी विद्या प्रचलित है। वह तांडव नृत्य की ही देन है। तांडव नृत्य की तीव्र प्रतिक्रिया है। वही लास्य सौम्य है। लास्य शैली में वर्तमान में भरतनाट्यम, कुचीपुड़ी, ओडिसी और कथक नृत्य किए जाते हैं। यह लास्य शैली से प्रेरित है और कथकली तांडव नृत्य से प्रेरित है।

Shiva-Shakti in Universal Perspective

Madhav Puranik

Research Scholar, Tilak Maharashtra, Vidyapeeth, Pune

Two Day International Interdisciplinary Conference -29 and 30 Sep. 2018, Ujjain, M.P.

Topic –The Philosophical Side of Śiva-Śakti

Abstract-Śiva-Śakti in Abhinavgupta's Theory of Aesthetics

Abhinavgupta's theory of aesthetics extends the boundary of experience up to the category of Śiva-Śakti ['Prakāúa' - Vimarœa] based on the ontological principles of Úvātantryavāda and Ābhāsavāda. Svātantryavāda is from the point of view of the Ultimate principle and Ābhāsavāda is from the point of view of the manifested variety. In the Absolute, the entire variety in the objective world is in a state of perfect unity. The highest category 'Siva' or 'Universal being' is an Ābhāsa. The epistemological explanation of the above theory takes into account the aspects of Prameya, Pramāṇa; Pramātā. Abhinavgupta explains the process of aesthetic experience in terms of the levels of Sense, Imagination, Emotion, and Katharsis with final level of Transcendence. [Comparative Aesthetics, Dr. K.C.Pandey]

After accepting Abhinavgupta's theory of aesthetics completely, present paper aims at the following –

1 To describe the process of aesthetic experience in terms of twelve Kālis of the 'Mahārtha' or 'Krama' system depicting twelve successive stages of Prameya, Pramāṇa, Pramātā. [Spanda-Kārikās, Vasugupta1.1]

2 To describe the above process in terms of the levels of Citta-praṇa [intermediate level of Śiva-Śakti] and five koœas [Annamaya etc.]

3 To indicate the corresponding levels of the process related to five states of consciousness power [Jagrat, svapna etc.]

4 To apply the dialectical method of Hegel for the transition of Śiva-Śakti in the above process.

5 To define Citta-praṇa along with the rules for movement of Śiva-Śakti from the lowest category to highest category of tattvas applicable to all experiences [aesthetic, spiritual and contemplative]

शिव शक्ति का दार्शनिक स्वरूप

मधु

स्नातकोत्तर संगीत विभाग

तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर

शिव इस सृष्टि का परम सत्य हैं और शिव ही सुंदर है। शिव शक्ति का प्रेम ही ऐसा है कि ये एक दूसरे के बिना रह नहीं सकते।

शिव और शक्ति—ये परम तत्व के दो रूप है। शिव और शक्ति एक दूसरे के पूरक है। एक के बिना दूसरा अधूरा है, शिव पुराण में कहा गया है—

"एवं परस्परपेक्षा शक्तिशक्तिभतोः स्थिता न शिवेन विना शक्तिनं शक्तया विना शिवः"।[1]

शक्ति और शिव को सदा एक दूसरे की अपेक्षा रहती है। न शिव के बिना शक्ति रह सकती है और न शक्ति के बिना शिव रह सकते है। जो सृष्टि में है वही पिण्ड में है—

—यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे।

शिव पुराण के अनुसार शिव-शक्ति का संयोग ही परमात्मा है। शिव की जो पराशक्ति है, उससे चित्त शक्ति प्रकट होती है चित्त शक्ति से आनंद शक्ति का प्रादुर्भाव होता है।

शिव शक्ति जब कृपा करते है, जीव सभी पाशों से मुक्त होकर सभी धर्मों, सभी रहस्यो को देख व समझ लेता है। कहीं विरोध नहीं किसी का अपमान नहीं, कोई धर्म छोटा नहीं, सभी देव-देवी पूजनीय हैं। **"शिव इस सृटि का परम सत्य है और शिव सुंदर है उनकी आराध्य त्रिपुर सुंदरी ही माता भुवनेश्वरी है। शिव मृत्युंजय है, जो शक्ति काली, बगला, तारा, भुवनेश्वरी है।"** निराकार ब्रह्म जब साकार रूप धारण करता है, आत्मा-परमात्मा के दर्शन की चाह रखता है, शिव और शक्ति साकार रूप धारण कर जीव का कल्याण करते है, उसकी अभिलाषा पूरी करते है।

शिव परम तत्व है परंतु उन्हें भी शक्ति प्रदान करने वाली, साथ रहने वाली आदि जगदम्बा ही परब्रह्म परमेश्वरी हैं। शिव गुरू हैं, परमात्मा हैं। बिना इनकी कृपा के शक्ति को कौन जानेगा। वेद, पुराण, तंत्र, शस्त्र आदि को पढ़कर अध्यात्म को नहीं समझा जा सकता है। इससे ज्ञान का विकास होगा, समझने की लालसा जगेगी जानने की, देखने की जिज्ञासा पैदा होगी परंतु यह तो गुरू मार्ग की साधना है। शिव रूपी कृपा करेंगें तभी सभी को रास्ता मिलेगी। वैसे शिव शक्ति के पूर्ण रहस्य को जीव कभी नहीं जान सकता, वे बुद्धि दृष्टि, ज्ञान से भी परे हैं।

शिव शक्ति के रहस्य की एक छोटी अनुभूति शिव का बीजाक्षर ह ही हैं। परंतु शिव ह्रां में राम ह्रीं में हरी (विष्णु) ए क्ली में काली कृष्ण श्री में लक्ष्मी, ऐ में गुरु और सरस्वती यही तो परम रहस्य है शिव शक्ति का। शिव का अपमान शक्ति सह नहीं पाई, तो दक्ष यज्ञ मृत्यु यज्ञ बन गया। वहीं शक्ति का वियोग शिव सह नहीं पाए और शव लेकर विलाप करते हुए भटकने लगे। सृष्टि का नाश होने के भय से विष्णु को आना पड़ा। **शिव शक्ति का प्रेम ही ऐसा है कि ये एक दूसरे के बिना रह नहीं सकते।**

शिव पिता हैं, गुरु हैं, परमात्मा हैं। शिव सिर्फ अमृत देते है, लेते हैं हमारा विश, हमारे पाप, हमारे ताप, तभी तो हम शुद्ध-बुद्ध होकर परम पद को प्राप्त करते है। और शक्ति सबकी स्वामिनी है और जो शक्ति हैं वही शिव हैं और जो शिव हैं वही शक्ति हैं। इन दोनों के परम लाड़ले हैं गणेश और कार्तिकेय।

जब वह महाशून्य से प्रकट होकर सगुण रूप धरण करता है, तो शिव कहलाता है, और उसकी शक्ति मां भगवती ही मूल आदि शक्ति के नाम से विख्यात है। शिव और शक्ति साकार रूप धारण कर जीव का कल्याण करते है, उसकी अमिलाषा पूरी करते हैं।

मातृसत्ता की कृपा के बिना यह सृष्टि नहीं बन सकती, इसलिए संसार में जहां 'म' है वहीं पूर्णता हैं। राम में 'म', श्याम में 'म', प्रेम में 'म', आत्मा-परमात्मा में 'म' परंतु परमात्मा में दो-दो 'म' शिव शक्ति की एकता का बोध कराते हैं।

वेद, पुराण, तंत्र शास्त्र आदि को पढ़कर अध्यात्म को नहीं समझा जा सकता है। इससे ज्ञान का विकास होगा, समझने की लालसा जगेगी, जानने की देखने की तड़प पैदा होगी परंतु यह तो गुरु मार्ग की साधना है, शिव कृपा करेंगे तभी सही रास्ता मिलेगी। शक्ति को हर जीव संभाल नहीं पाता परंतु शिव प्रेम हैं, परमात्मा हैं, सब कुछ हैं इसी कारण शिव पिता व शक्ति माता हैं। दोनों के प्रति प्रेम ही उच्च स्थिति प्राप्त कराता है।

शिव और शक्ति के अनेक रूप धारण करने का यही रहस्य है। व्यक्ति को शिव और शक्ति की उपासना का ज्ञान गुरु के मार्ग दर्शन से प्राप्त होता है। महाकाल महाकाली के नीचे लेटे हैं, शिव के लेटने का मूल कारण शक्ति के उग्र रूप से सृष्टि को बचाना है। वही कालिका के सौभ्य रूप से सृजन कराना है। शिव के नीचे देख काली की उग्रता समाप्त हो गई। जो शिव के भक्त हैं उन्हें शक्ति को भी प्रसन्न करना पड़ेगा और जो शक्ति के उपासक हैं, उन्हें भी शिव को पूजना पड़ेगा—यहीं आखरी सत्य है।

यदि गुरु योग्य, तपस्वी व सच्चा नहीं हो, तो वाचाल, मांसाहारी शराबी बन साधक भटक जाएगा। शिव शक्ति जब कृपा करते है, सभी जीव पाशों से मुक्त होकर सभी धर्मों, सभी रहस्यों को देख व समझ लेता है। कहीं विरोध नहीं, किसी का अपमान नहीं, कोई धर्म छोटा नहीं, सभी देव-देवी पूजनीय हैं। शिव इस सृष्टि का परम सत्य हैं, और शिव सुंदर हैं और उनकी आराध्य त्रिपुर, सुंदरी ही माता भुवनेश्वरी हैं। वे साधक के कर्मानुसार फल देते हैं।

शिव की जो पराशक्ति है उससे चित्त शक्ति प्रकट होती है। आनंद शक्ति से इच्छाशक्ति का उद्भव हुआ है। इच्छाशक्ति से ज्ञानशक्ति और ज्ञानशक्ति से पांचवी क्रियाशक्ति प्रकट हुई है।

चित्त शक्ति से नाद और आनंदशक्ति से बिन्दु का प्राकट्य बताया गया है। अनुग्रह, तिरोभाव, संहार, स्थिति और सृष्टि इन पांच कृत्यों का हेतु होने के कारण उसे पंचक कहते है। आकाशदि के क्रम से इन पांचों मिथनों की उत्पत्ति हुई है। इनमें पहला मिथुन है आकाा, दूसरा वायु, तीसरा अग्नि चौथा जल और पांचवां मिथुन पृथ्वी है।

कहा जाता है कि सम्यता के साथ संगोत भी परिस्कृत हो जाता है। संगीत का अस्तित्व ब्रह्मांड की शुरूआत से बताया गया है। प्राचीन समय में ऋषि ईश्वर की आराधना अध्यात्मिक शक्ति से सम्पन्न करते थे। इसलिए वह ऊँ स्वर से साधना करते थे।

ऊँ स्वर का दीर्घ उच्चारण कर लंबी ध्वनि द्वारा नाद स्थापित किया जाता था। इस उच्चारण को आध्यात्मिक ज्ञान की वृद्धि और संगीत उपासना पर्याय माना गया हैं। आध्यात्म अगर जीवन में जरूरी है तो संगीत के बिना इसका अस्तित्व नजर नहीं आता।

संगीत की उत्पत्ति ब्रह्मा द्वारा हुई। ब्रह्मा ने आध्यात्मिक शक्ति द्वारा यह कला देवी सरस्वती को दी। सरस्वती को वीणा पुस्तक धारणी कहकर

और साहित्य की अधिष्ठात्री माना गया है। इसी आध्यात्मिक ज्ञान द्वारा सरस्वती ने नारद को संगीत की शिक्षा प्रदान की। नारद ने स्वर्ग के गंधर्व किन्नर तथा अप्सराओं की संगीत शिक्षा दी। आध्यात्मिक आधार पर एक मत यह भी है कि नारद ने अनेक वर्शों तक योग-साधना की तब शिव ने उन्हें प्रसन्न होकर संगीत कला प्रदान की थी।

संगीत में आध्यात्मिका

भारतीय संगीत को ईश्वर प्राप्ति का मार्ग माना गया है। तो कहीं साक्षात ईश्वर माना गया है। व्यक्ति के मन को ईश्वर से लगाना व व्यक्ति को ईश्वर का साक्षात्कार कराना अध्यात्म कहलाता है। संगीत को ईश्वर उपासना हेतु मन को एकाग्र करने का सबसे सशक्त माध्यम माना गया है। वेदों में उपासना मार्ग अत्यन्त सहज तथा ईश्वर से सीधा सम्पर्क स्थापित करने का सरल मार्ग बताया है। संगीत में भी उपासना मार्ग को अपनाया गया है।

भारत के ऋषि मुनियों ने संगीत को ईश्वर प्राप्ति का सबसे उत्तम तथा सरल साधन माना है। इसलिए कहा भी गया है–

वीणा वादन तत्वक्षः श्रुति जाति विशारदः
तालज्ञया प्रयासेन मोझमार्ग निगच्छतिः।[2]

अर्थात्–वीणा वादन करने वाला, श्रुति व जाति अर्थात् स्वरों को जानने वालों तथा ताल वादन के अभ्यास में प्रयत्नशील व्यक्ति मोक्षमार्ग की ओर बढ़ जाता है।

भारत में संगीत का प्रयोग दार्शनिक, योगियों और भक्तों ने किया हैं। संगीत को धार्मिक व सामाजिक उत्सवों तथा व्यक्तिगत मनोरंजन का साधन बनाया। लेकिन इन स्तरों में संगीत का लक्ष्य अध्यात्मिकता ही रहा। संगीत गायन वादन व नृत्य का समावेश है। गायन, वादन और नृत्य का प्रधान लक्ष्य है। आत्मसन्तोष, आत्म आनंद व परमानंद की प्राप्ति करना। संगीत का ध्येय भव-बाधाओं से मुक्ति आत्मा का परमात्मा से मिलन परमशक्ति तथा मोझ प्राप्त करना ही मुख्य ध्यय माना गया है। संगीत में ईश्वर से साक्षात्कार करने की असीम शक्ति है। जिसका अनुभव भारत के ऋषि मुनियों व योगियों ने किया हैं।

संगीत के स्वर व लय, मन को एकाग्रता करके इतना अधिक लीन तथा स्थिर कर देते हैं, कि हृदय की समस्त चंचल वृतियों शांत होकर, आत्मा को परमात्मा में लीन करा देती है। भारत के गायकों वादकों और नर्तकों ने संगीत की आत्मा को पहचाना है। भारतीय संगीत में सात विशिष्ट स्वर है। सा, रे, ग, म, प, ध, नि। इन सात स्वरों के विभिन्न प्रकार के समायोजन से विभिन्न रागों के रूप बने और इन रागों के गायन वादन में उत्पन्न विभिन्न ध्वनि तरंगों का परिणाम मानव, पशु, प्रकृति सब पर पड़ता है।

हमारे यहाँ विभिन्न रागों के गायन व वादन के परिणाम के अनेक उल्लेख प्राचीन काल से मिलते हैं। सुबह, शाम हर्ष शोक, उत्साह, करुणा व भिन्न-भिन्न प्रसंगों के भिन्न-भिन्न राग है। अलग-अलग रागों के प्रभाव भी अलग-अलग हैं। जैसे–दीपक राग से दीपक जलना और मेघ मल्हार राग से वर्षा होना अदि उल्लेख मिलते हैं।

बह्म के परम पवित्र प्रणव नाद ओंकार (ॐ) की उत्पत्ति सृष्टि के साथ मानी गई है। भारतीय संगीत के सात स्वर न केवल हमारी शारीरिक तंत्रिकाओं को प्रमावित करते हैं, बल्कि पाशविक वृतियों का दमन भी करते हैं। भारत के योगियों ने सात स्वरों की उत्पत्ति मानव शरीर के सात यौगिक चक्रों से मानी है। जब स्वरों को गाया-बजाया जाता है तो स्वरों में जो आन्दोलन अलग-अलग निश्चित संख्या में होता है। उनके कंपन का प्रभाव मानव शरीर के यौगिक चक्रों पर पड़ता है। इसी स्वर उपासना से मनुष्य आहतनाद से अनाहत नाद की ओर अग्रसर होता है। सात यौगिक स्थानों से विकसित शक्तियों को योगी एकत्र करके जैसे-जैसे उर्ध्वगामी करते हैं वैसे-वैसे शक्ति मनुष्य के नीचे के केन्द्रों से ऊपर के केन्द्रों में चढ़ती जाती है।

अंततः सप्तचक्र भेदन होने पर शिव शक्ति अर्थात् आध्यात्मिक शक्ति मेल हो जाता है।

जब सा की आंदोलन अर्थात् कंपन बढ़ता है तो ऋषभ (रे) स्वर की उत्पति होती है। रे से रस की उत्पत्ति होने लगती है। गंधार (ग) स्वर की उत्पत्ति मणिपुर चक से होती है। गंधार स्वर से अग्नि तत्व की जागृति होती है। मध्यम (म) स्वर की उत्पत्ति स्थान अनाहत चक्र को कहा गया है। जिसका स्थान वक्षस्थल के मध्य में रीढ़ की हड्डी के अन्दर है। पंचम स्वर (प) का स्थान (थायराइज के पास) है। प अर्थात् प्राण, विशुद्धि चक्र में 16 छोटे-छोटे पंपल होते हैं। जो प्राण वायु को नियंत्रित करते हैं। गायन संगीत में रियाज की आवश्यकता होती है। पंचम स्वर की उत्पत्ति होने के बाद मनुष्य ध्यान की ओर बढ़ जाता है। उसी ध्यान में जब वह लीन हो जाता है तो आज्ञा चक्र से धैवत (ध) स्वर की उत्पत्ति होती है। और व्यक्ति अन्तर्मुखी हो जाता है। अज्ञाचक का स्थान दोनों भैहों के बीच में होता है। जहाँ पर तिलक लगाया जाता है। यहाँ पर भगवान शिव (रूद्र ग्रंथि) का वास कहा जाता है। सातवां स्वर निषाद है, जिसकी उत्पत्ति सहस्जार चक्र से हुई हैं। सहस्त्राट चक्र का स्थान सिर के ऊपरी भाग, जहाँ पर चोटी रखी जाती हैं। इस स्थान को कृपाल कहा जाता है।

सर्वविदित है, कि तांडव और लास्य नृत्य के आदि गुरु भगवान शंकर और पार्वती है। नौ लाटव गोपियों के साथ व दांवन में रास रचाने वाले मुरली मनोहर भगवान कृष्ण तो मानों संगीत के साक्षात् अवतार ही हुए हैं। मां सरस्वती को संगीत की देवी कहा गया है और मां सरस्वती की पूजा विधा व संगीत के देवी के रूप में की जाती है। संगीत एक अनुभूति है और अनुभूति का संबंध आत्मा से हैं।

इच्छाशक्ति से ज्ञानशक्ति और ज्ञानशक्ति से पांचवी क्रियाशक्ति से निवृति आदि कला से उत्पन्न हुई इच्छाशक्ति से 'म' कार प्रकट हुआ है। ज्ञानशक्ति से पांचवां स्वर 'उ' कार उत्पन्न हुआ है। और क्रियाशक्ति 'अ' कार की उत्पत्ति हुई है, इस प्रकार प्रणव (ऊँ) की उत्पत्ति हुई है। इस आदि अक्षर प्रणव से ही मूलभूत पांच स्वर और 33 व्यंजन के रूप में 38 अक्षरों का प्रादुर्भाव हुआ है। ईशान से चित्त शक्ति द्वारा मिथुन पंचक की उत्पति होती है। अनुग्रह तिरोभाव संहार, स्थिति और सृष्टि इन पांच कृत्यों का हेतु होने के कारण उसे पंचक कहते है। यह बात तत्वदर्शी ज्ञानी मुनियों ने कहा है,

इसमें पहला मिथुन है आकाश, दूसरा वायु, तीसरा अग्नि, चौथा जल और पांचवां मिथुन पृथ्वी है, इसमें आकाश से लेकर पृथ्वी तक के भूतों जैसा स्वरूप बताया गया हैं, वह इस प्रकार हैं, आकाश में एकमात्र शब्द ही गुण है, वायु में शब्द, स्पर्श और रूप इन तीन गुणों की प्रधानता है, जल में शब्द, स्पर्श, रूप और रस ये चार गुण माने गए है तथा पृथ्वी में शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध इन पाँच गुणों से संपन्न है।

पांच भूतों (महातत्व) का यह विस्तार ही प्रपंच कहलाता है, सर्वसमष्टि का जो आत्मा है, उसी का नाम विराह है और पृथ्वी तल से लेकर क्रमशः शिवतत्व तक जो तत्वों का समुदाय है वही ब्रह्मांड है।

यही इच्छाशक्ति तत्व है, क्योंकि सम्पूर्ण कृत्यों में इसी का अनुवर्तन होता है ज्ञान और क्रिया, इन दो शक्तियों में जब ज्ञान का आधिक्य हो, तब उसे सदाशिवतत्व समझना चाहिए।

शिव नाम का अर्थ ही कल्याणकारी है, शिव उसी को बताया जा सकता है, जिसमें सृष्टि के संपूर्ण ज्ञान को समाया जा सकता है। सृष्टि चक्र में परमात्मा शिव व वैदिक मंत्र की एक व्याख्या–

- **ज्योति बिंदु स्वरूप परमात्मा शिवः**[5]

परमात्मा का वास्तविक स्वरूप ज्योति बिंदु का ही है, इस स्वरूप द्वारा परमात्मा शिव मानव के शरीर में प्रवेश करते है। और अपने कल्याणकारी ज्ञान द्वारा सृटि परिवर्तन का कार्य करते है।

शिव स्वरूप सूर्यः परमात्मा शिव अपने इस स्वरूप द्वारा पूर्व सृष्टि का भरण-पोषण करते हैं। इसी स्वरूप द्वारा परमात्मा ने अपने ओज व उष्णता

की शक्ति से सभी ग्रहों को एकत्रित कर रखा है। परमात्मा का यह स्वरूप अत्यन्त ही कल्याणकारी माना जाता है। क्योंकि पूर्ण सृष्टि का आधर इसी स्वरूप पर टिका हुआ है।

मानव शरीर की रचना ही इस पूर्ण सृष्टि में अद्वत मानी गई है क्योंकि इसी योनी में मन द्वारा धारण किया गया। सृटि कल्याण का संकल्प पूर्ण हो पाता है। मानव शरीर में सात चक्रों का समावेश होता है, इन चक्रों द्वारा मानव शरीर 56 प्रकार की ध्वनियों का उच्चारण कर पाता है, पूर्ण मानव शरीर का ढांचा इन्हीं चक्रों पर आधारित है। ध्वनि की उत्पति इन चक्रों से होती है। स्वर कण्ठ से और व्याकरण मुख से निकलता है, मानव शरीर में 72000 नाड़िया इन्हीं चक्रों से जुड़ी हुई है।

शिव हिन्दु धर्म ग्रंथ पुराणों के अनुसार भगवान शिव ही समस्त सृष्टि के आदि कारण है। उन्हीं से बह्मा, विष्णु सहित समस्त सृष्टि का उद्वव होता है।

प्रलयकाल के पश्चात् सृष्टि के आरंभ में भगवान नारायण की नाभि से एक कमल प्रकट हुआ और उस कमल से बह्मा प्रकट हुए। ब्रह्मा जी अपने कारण का पता लगाने के लिए कमल नाल के सहारे नीचे उतरे। यहाँ उन्होंने भगवान नारायण को योगन्द्रि में लीन देखा उन्होंने भगवान नारायण को जगाकर पूछा-आपका कौन न है? नारायण ने कहा-मैं लोकों का उत्पत्तिस्थल और लयस्थल पुरुषोत्तम हूँ। ब्रह्मा ने कहा किन्तु सृष्टि की रचना करने वाला तो मैं हूँ। बह्मा जी के ऐसा कहने पर भगवान विष्णु ने उन्हें अपने शरीर में व्याप्त सम्पूर्ण ब्रह्मांड का दर्शन कराया। इस पर ब्रह्मा जी ने कहा—इसका तात्पर्य है कि इस संसार के स्त्रटा मैं और आप दोनों हैं।

भगवान विष्णु ने कहा—ब्रह्माजी आप भ्रम में है। सबके परम कारण परमेवर ईाान भगवान शिव को आप नहीं देख रहे है। आप अपनी योग दृष्टि से उन्हें देखने का प्रयत्न कीजिये। हम सबके आदि कारण भगवान सदाशिव अपको दिखायी देंगें। जब ब्रह्माजी ने योग दृष्टि से देखा तो उन्हें त्रिाुल धारण किये परम तेजस्वी नील वर्ण की एक मूर्ति दिखायी दी। उन्होंने नारायण से पूछा—ये कौन है?

नारायण ने बताया ये ही देवाधिदेव भगवान महादेव हैं। ये ही सबको उत्पन्न करने के उपरान्त सबका भरण-प्रोाण करते है। और अन्त में सब इन्हीं में लीन हो जाते है। इसका न कोई आदि है न अन्त यही सम्पूर्ण जगत में व्याप्त है।

संदर्भ ग्रंथ

1. My stery of Shiv and Shakti inkhilmantra vigyan org.editorial. mys
2. unn-hp.org\www.music'music2
3. https\\www.prabhtkhabar.com. news

निमाड़ी लोक साहित्य में शिवशक्ति

मधुबाला मारू
शोधार्थी (हिन्दी) वाग्देवी भवन विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन
ईमेल-kailashmaru281@gmail.com

"शैव पुराणों" में भगवान शिव की प्रधानता के कारण शिव को परमात्मा तथा शक्ति को उनकी अनुगामिनी बताया गया है इसी के समानान्तर "शाक्त" पुराणों में शक्ति (परमत्व) तथा भगवान शिव को अनुगामिनी बताया गया है। परमत्व अर्थात परम आनंद ,परमात्मा, चित्तशक्ति, चेतनता ये सभी शक्ति के रूप कहे जाते। इस शक्ति के प्रभाव से स्वयं शिव भी मुक्त नहीं रह पाये है। श्रृष्टि में शक्ति का स्वरूप प्रत्येक जीव-जन्तुओं में चेतनता के रूप में विराजित है। किन्तु शक्ति को साक्षात्कार करने का सौभाग्य मनुष्य मात्र को ही है। क्योंकि शक्ति मे अपने परम ज्ञान को जानने समझने कि बुद्धि अर्थात वह चेतन्यता जो स्वयं को शिवत्व में लीन कर सके वह मानव में ही है। इसलिए संसार का प्रत्येक मानव कर्म योग द्वारा, ध्यान योग द्वारा, धर्म योग द्वारा उस शक्ति को प्रसन्न करता है। इसी सापेक्ष मे म. प्र. के निमाड़ अंचल के लोकजन एक लोक साहित्य में अलग अलग नाम एवम स्वरूपों से जाना जाता है।

सारे ब्रह्मांड के रचियता, संसार को माया से मोहित करने वाले निमाडी लोक जन गणगोर पर्व को शक्ति की भक्ति के रूप मे मनाते हैं। यह पर्व विशेषतः गणगौर (पार्वती) एवं धनियर राजा (शिव) कि आराधना में नों दिनों तक मनाया जाता है। यहाँ के लोकजन इस पर्व के द्वारा बेटी गणगौर एवं जमाई धनियर राजा को अपने मायके (निमाड़) में लाते है तथा नो दिनों तक प्रत्येक दिन गणगौर की पूजा अर्चना कर मान मनुहार एवं भाव विहलित लोक जन नाचता गाता एवं बेटी गणगौर की आराधना करता है। तथा तीज के दिन बेटी को थोड़ा सा भात (धानी) को पोटली बांध कर नम आँखों से विदाई दी जाती है। विदाई के समय लोगों द्वारा अपनी इच्छा को पूर्ण करने की माता से प्रार्थना की जाती है। बड़े उल्लास से मनाये जाने वाले इस पर्व पर यहाँ का लोकजन घर में अपनी बेटी की शादी सा माहौल महसूस करता है। इस पर्व में प्रत्येक पल शक्तिमय हो जाता है शक्ति के प्रभाव से भरपूर हो जाता है।

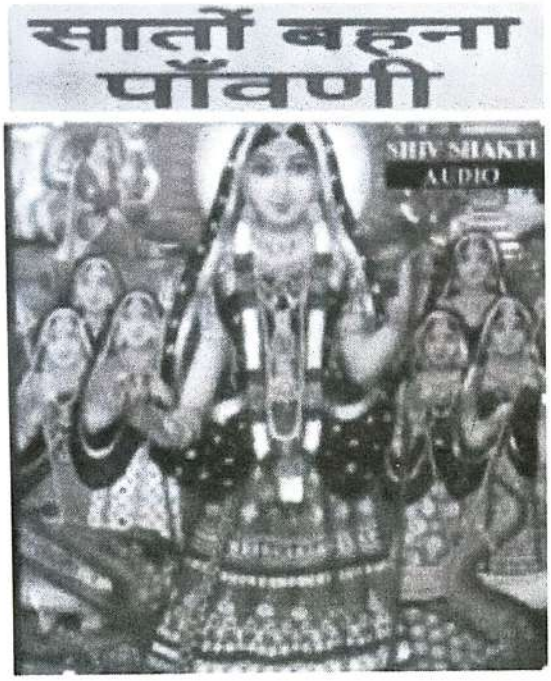

डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल ने लिखा है "कि चैत्र विदी दशमी से चैत्र सुदी तीज तक के नो दिनों में मनाये जाने वाला यह गणगौर का उत्सव निमाड़ की विशेषता है। इस अवसर पर शिव-पार्वती, ब्रम्हा-सरस्वती, विष्णु-लक्ष्मी तथा चंद्र-रोहिणी की वंदना के गीत गाए जाते है।" इसमें त्रिदेवी के स्वरूपों की पूजा की जाती है जो माँ शक्ति ही है। इस वृत में सबसे अधिक रनू बाई अर्थात माँ भगवती के गीत गाए जाते है। यहाँ हर घर में सभी जन मानस रनू बाई के प्रति अपनी आस्था और विश्वास रखते है तथा भावो से भरपूर माँ की हर संभव सेवा को तत्पर रहते है। माँ शक्ति के इस पर्व के प्रति निमाड़ी लोक जन की आस्था एवं विश्वास के कारण इस पर्व की महिमा से देश का प्रत्येक अंचल परिचित है। भले ही वह इससे सीधा सरोकार नहीं रखता हो, माँ शक्ति के इस पर्व की महिमा का उल्लेख करते हुए बसंत निर्गुणेजी कहते हैं कि रनू बाई ही निमाड़ी लोक गीतों की अधिष्ठात्री देवी है। इसके गीत में नव रात्रि से आने का संकेत रनू बाई की पहिचान के लिए महत्त्वपूर्ण है।

एक गीत में रनू बाई को रानी कहा गया है लोक जन अपनी आस्था, भाव और विश्वास को ईश्वर या माँ शक्ति के विभिन्न गीतों के माध्यम से प्रस्तुत करते है। निमाड़ी लोक साहित्य में शक्ति स्वरूपा माँ के विभिन्न एवं महत्वपूर्ण रूपों का उल्लेख मिलता है। जिसमें लोक कथाओं, लोक गीतों एवं लोक नाट्य के द्वारा शक्ति की महिमा को विशेषतः समझा जा सकता है। आज भी लोग जन-गीतों द्वारा शक्ति की महिमा का वर्णन करते हैं। एक गीत में रनू बाई के मंदिर का वर्णन है जिसमे आसन पर रनूबाई विराजित है और भक्तों के लिए मंदिर के द्वार खोल देती है। वहीं दूसरे गीत में कहा गया है की रनू बाई बाँझ स्त्री की कोख भरकर एक पुत्र रत्न देती है। वहीं गणगौर के अधिकांश गीतों में धनियर राजा को प्रथम पंक्ति से ही सम्बोधित किया गया है।

देवी आज म्हारा अंगना मं ऽ लाल छड़ो देवासे

देवी आज म्हारा अंगना मं ऽ रनुबाई रमता आवसे

देवी आज म्हारा अंगना मं ऽ गौरीबाई रमता आवसे

देवी आज म्हारा अंगना मं ऽ धनियर जी का घोडीला

देवी आज म्हारा अंगना मं ऽ लाल छड़ो देवासे।

इस गीत के माध्यम से निमाड़ी लोक जन शक्ति स्वरूपा माँ दुर्गा के साथ शिव के प्रति भी

अपने प्रगाढ़ विश्वास की कहानी उद्घृत होती है। शक्ति स्वरूपा गणगौर की महिमा की एक जीवंत कहानी माँ की मन्नत लेना पुराने समय से ही चली आ रही परंपरा है। जिसे लोग आज भी मानते है। पूराने समय में न जाते हुए देवी के चमत्कार की हाल ही की घटना बताती हूं। चम्पालाल मालवीय ग्राम उमरखली जिला खरगोन ने अपने यहाँ गणगौर रथ रोकने की मन्नत मानी ताकि उनके लड़के के घर लड़का हो जाए। उनके यहाँ माँ के आशीर्वाद से पोते का आगमन हुआ जिस साल पोता हुआ उसी वर्ष रथ रोकना था। किंतु चम्पालाल कई वर्ष तक मन्नत टालता रहा फिर एक दिन वह लड़का पानी में डूब कर मर गया। घर मे विवाद हुआ चम्पालाल को अपनी गलती का अहसास हुआ उसने अगले वर्ष माता के रथ को रोककर अपनी मन्नत को पूर्ण किया तत्पश्चात माता की कृपा से कुछ समय बाद इनके घर पुनः एक नन्हे मेहमान का आगमन हुआ यह लड़का भी पहले वाले लड़के जैसा ही था। इस घटना को देखकर वहां के लोकजन इसे देवी की माया या माता का चमत्कार ही मानते है। यहाँ के जनमानस का मानना है कि गणगौर के ज्यारे में साक्षात् माँ भवानी विराजित होकर प्रत्येक घर पर सेवा ग्रहण करने एवं सभी को अपना आशीर्वाद प्रदान करने आती है। संसार की हर शक्ति उसी पराशक्ति का स्वरूप है।

निमाड़ी लोक साहित्य में उस परम शक्ति का अगला रूप विंध्याचल और सतपुड़ा के बीच बहती माँ नर्मदा के रूप में देखा जा सकता है। इसके किनारे बसने वाले निमाड़ी लोक जन प्रतिदिन सूर्योदय से पूर्व उठकर स्नान, दीप, आरती द्वारा माँ नर्मदा की पूजा अर्चना कर अपने दिन की शुरुआत करते है।

"गंगे च यमुने! चैव! गोदावरी! सरस्वती! सिन्धु! कावेरी! जलेऽस्मिन सन्निधिं कुरु।"

ऐसी मान्यता है कि शक्ति स्वरूपा मां नर्मदा के दर्शन मात्र से ही पाप का क्षय होता है तथा पुण्य लाभ मिलता है। कई पुराणों में शक्ति स्वरूपा मां नर्मदा का शुभ वर्णन मिलता है। बसंत निर्गुणे जी ने शक्ति स्वरूपा माँ नर्मदा का वर्णन करते हुए लिखा है कि नर्मदा संसार की एक मात्र ऐसी नदी है, जिसकी पैदल परिक्रमा की जाती है। नर्मदा का निमाड़ के लोक जीवन और संस्कृति से बहुत गहरा रिश्ता है। मान्यता है कि मां नर्मदा शिव पुत्री है और शिव उसके किनारे सदैव निवास करते है। नर्मदा रूद्र, देह, समुद भुता है नर्मदा के रूप में शिव शक्ति स्वयं यहाँ विराजमान है। शिव शक्ति यहाँ के लोक जन के कल्याणार्थ निर्मल जल के रूप में बहती है तथा यहां के जन मानस का पोषण करती है। शक्ति के रूप में जो विश्वास लोक जन के मन में विराजित है वह ईश्वर स्वरूपा माँ आद्यशक्ति जन मानस के विश्वास को कभी खंडित नहीं होने देती है। जन मानस मे देव रूप में विराजित होकर सबके कल्याणार्थ भक्तों को माँ दर्शन देती है।

बसंत निर्गुणेजी ने शक्ति स्वरूपा माँ नर्मदा की महिमा का उल्लेख करते हुए लिखा है कि आदी शंकराचार्य द्वारा नर्मदाष्टकम् में शिवजी की जटाओं से प्रकट होने वाली रेवा के किनारे भील भाट, ब्राह्मण, विद्वान और धूर्त सभी उसके पवित्र जल में नित्य स्नान कर पुण्य लाभ लेने की बात कही है। नर्मदा के तटवर्ती निकुंज युवक और युवतियों के लिये अभिसार ओर प्रणय गीत गाने के लिए सदैव तैयार रहते है। देवता, ऋषिमुनि, और साधु संतों के लिए नर्मदा तट सदैव साधना की स्थली और मुक्ति का मार्ग रही है। पुराणों में नर्मदा को वेद गर्भा कहा गया है। निमाड़ क्षेत्र में पड़ने वाले खंडवा जिले में ओंकारेवर नामक तीर्थ स्थल जो की 12 ज्योतिर्लिंग में से एक है का भी उल्लेख्य निमाड़ी लोक साहित्य में देखा जा सकता है। ओंकारस्वर में शिव और शक्ति की पूजा यहाँ के लोकजन ही नहीं अपितु यहां की पृकति भी करती है। जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण हम यहां की पहाड़ियों के द्वारा ओम आकार का बनना जो साक्षात शिव के आशीर्वाद का प्रतिक माना जाता है। यह भूमि स्वयं शिव-नाद करती हुई प्रतीत होती है। यहाँ का प्रत्येक पुष्प

हर्षित हो हो कर शिव शक्ति के चरणों में अर्पित होने को आतुर है। देश विदेशो से जन मानस इस मंदिर में विराजित शिव लिंग के दर्शन मात्र से अपने समूल पापों का नष्ट करते है। यहाँ शिव और शक्ति को अलग नहीं माना जाता है। यहाँ शिव ही शक्ति है एवं शक्ति परम आनंद है। यहाँ के जन मानस का प्रति दिन शिवाय शक्ति स्वरूपाय के नाम से जप एवं उपवास पूजा पाठ से प्रारम्भ होता है। तथा उनके भजनों, आरती, कथाओं पर समाप्त होता है। यहाँ के गीतों में उल्लेखित है कि शक्ति की कृपा के पात्र बने भक्तों द्वारा ज्योति जलाना, निःसंतान को संतान देना, निर्धन को धन तथा श्रद्धालुओं को मुक्ति ज्ञान का मोक्ष प्रदान करना माना गया है। साथ ही यहाँ के व्रत, त्यौहार के नाम भी माँ शक्ति के प्रभाव से अछूते नहीं है। अरुंधति व्रत, जानकी नवमी, गंगा दशहरा, गौरी तृतीया, मधु श्रावणी तीज, महाकाली, महालक्ष्मी व्रत, राधाष्टमी, शीतलासप्तमी, हरतालिका तीज, इत्यादि। निमाडी लोक साहित्य में शिव शक्ति या आद्या शक्ति के सन्दर्भ में महिश्मति (वर्तमान में महेश्वर) को देख सकते है। महेश्वर मे शिव शक्ति की आराधना का पूरा इतिहास देखा जा सकता है। शिव के एक आकार प्रथमतः इसका नाम महेश्वर भगवान शिव के नाम महेश के आधार पर पड़ा।

अतः महेश्वर का शाब्दिक अर्थ शिव का घर है जिसका उल्लेख निमाड़ी लोक साहित्य एवं यहां की लोक संस्कृति में देखने को मिलता है। महेश्वर में शिव शक्ति या आद्यशक्ति के एक भक्त की पूरी गाथा का चित्रण आज भी लोकजन के मुखाग्र से सुना जा सकता है। जिसमे सहस्त्रार्जुन द्वारा शक्ति से वरदान प्राप्त करना तथा रावण द्वारा बालू रेत से शिव लिंग को बनाना, शिव लिंग बनाते हुए सहस्त्रार्जुन द्वारा अपनी सहस्त्र भुजाओ द्वारा नर्मदा के पानी को छोड़ देना जिससे रावण के शिव पूजा पुर्ण ना होना एवं शहस्त्रार्जुन द्वारा रावण को पराजित करना साथ ही हैयय वंश का आद्य शक्ति में आस्था और विश्वास रखना तथा अहिल्या बाई द्वारा शिव शक्ति की स्थापना करना एवं स्वयं परमात्मा शक्ति में लीन हो जाना ये सारे इतिहास विदित वर्णन है। जो शक्ति स्वरूपा माँ भगवती की शक्ति एवं चमत्कारों का साक्ष्य देती प्रतीत होती है। बड़े बड़े साहित्य तो क्या लोकजन संस्कृति भी माँ शक्ति की गाथा को चीख चीख कर कहती है। छोटे से छोटे अंचल के लोकजन भी अपने मन में प्रगाढ़ विश्वासो द्वारा पूजा पाठ करते और उपवास करते दिखाई देते है। इसके अलावा देवी के स्वरूपों में निमाड अंचल के उन सेगांवा में जहा माँ लक्ष्मी का मंदिर बना हुआ है वहां माँ लक्ष्मी सुबह छोटी बच्ची दिन में एक नारी एवं शाम को एक बुढिया का रूप लेती है। प्रत्यक्ष दर्शी ऐसे मे माँ द्वारा लोगो को प्रति-दिन समयकाल का आभास करवाना बतलाते है, ताकि हम इस जीवन के मायाचक्र में नहीं फंस कर सदैव अच्छे कर्म करें एवं मन में सच्ची भावना द्वारा माँ शक्ति की आराधना कर सके।

निमाड़ी लोकजन एवं लोकसाहित्य में शक्ति स्वरूपा शिव शक्ति अपनी विशेष पेठ रखती है। सारे संसार को चलाने वाली भगवती स्वरूपा जगत में नारी रूप में अपना अस्तित्व रखती है। निमाड़ अंचल में गणगौर पूजा में माता नर्मदा शिव शक्ति को बेटी के रूप में, ओंकारेश्वर में प्रकृति के रूप में, महेश्वर में इतिहास के ज्ञान एवं खरगोन में समय काल के रूप में देखा जा सकता है। ऐसा प्रतीत होता है मानो स्वयं माँ भवानी अवतरित हो कर यहाँ के जनमानस को अपनी कृपा पात्र बनाना चाहती है। वह निमाड़ की तपती धुप को भी अपने निर्मल जल द्वारा शांत कराती रहती है। महेश्वर के मंदिर में स्वयं शिव का रूप धारण कर सारे अंचल को शिवमय बना रही है। यहां की प्रकृति में भी ओम का आकार बना कर पूरे अंचल को अपना ज्ञान करा रही है। नर्मदा के कण कण को शिव रूप प्रदान कर निमाड़ की भूमि को माँ शक्ति अपनी आँचल में समेटे हुए है उनका भरण पोषण एवं कल्याण करती है।

शिव शक्ति और संगीत

डॉ. मनदीप कौर

सहायक प्राध्यापिका, गुरुनानक गर्ल्ज़ कालेज, यमुनानगर

भारतीय संगीत का प्रत्येक पक्ष धर्म तथा आध्यात्म से अनुप्राणित है। भारतीय विचारधरा सदा से ही आदर्श की भावभूमि पर प्रवाहित होती रही है। हम भारतीय संस्कृति के किसी भी पक्ष का अध्ययन करें तो उसे हम सदा धर्म से जुड़ा हुआ पाएँगें। भारतीय संगीत भी भारतीय विचारधारा की इस विशेषता से पूर्णतः प्रभावित रहा है। संगीत के आदि विद्वानों ने, शास्त्र वेताओं ने संगीत को नाद वेद की संज्ञा दी है तथा कतिपय विद्वानों ने उसकी उत्पत्ति सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी द्वारा बताई है। प्रायः सभी वाद्यों को किसी ना किसी देवी देवता से जुड़ा हुआ बताया गया है। जैसे डमरू का शिव से, मृदंग का गणेश से तथा वीणा का पार्वती तथा सरस्वती से सम्बंध बताया गया है। भारतीय संगीत को अध्यात्मिकता प्रधान कहा जाए तो अनुचित न होगा। धर्म भरतीय संस्कृति का मूलाधर है तथा प्रत्येक ललित कला में चाहे वह संगीत कला हो, चाहे मूर्ति कला हो अथवा चित्र कला हो धर्म का प्रभाव हर जगह मिलता है।

कला की उत्पत्ति व विकास कुछ दिनों में या व्यक्ति विशेष द्वारा सम्भव नहीं है। यह बात संगीत की कसौट पर खरी उतरती है। हमारे धार्मिक ग्रन्थों में संगीत से सम्बन्धित अनेको उल्लेख मिलते हैं। संगीत मानव जीवन का चिरसंगी है और सभी धर्मों और महापुरुषों ने संगीत को परम पवित्र माना है। संगीत की उत्पत्ति के विषय में विभिन्न विद्वानों के भिन्न-भिन्न मत हैं। संगीत की उत्पत्ति के सम्बन्ध में जो भी अभिमत प्राप्त होते हैं वे भी प्रायः धार्मिक अथवा किवदंतियों पर आधारित हैं। कोई भी ऐतिहासिक, वैज्ञानिक तथा प्रमाणिकता की कसौटी पर खरा नहीं उतरता। ऐसा प्रतीत होता है कि लोगों ने अपने देश, काल की परिस्थितियों के अनुसार कल्पनाएँ की हैं। ऐसी भी मान्यता है कि संगीत की उत्पत्ति पशु पक्षियों द्वारा हुई। डा. जोगिन्दर सिंह बावरा के अनुसार आप कोई दो वस्तुएँ लें, उन्हें आपस में टकराएँ घर्षण करें, हवा में लहराएँ तो ध्वनि उत्पन्न होती हैं। मनुष्य को आ, ई, ऊ करने की प्राकृतिक देन है जिसे हम गुनगुनाना कहते हैं। जब किन्हीं शब्दों को गुनगुनाया जाए तो वही गीत का रूप धारण कर लेता है। आवाज का उतार चढ़ाव मानव कंठ में प्रकृति की अमूल्य देन है जो अन्य पशु पक्षियों में नहीं। यह उतार चढ़ाव ही तो स्वर की उत्पत्ति का माध्यम है। शनैः शनैः भाषा ज्ञान की भांति ध्वनि ज्ञान भी होता चला गया। पशु-पक्षी वही स्वर गुंजित कर रहे हैं जो हजारों शताब्दियों पूर्व कर रहे थे तो वे संगीत के जन्मदाता कैसे हो सकते हैं।

विभिन्न धर्मो में अलग-अलग गाथाएँ संगीत की उत्पत्ति के विषय में प्रचलित हैं। फारसी की एक कथा के अनुसार—हज़रत मूसा पहाड़ों पर घूमते फिरते कुदरत के नज़ारे देख रहे थे। तभी आकाशवाणी हुई—"या हज़रत मूसा तू अपना कासा पत्थर पर मार।" उन्होंने ऐसा ही किया। पत्थर के

सात टुकड़े हो गए तथा सात जल धाराएँ बहने लगी जिनसे सात भिन्न-भिन्न ध्वनियाँ उत्पन्न हुई जो सा रे ग म प ध नि कहलाई।

एक यूनानी कथा के अनुसार संगीत की उत्पत्ति 'मूसीकार' नामक पक्षी से हुई है जिसकी चोंच में सात छिद्र हाते हैं जिनसे सात भिन्न-भिन्न ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं। इस पक्षी की संख्या दुनिया में एक ही है। इसकी सम्पूर्ण कथा पढ़ने का सारांश यही निकलाता है कि एक पक्षी की आवाज़ से राग रागनियाँ उत्पन्न हुई हैं। आज यह पक्षी विद्यमान है या नहीं यह खोज का विषय है। किसकी कल्पना सही माने और किस की गलत। वैज्ञानिक युग में मनुष्य प्रगति करते हुए बहुत आगे निकल चुका है और केवल काल्पनिक विचारों पर विश्वास करना कठिन है।

भारतीय संगीत में गायन, वादन, नृत्य या ओर कोई भी कला हो वह केवल मनोरंजन का साधन नहीं था अपितु एक आध्यात्मिक प्रक्रिया भी थी। खास तौर से भारतीय संगीत आपको सृष्टि की सैर करवा सकता है और एक सीमा के बाद सृष्टिकर्ता से आपका संपर्क भी करवा सकता है। संगीत के सम्बन्ध में कोई सह नहीं कह सकता कि इसका जन्म कब और हुआ। फिर भी भारतीय परम्परा अनुसार जिस प्रकार वेद प्रकट करने वाले ब्रह्मा जी माने गए हैं उसी प्रकार संगीत के क्षेत्र में दो आदि देव माने गए हैं–देवाधिदेव शंकर तथा सृष्टि के रचयिता ब्रह्माजी। संगीत मकरंद के रचयिता नारद ने संगीत की उत्पत्ति ब्रह्मा से मानी है किन्तु संगीत रत्नाकर के रचयिता प. शारंगदेव ने संगीतोत्पत्ति सदाशिव से मानी है।[1]

भारतीय संगीत के इतिहास का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि संगीत में सदा आध्यात्मिक अवस्थाओं को मान्यता दी गई है। ऐसी मान्यता कि संगीत की उत्पत्ति वेदों से हुई। वेदों के रचयिता ब्रह्मा जी इस विधा के धारणी थे। उन्होनें यह विधा शिव को, शिव द्वारा सरस्वती को और सरस्वती से नारद को प्राप्त हुई।

भारतीय विद्वानों का मत है कि ओम् शब्द ओ ऽ म इन तीन अक्षरों की संधि से अवतरित हुआ है। ओ ऽ म के तीन अक्ष तीन प्रमुख शक्तियों के द्योतक हैं। आकार + उकार + मकार = ब्रह्मा + विष्णु + महेश (उत्पत्ति करने वाला, पालन करने वाला और संहार करने वाला) शक्तियों का पुंज ईश्वर है और ग्रन्थों में भी यही कहा गया है:

आकारो विष्णु रूद्दिट उकारस्तु महेश्वरः।
माकारेणोच्यते ब्रह्मा प्रणावेन मयो मतः॥

अर्थात आकार ब्रह्मा, उकार विष्णु और मकार महेश का वाचक है। ओ ऽ म वेद का बीज मंत्र है और इसी से सृष्टि की उत्पत्ति हुई है और इसी से नाद, नाद से स्वर और से स्वर से संगीत की रचना हुई है।

शिव पुराण के अनुसार नारद जी ने अनेक वर्षों तक योगसाधना की, तब शंकर जी ने प्रसन्न होकर उन्हें संगीत कला प्रदान की। पार्वती जी की शयन मुद्रा को देखकर शिवजीने उनके अंग प्रत्यंगों के आधार पर वीणा बनाई और अपने पाँचों मुखों से पाँच रागों की उत्पत्ति की। तत्पश्चात् छठा राग पार्वती जी के श्रीमुख से उत्पन्न हुआ। शिव जी के पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण तथा आकाशोन्मुख मुख से क्रमशः भैरव, हिन्डोल, मेघ, दीपक तथा श्रीराग प्रकट हुए एंव पार्वती जी द्वारा कौशिक राग की उत्पत्ति हुई।

संगीतदर्पणकार ने राग भैरव की कल्पना शिव रूप में कुछ इस प्रकार की है :

गंगाधरः शशिकला तिलकस्त्रिणेत्रः, सर्पैविभूषिततनुर्गजकृत्तिवासाः।
भास्वत् त्रिशूलकर एष न मुण्डधारी, शूभ्राम्भरो जयति भैरव आदिरागः॥

जो गंगा धारण करता है, चन्द्रकला का तिलक लगाता है, तीन नेत्रों से युक्त है, सर्पों से विभूषित है गजचर्म का वस्त्र ओढ़ता है, चमकता हुआ त्रिशूल हाथ में रखता है, नरमुण्ड की माला पहनता है, वेत भस्मरूपी वस्त्र धारण करता है उस आदिराग भैरव की जय हो।[2]

हमारे देश में शिव और शक्ति (पार्वती) का सम्बन्ध संगीत से सदा से ही जोड़ा जाता रहा है। ऐसी मान्यता है कि शिव और पार्वती भावमय गान करते हैं और नृत्य भी करते हैं। विशेषकर शिव को वाद्य और नृत्य के अधिक समीप माना गया है। शिव के एक हाथ में डमरू और आनन्द तथा उल्लास में शिव नाच उठते हैं। इस प्रकार की अनेक मूर्तियाँ हमारे मंदिरों और संग्रहालयों में भरी पड़ी हैं। दक्षिण भारत की नटराज शिव की मूर्तियाँ अत्यन्त सुन्दर और दर्शनीय हैं तथा इसे ही ताण्डव नृत्य कहा जाता है। शिव के पैरों में पड़े काल पुरुष के तन पर शिव का नृत्य काल को लाँघ जाता है।

शिव का डमरू एक छोटा सा संगीत वाद्य यंत्र है जो मदारियों और साधुओं के पास अकसर मिल जाता है। शंकु आकार के बने इस ढोल के बीच के तंग हिस्से में एक रस्सी बंधी होती है जिसके दोनों सिरों पर पत्थर या कांसे का एक-एक बाँधा जाता है।

संगीत के अन्तर्गत गायन, वादन तथा नृत्य इन तीनों विधाओं का समावेश होता है। आनन्द की चरमावस्था है नृत्त। भारतीय मान्यता के अनुसार नाट्य वेद की रचना ब्रह्मा जी द्वारा देवताओं के अनुरोध पर हुई। भगवान शिव ने इसमें ताण्डव और पार्वती ने लास्य नृत्य जोड़ा। इस प्रकार नाट्य में अभिनय, गीत और नृत्य का सुन्दर समन्वय हो गया।

ऐसी भी मान्यता है कि सर्वप्रथम शिव तथा पार्वती ने मिलकर नृत्य किया था। एक कथा के अनुसार त्रिपुरासुर का वध करने के लिए शिव ने वीर रस प्रधान नृत्य किया और जब त्रिपुरासुर का वध हो गया तो खुशी में पार्वती ने लास्य नृत्य किया। शिव का नृत्य ताण्डव कहलाया और पार्वती का लास्य कहलाया। रूद्र ताण्डव प्रलयकारी है और जो ताण्डव प्रसन्नता के लिए किया जाता है वह आनन्द ताण्डव कहलाता है। लास्य दो प्रकार का कहा गया : पहला छुरित और दूसरा यौवत। साहित्यदर्पण में इसके दस अंग बताए गए हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं—गेयपद, स्थित पाठ, आसीन, पुष्प गण्डिका, प्रच्छेदक, त्रिगूढ़, सैंधबाख्य, द्विगूढ़क, उत्त्मीत्मक और युक्तप्रयुक्त। वह नृत्य जो भाव और ताल आदि सहित हो, कोमल अंगों द्वारा हो, जिसके द्वारा शृंगार आदि कोमल रसों का उद्दीपन होता हो। विशेषतः स्त्रियों का नृत्य ही लास्य कहलाता है।

आदिदेव महाशिव को ताण्डव नृत्य का जनक माना जाता है। जिस नृत्य में वीर रस का प्रदर्शन होता है उसे ताण्डव कहते हैं। ताण्डव मुख्यतः केवल पुरुषों के द्वारा ही किया जाता है क्योंकि इसमें ऐसे अंगहारों का प्रदर्शन किया जाता है जिन्हें स्त्री द्वारा किये जाने पर असौन्दर्य की सृष्टि होती है। स्त्री शृंगार और कोमलता की प्रतीक है इसलिए उसके द्वारा केवल लास्य नृत्य का प्रदर्शन ही लोकरंजक लगता है। परन्तु ऐसा कोई कठोर नियम नहीं है कि ताण्डव केवल पुरुष और लास्य केवल स्त्रियाँ ही करेंगी।[3] ऐसी मान्यता है कि सम्पूर्ण खगोलीय रचना तथा इसके विनाश की एक लयबद्ध कथा नृत्य रूप में निबद्ध की गई। सम्भवतः इसी के प्रतीक रूप में शिव को नटराज रूप में समृत किया जाता रहा है। एक अन्य मत के अनुसार शिव के गण तण्डु ने ताण्डवनृत्य ऋषियों को सिखाया और ऋषियों ने इसे मनुष्यों में प्रचलित किया। पार्वती ने वाणासुर की पुत्री उषा को लास्य नृत्य सिखाया। उषा ने द्वारिका आकर इस नृत्य का प्रचार किया और द्वारिका से यह नृत्य सौराष्ट्र तक पहुँचा जहाँ इसे अन्य देशों की स्त्रियों ने भी ग्रहण किया। लास्य के सम्पूर्ण अंगों का प्रदर्शन करने के लिए श्रीकृष्ण ने रास मण्डली की स्थापना की। रास के अन्तर्गत अनेक नृत्यों का जन्म हुआ। रास को हल्लीसक भी कहते है। इसमें गीत, वाद्य, नृत्य तथा अभिनय का मेल था। आजकल भरतनाट्यम, कथकली, मणिपुरी तथा कत्थक नृत्य की जो भी शैलियाँ प्रचलित हैं वे सभी रास नृत्य के अन्तर्गत ही आती हैं। अतः भारतीय परम्परा नृत्त का आरम्भ भगवान शिव से मानती है इसी कारण उन्हें नटराज,

अर्धनारीनटेश्वर आदि नामों से सम्बोधित किया जाता है।

सैंकड़ो हज़ारों वर्षों से हिन्दु भक्तगण संगीत के माध्यम से ही अपने आराध्य को रिझाते रहे हैं। भक्ति संगीत के अन्तर्गत कीर्तन का विशेष महत्व है। प्रादेशिक भाषओं में भी कीर्तन की रचनाएँ पाई जाती हैं जिनमें शिव तथा शक्ति का महिमा मण्डन भी किया जाता है। इनमें बंगाल का श्यामा संगीत प्रमुख है। इसे काली कीर्तन भी कहा जाता है। 18वां से 19वीं शताब्दी तक का समय 'श्यामा संगीत' का स्वर्ण युग कहा जाता है। कई विद्वानों ने एक स्त्री में ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश का समन्वय माना है तथा इसी को काली, दुर्गा का रूप में पुराणों में स्थान प्राप्त है तथा इन्हीं की सांगीतिक आराधना को बंगाल में श्यामा संगीत कहा जाता है।

अतः नृत्यकला, योग तथा संगीत से शिव तथा शक्ति का गहरा सम्बन्ध है। शिव तथा शक्ति छहः मुख्य रागों के जनक हैं। डमरूधारी शिव ही वीणा के निर्माता हैं और आदिदेव शिव ताण्डव नृत्य के जनक तथा आदिशक्ति पार्वती लास्य की जननी हैं। शक्ति जब लास्य करती है तो सृष्टि की रचना होती है और शिव का ताण्डव नृत्य सृष्टि प्रपंच का संहारक है।

संदर्भ ग्रंथ

1. डॉ. लालमणि मिश्र, भारतीय संगीत वाद्य, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, पृ.-24
2. संगीत, जनवरी 2014, पृ.-31
3. परमानन्द बंसल, ज्ञान चन्द, संगीत सागरिका, प्रासंगिक पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, पृ.-114

शिव और शक्ति का दार्शनिक स्वरूप

डॉ. मनीषा दुबे, शैलेन्द्र आचार्य

सहायक प्राध्यापक, विक्रम विश्वविद्यालय, टाइम्स कॉलेज आफ एजूकेशन, उज्जैन, दमोह (उज्जैन)

सृष्टि के निर्माण के लिए शिव ने अपनी शक्ति को स्वंय से पृथक किया। शिव स्वंय पुरुष लिंग के द्योतक है। तथा उनकी शक्ति स्त्री लिंग की द्योतक पुरुष एवं स्त्री का एका होने के कारण शिव नर भी है और नारी भी अतःवे अर्धनरनारीश्वर हैं। जब ब्रह्मा ने सृजन का कार्य आरंभ किया तब उन्होंने पाया कि उनकी रचनाएँ अपने जीवनोपंरात नष्ट हो जाएगी तथा हर बार उन्हें नए सिरे से सृजन करना होगा। गहन विचार के उपरांत भी वो किसी भी निर्णय पर नहीं पहुँच पाए। तब अपने समस्या के समाधान के हेतु वेा शिव शरण में पहुँचे। उन्होंने शिवणो प्रसन्न करने हेतु कठोर तप किया। ब्रह्मा की कठोर तप से शिव प्रसन्न हुए। ब्रह्मा के समस्या के समाधान हेत शिव अर्धनारीश्वर स्वरूप प्रकार हुये। अर्ध भाग में वे शिव थे तथा अर्ध भाग में शिवा। अपने स्वरूप से शिव ब्रह्मा का प्रजननशील प्राणी के सृजन की प्रेरणा प्रदान की। साथ ही साथ उन्होंने पुरुष एंव स्त्री के समान महत्व का भी उपदेश दिया इसके बाद अर्धनारीश्वर भगवान अन्तर्धयमान हो गए।

शिव और शक्ति का सबंध

शक्ति शिव की अभिभाज्य अंग है। शिव नर के द्योतक है तो शक्ति का अथवा शक्ति के बिना शिव का कोई अस्तित्व ही नहीं है। शिव अकर्ता है। वो संकल्प मात्र करते हैं शक्ति संकल्प सिद्धी करती हैं–

शिव कारण हैः शक्ति कारक।
शिव संकल्प करते हैं शक्ति संकल्प सिद्धी
शक्ति जागृत अवस्था है शिव सुसुप्तावस्था
शक्ति मस्तिष्क है शिव हदय
शिव ब्रह्मा है शक्ति सरस्वती
शिव विष्णु हैं शक्ति लक्ष्मी
शिव महादेव है शक्ति पार्वती
शिव महादेव है शक्ति पार्वती
शिव रूद्र है शक्ति महाकाली

शिव सागर है जल समान है। शक्ति सागर की लहर शिव सागर के जल के समान है तथा शक्ति लहरों के समान हैं लहर है जल का वेग। जल के बिना लहर का क्या अस्तित्व है? और बेग बिना सागर अथवा इसके जल का यही है शिव एवं उनकी शक्ति सबंध–

शिव का स्वरूप

शिव की महिमा अनंत है उनके रूप, रंग और गुण अनन्य है समस्त सृष्टि शिवमय हैं। सृष्टि से पूर्व शिव हैं और सृष्टि के विनाश के बाद केवल शिव ही शेष रहते हैं ऐसा माना जाता है कि ब्रह्मा ने सृष्टि की रचना की परन्तु जब सृष्टि का विस्तार संभव न हुआ तब ब्रह्मा ने शिव का ध्यान किया और घोर तपस्या की शिव अर्द्धनारीश्वर रूप में प्रकट हुये उन्होंने अपने शरीर के अर्द्धभाग से शिवा अलग कर दिया शिवा को प्रकृति गुणमायी माया तथा निर्विकार बुद्धि के नाम से जाना जाता है इसे अंबिका सर्वलोकेश्वरी त्रिदेव जननी, नित्य तथा मूल प्रकृति भी कहते है। इनकी आठ भुजायें तथा विचित्र मुख है। उंचित्य तेजोयुक्त यह माया संयोग

से अनेक रूपों वाली हो जाती है इस प्रकार सृष्टि की रचना के लिये शिवा दो भागों में विभक्त है। क्योंकि दो ने बिना सृष्टि की रचना अंसभव है।

शिव सिर पर गंगा और ललाट पर चन्द्रमा धारण किए हैं उनके पाँच मुख पूर्वा, पश्चिमा, उत्तरा, दक्षिणा तथा उध्वाजो क्रमशः हरित रक्त धूम नील और पीतवर्ण के माने जाते हैं, उनकी दस भुजाएँ हैं और दसो हाथों में अभय शूल बज्र टंक पाश अकुंश खड़ग घंटा, नाद और अग्नि आयुध है। उनके तीन नेत्र है। वह त्रिशूल धारी प्रसन्नचित, कर्पूर गौर भस्मासिक्तकालस्वरूप भगवान है उनकी भुजाओं में तमोगुण नाशक सर्प लिपटे हैं।

शिव पांच तरह के काम करते है जो ज्ञानभय हैं सृष्टि की रचना करना सृष्टि का भरण पोषण करना सृष्टि का विनाश करना, सृष्टि में परिवर्तन शीलता रखना और सृष्टि से मुक्ति प्रदान करना। कहा जाता है कि सृष्टि संचालन के लिये शिव आठ रूप धारण किये हुए है चराचर विश्व को पृथ्वीरूप धारण करते हुए वह शर्व अथवा सर्व है।

सृष्टि को संजीवन रूप प्रदान करने वाले जलमयरूप में वह सृष्टि के भीतर और बाहर रहकर सृष्टि स्पंदित करने उनका रूप अग्र है सबको अवकाश देने वाला, नृपों के समूह का भेदक सर्वव्यापी उनका आकाशात्मक रूप भीम कहलाता है। संपूर्ण आत्माओं का अधिष्ठाता संपूर्ण क्षेत्रवासी पशुओं के पाश व्याप्त समग्र सृष्टि में प्रकाश करने वाले शिव स्वरूप को ईश्वर कहते हैं। रात्रि में चन्द्रमा स्वरूप में अपनी किरणों से सृष्टि पर अमृत वर्षा करता हुआ सृष्टि को प्रकाश और तृप्ति प्रदान करने वाला उनका रूप महादेव है।

शिव का जीवात्मा रूप रूद्र कहलाता है। सृष्टि के आरंभ और विनाश के समय रूद्र ही शेष रहते हैं। सृष्टि और प्रलय और सृष्टि के मध्य नृत्य करते है। जब सूर्य डूब जाता है प्रकाश समाप्त हो जाता है छाया मिट जाती हैं और जल नीरव हो जाता है उस समय यह नृत्य आंरभ होता है। तब अंधकार समाप्त हो जाता है और ऐसा माना जाता है कि उस नृत्य से जो आनंद उत्पन्न होता है वही ईश्वरीय आनंद है। शिव महेश्वर रूद्र पितामह विष्णु संसार वैद्य सर्वज्ञ और परमात्मा उनके आठ नाम हैं। वे इस तत्वों से बाहर प्रकृति प्रकृति से बाहर पुरुष और पुरुष से बाहर होने से वह महेश्वर है। प्रकृति और पुरुष शिव के वशीभूत है।

दुःख तथा दुःख के कारणों को दूर करने के कारण वह रूद्र कहलाते हैं। जगत के मूर्तिमान पितर होने के कारण वह पितामह सर्वव्यापी होने के कारण विष्णु मानव के भव रोग दूर करने के कारण संसार वैद्य और संसार के समस्त कार्य जानने के कारण सर्वज्ञ हैं अपने से अलग किसी अन्य आत्मा के अभाव के कारण वह परमात्मा है। कहा जाता है कि सृष्टि के आदि में महाशिवरात्रि को मध्य रात्रि में शिव का ब्रह्मा से रूद्र रूप में अवतरण हुआ इसी दिन प्रलय के समय प्रदोष स्थिति में शिव ने ताण्डव नृत्य करते हुये सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड अपने तीसरे की ज्वाला से नष्ट कर दिया। इसलिये महाशिवरात्रि अथवा कालरात्रि पर्व के रूप में मनाने की प्रथा का प्रयलन हैं कविकुल चूड़ामणि बाबा गोस्वामी तुलसीदासजी ने भी अपनी कालजयी कृति "रामचरितमानस" में शिव और शक्ति की आराधना करते हुए लिखा है–

"भवानी शंकरौ वंदे श्रद्वा विश्वास रूपिणौ।
याभ्यां विना न पश्यंति सिद्वाः स्वान्तः स्थमीश्वरम॥

मां भवानी श्रद्वा और शंकरजी विश्वास के प्रतीक है मैं उनकी वंदना करता हूँ जिनके बिना सिद्वजन अपने अतंः करण में स्थित ईश्वर को नहीं देख सकते।

संदर्भ ग्रंथ

1. शिवपुराण में शिवभक्ति–लेखक श्रीराम शर्मा आचार्य
2. अर्द्धनारीश्वर लेख पत्रिका
3. भारतीय दर्शन–डॉ. रामेश्वरी झा
4. शिवदर्शन
5. अंखड ज्योति पत्रिका–डॉ. प्रणव पड्या

कला में शिवशक्ति - उपमहेश्वर

डॉ. मीनू अग्रवाल

एसोसिएट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास विभाग
सदनलाल सांवलदास खन्ना महिला महाविद्यालय,
संघटक : इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
ई-मेल : meenuagrawalssk@gmail.com

इलाहाबाद संग्रहालय की प्रतिमाओं के विशेष सन्दर्भ में

''वागर्थाविव सम्प क्तौ'' देवाधिदेव, असुर संहारक, महादेव, परम योगी शिव शक्ति के बिना शव मात्र रह जाते हैं। भारतीय कला में शिव शक्ति का समन्वय विविध रूपों में दिखाई देता है, विशेषकर अर्द्धनारीश्वर, उमामहेश्वर, कल्याणसुन्दर आदि प्रतिमाओं में। कभी कभी शिव को पार्वती के साथ वृष पर बैठे हुए अंकित किया गया है। शिव पार्वती का संयुक्त अंकन 'अर्द्धनारीश्वर' कहलाता है। इसमें प्रायः दायाँ अंग शिव का और बायाँ अंग पार्वती का अंकित किया जाता हैं। 'अर्द्धनारीश्वर' का यह रूप कुषाण काल से ही मिलने लगता है। लिंग पुराण (99, 8) में लिंग (शिव या पुरुष) और वेदी (उमा या प्रकृति) के संयोग को अर्द्धनारीश्वर कहा गया है—''लिंगवेदीसमायोगात् अर्द्धनारीश्वरो भवेत्''। मथुरा संग्रहालय के एक शिलापट्ट, राष्ट्रीय संग्रहालय नई दिल्ली की अर्द्धनारीश्वर की मृण्मूर्ति, एलिफेंटा के गुहा शिल्प में वृषभारूढ़ अर्द्धनारीश्वर का अंकन कुछ प्रमुख उदाहरण है। कल्याण सुन्दर प्रतिमाओं में शिव पार्वती का विवाह दृश्य दिखाया जाता हैं।

उमामहेश्वर साक्षात् प्रकृति-पुरुष हैं। रघुवंश में कालिदास पार्वती सहित परमेश्वर की वन्दना करतें हैं (''जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ'') ''उमामहेश्वर शिल्प वस्तुतः अर्द्धनारीश्वर का ही प्रतिरूप है जहाँ अद्वैत की भावना मूर्धन्य है।''—ए. एल. श्रीवास्तव, भारतीय कला सम्पदा, पृ.-10, अपराजितपृच्छा, विष्णुधर्मोत्तर पुराण, मत्स्य पुराण, रूपमण्डन, श्रीतत्वनिधि आदि ग्रन्थों में उमामहेश्वर प्रतिमा विधान मिलता है। शिव शक्ति के संयुक्त रूप 'उमामहेश्वर' के उत्कीर्णन की परम्परा कुषाण काल से मिलती है, लेकिन 700 से 1200 ई. के मध्य शिव शक्ति का यह रूप पूरे भारत में कला में सर्वाधिक लोकप्रिय हो गया। उत्तरी भारत में विशेषकर मध्यप्रदेश में यह अत्यधिक लोकप्रिय हुआ। डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव का विचार है कि मध्यकला में मध्यदेश का क्षेत्र प्रतिहार, चाहमान, परमार, चन्देल आदि राजपूतों के शासन में था। ये नरेश अपनी धार्मिक प्रवृत्ति के कारण एक ओर बड़े बड़े मंदिरों के निर्माण में रुचि रखते थे, वहीं दूसरी ओर उनका राजसी भोगविलासमय जीवन उन्हें रीतिकालीन प्रेम प्रसंगों में भी जकड़े हुआ था। सम्भवतः इसीलिए राजकीय संरक्षण में मंदिरों का निर्माण करने वाले कलाकारों ने तत्कालीन नरेशों की अभिरुचि को ध्यान में रखकर उमामहेश्वर की युग्म मूर्ति को अधिकाधिक महत्व दिया। (भारतीय कला सम्पदा, पृ.-18)

उमामहेश्वर मूर्तियों में एक ही पीठिका पर या नन्दी की पीठ पर शिव और पार्वती को साथ-साथ तथा अधिकांशतः आलिंगन मुद्रा में दिखाया गया है। ऐसी मूर्तियों को 'हर गौरी' मूर्ति भी कहते हैं। उमा का दाहिना हाथ शिव के कन्धे पर रहता है जबकि दूसरे हाथ में दर्पण रहता है। पीठिका के नीचे गणेश, कार्तिकेय तथा श्रृंगी को बनाने का विधान शिल्पशास्त्रों में है। दक्षिण भारत में आलिंगन मूर्तियाँ नहीं बनी। उमामहेश्वर मूर्तियाँ सामान्यतः आसीन रूप में निरूपित की गई यद्यपि कुछ उदाहरणों में शिव और पार्वती को स्थानक मुद्रा में भी दिखाया गया है। उमामहेश्वर प्रतिमाओं में पार्वती को सदा शिव की ओर देखते हुए निरुपित किया है जबकि शिव की दष्टि कभी पार्वती की ओर और कभी सामने की ओर होती है।

प्रतिमा लक्षण की दृष्टि से मत्स्य पुराण (अध्याय 260 में श्लोक 11 से 20) के अनुसार उमा महेश्वर की प्रतिमा 'लीलाललितविभ्रम' युक्त हो, शिव को चतुर्भुजी या द्विभुजी, जटाओं से युक्त, चन्द्रमा से विभूषित, तीन नेत्रों से युक्त ('लोचनत्रयसंयुक्तं') बनाना चाहिए। शिव का एक हाथ उमा के कन्धे पर हो जबकि दाहिने हाथ में कमल या शूल हो ('दक्षिणेनोत्पलं शूलं'), बायाँ हाथ कुच पर हो ('वामे कुचभरे करम्'), उन्हें विविध रत्नों से विभूषित ('नानारत्नोपशोभितं'), व्याघ्रचर्म से विभूषित ('द्वीपिचर्मपरिधाना') बनाना चाहिए। शिव के वाम पार्श्व में देवी की मूर्ति हो ('वामे तु संस्थिता देवी'), शिरोभूषण, ललाटतिलक, मणिकुण्डल, हार केयूर आदि आभूषणों से सुसज्जित उमा को शिव के मुख का अवलोकन करते हुए ('हरवक्त्रावलोकिनी') दिखाना चाहिए। देवी लीलीपूर्वक शिव के बाएँ कन्धे का स्पर्श कर रही हों, उनके बाएँ हाथ में दर्पण या कमल हो ('वामे तु दर्पणं दद्यादुत्पलं वा')। पार्वती के दोनो ओर जया, विजया, कार्तिकेय और गणेश को तथा तोरणद्वार पर गुह्यक गणों, मालाधारी विद्याधर तथा वीणाधारी अप्सराओं को बनाना चाहिए।

इलाहाबाद संग्रहालय में अरैल, लाच्छागिरि, भरवारी, कौशाम्बी, गढ़वा, (इलाहाबाद) गुर्गी, जसो, खजुराहो, (म. प्र.) गया (बिहार) आदि स्थानों से प्राप्त 8-9वीं सदी के उमा महेश्वर शिल्प संरक्षित हैं। **जमसोत** से प्राप्त शिल्प में उमा महेश्वर को स्थानक मुद्रा में दिखाया गया है। **गढ़वा** से प्राप्त एक आंशिक खण्डित फलक (इलाहाबाद संग्रहालय) पर उमामहेश्वर आसीन मुद्रा में प्रदर्षित हैं। छतरपुर खजुराहों की प्रतिमा (इलाहाबाद संग्रहालय) में शिव सामने की ओर देखते और उमा शिव की ओर निहारते प्रदर्षित हैं। **गुर्गी, रीवाँ मध्यप्रदेश** से प्राप्त फलक पर उमा महेश्वर का अंकन है पर दोनों के मुखभाग किंचित खण्डित हो चुके हैं। **भरवारी** (इलाहाबाद संग्रहालय) **(चित्र संख्या 2)** की उमा महेश्वर प्रतिमा का दाहिना अधिकांश भाग खण्डित हो चुका है लेकिन अवशिष्ट अंश में कतिपय नवीन बातें दिखाई देती हैं, जैसे आलिंगन मुद्रा में उमा महेश्वर, नन्दी, के अतिरिक्त उमा अपनी गोद में कार्तिकेय को भी लिए हुए हैं तथा गणेश उमा और महेश्वर के पैरों के मध्य खड़ें है। इसके अतिरिक्त शिव के ऊपर दाहिनी ओर तीन शिवलिंग की उपस्थिति स्पष्ट दिखाई दे रही है। **गया, बिहार की काले पत्थर** की 12वीं सदी की मूर्ति (इलाहाबाद संग्रहालय) (चित्र संख्या 3) में चतुर्भुजी शिव उमा के साथ आलिंगन मुद्रा में प्रदर्शित हैं, दोनों के पैर अपने अपने वाहन—वृष और सिंह पर रखे हैं। शिव नीलोत्पल और त्रिशूल लिए एक हाथ से उमा के चिबुक को ऊपर उठाते दिखाए गए हैं।

8वीं 9वीं सदी की इलाहाबाद के निकट **लाच्छागिरि से प्राप्त फलक** (इलाहाबाद संग्रहालय) पर अर्द्धपर्यंकासन मुद्रा में (''लीलाललितविभ्रमम्'') आसीन शिव के बाएँ जांघ पर बैठी उमा शिव के कन्धें पर हाथ रखे हैं, शिव को बाएँ हाथ से उमा का आलिंगन करते हुए दिखाया गया है (''उमैकस्कन्धपाणिम्''), दूसरा दाहिना हाथ अभय मुद्रा में है, अन्य में अक्षमाला और त्रिशूल लिए हैं, देवी के बाएँ हाथ में दर्पण हैं (''वामे तु दर्पणं

शिव की नगरी काशी में तबले की विकास यात्रा

नमन सिंह

जे.आर.एफ., शोधार्थी राजा मानसिंह तोमर संगीत एवं कला विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

संगीत है शक्ति ईश्वर की, हर कण में बसे हैं राम।

रागी जो सुनाये रागिनी, रोगी को मिले आराम ॥

देश और काल की सीमाओं से परे होती है कला और अमर होते हैं उसके साधक कलाकार। धीरे-धीरे कितना ही काल क्यों न व्यतीत हो जाये, किन्तु सच्चे कलाकार अमृत्य होते हैं। उनका नाम सदा अमर रहता है। ऐसे ही अमर कलाकार, विद्वान, दार्शनिक, साहित्य, आदि क्षेत्रों में अपनी-अपनी पूर्णतः सिद्ध करते हुए विद्वानों की नगरी है काशी। भारतवर्ष की प्रसिद्ध नगरी काशी को अति प्राचीन काल से ही देश की सांस्कृतिक केन्द्रस्थली होने का गौरव प्राप्त हुआ है। कला, शिल्प, धर्म, दर्शन, साहित्य, संगीत आदि अन्य क्षेत्रों में इस अप्रतिम नगरी का महत्वपूर्ण योगदान रहा है, जिसने अपने पाण्डित्य की गरिमा व मर्यादा से सम्पूर्ण विश्व में अपनी कीर्ति पताका सदा फहरायी है।

कला के क्षेत्र में काशी का योगदान अतुलनीय रहा है, जिससे सम्पूर्ण संगीत जगत सदा से अभिसिंचित होता आया है। यहां पर गायन, वादन व नृत्य की विविध शैलियों के प्रणेता, मार्गदर्शक, विद्वान तथा कलाविद् के रूप में काशी के महान विभूतियों ने संगीत जगत में अपनी अपार लोकप्रियता से अनेक कीर्तिमान स्थापित कर काशी के मान की पराकाठा को आंका है। काशी की लोकप्रियता का एक उदाहरण है, जो संगीत जगत में अपनी गायन या वादन शैली का स्वयं घराना रूप में प्रतिष्ठित व प्रचलित होना। यहां के संगीतज्ञों में पं. प्रगास सहाय, मिश्री जी, पं. भैरों सहाय, पं. दरगाही मिश्र, भगवान जी 'किन्नर', पं. बीरू मिश्र, पं. राम सहाय, पं. गुदई महाराज, विदुषी सितारा देवी, विदुषी गिरिजा देवी, पं. छन्नू लाल मिश्र, पं. किशन महाराज, पं. रविशंकर, उ. विस्मिल्लाह खां, पं. राजन-साजन मिश्र जी आदि ऐसे अनेकों विद्वान हुए हैं, जिन्होंने सम्पूर्ण संगीत जगत में बनारस/काशी/वाराणसी की प्रतिष्ठा में चार चाँद लगाने का कार्य किया है। इसी क्रम में एक ऐसे विद्वान व समर्थवान कलाकार हुए जिन्होंने संगीत में तबले को एक नया आयाम दिया और बनारस को तबला घराने के रूप में प्रतिष्ठित किया, वे विद्वान हैं, पं. राम सहाय जी। इस घराने की नींव तब पड़ी जब तबला वादन के क्षेत्र में घरानों का विकास अन्य विद्वानों द्वारा नवीन प्रयोग कर व अलग तकनीक से बोलों के निकास द्वारा घराने स्थापित हो रहे थे, तब पं. राम सहाय जी ने उन सभी पांचों घरानों से भिन्न एक अलग घराना स्थापित किया। पं. जी ने पांचों घरानों (दिल्ली, अजराड़ा, लखनऊ, फर्रूखाबाद व पंजाब) से भिन्न एक नवीन शैली जिसमें पखावज की तरह खुलापन, जोरदारी, नवीन प्रकार की बंदिशें जैसे उठान, बांट, लग्गी-लड़ी, फर्द आदि जो अन्य

घरानों से भिन्न है, आदि कलात्मक विशेषताओं से युक्त एक नवीन शैली का निर्माण किया, जो आज संगीत जगत में बनारस घराने के नाम से प्रतिष्ठित है।

घराने की नींव पड़ने से पूर्व भी बनारस में तबला वादन हुआ करता था, लेकिन इसके पूर्व तक यह शैली घराने के रूप में विकसित नहीं थी। तबला प्राचीन काल से लेकर आज के समय तक संगत वाद्य के रूप में ही अधिक प्रचलित रहा है, जैसे कि आज भी हम देख सकते हैं कि किसी संगीत समारोह में गायन, वादन या नृत्य की प्रस्तुति में तबला वाद्य अधिकतर दिखायी व सुनायी पड़ता है। हमारे विद्वानों व कलाकारों के अथक प्रयासों से तबला आज संगत वाद्य के साथ एकल वादन का रूप ले चुका है। तबला वादन में प्रयुक्त होने वाले बोलों में विस्तारशीलता बंदिश व तबले की आवाज को कर्णप्रिय बनाने आदि तकनीकी कारकों में नवीनता द्वारा संगीत जगत में तबला अपना महत्वपूर्ण स्थान बना चुका है। पं. रामसहाय जी ने लखनऊ घराने के उस्ताद मोदू खां साहब से शिक्षा प्राप्त किया। किन्ही कारणवश पंडित जी बनारस आकर अपनी शिक्षा व दीक्षा अपने पांच शिष्यों बैजू जी, परतप्पू महाराज, भगत जी, पं. भैरों सहाय जी (भतीजे) पं. रामशरण मिश्र जी जिनकी शिष्य व वंश बेला से हमारा तबला जगत अपनी पराकाष्ठा पर है। पं. रामसहाय जी के शिष्यों ने पं. जी के अथक प्रयासों को जन-जन तक पहुंचाया। बैजू जी की शिष्य परम्परा में उनके दोनों पुत्रों सूरज प्रसाद और शिव प्रसाद एवं पौत्र हरिदास, गणेशदास तथा ननकू महाराज विख्यात तावलिक हुए, ननकू महाराज नचकरण बाज अर्थात नृत्य के साथ संगत के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध हुए। बैजू जी द्वारा प्रदत्त 'फर्द' बंदिश तबला वादन में विशेष स्थान था। पं. भगत जी तबले के कोषाध्यक्ष माने जाते थे, इनके पास तबले की बंदिशों का विशाल संग्रह था। आपके प्रमुख शिष्यों में पं. भैरों प्रसाद, दीनू मिश्र, बूंदी मिश्र, राजा मियां, तथा अता हुसैन (ढाका, बांग्लादेश) का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इनमें पं. भैरों प्रसाद जी की शिष्य व वंश परम्परा अत्यधिक महत्व रखती है। आपके पुत्र पं. अनोखे लाल मिश्र जो ना धिंधिं ना व धिरधिर जैसे बोलों के पं. अनोखे लाल बादशाह कहलाते थे, और पं. भैरों प्रसाद जी के शिष्यों में पं. महादेव मिश्र जी जो कि तबला वादन के साथ उत्कृष्ट गायक भी थे। आपकी परम्परा में पं. रामजी मिश्र, पं. काशीनाथ मिश्र, पं. ईश्वर लाल मिश्र, पं. छोटेलाल मिश्र, पं. मदन गोपाल मिश्र जैसे अनेक विद्वान कलाकार आपकी परंपरा की बेला है। पं. प्रताप महाराज उर्फ परतप्पू महाराज जी अत्यन्त तेजस्वी सिद्धहस्त, ओजस्वी व प्रतापी कलाकार हुए। इन्होंने माँ काली के सम्मुख संगीत साधना कर माँ काली को प्रसन्न किया और वरदान स्वरूप एक सिद्धहस्त ताबलिक होने का गौरव प्राप्त किया जो आपकी शिष्य परम्परा से अत्यन्त स्पष्ट दिखायी देता है। आपके पुत्र पं. जगन्नाथ मिश्र, शिवसुन्दर मिश्र, वाचा मिश्र (हरिसुन्दर मिश्र) व गुदई महाराज (पं. सामता प्रसाद मिश्र) जी तो अपने प्रपितामह की तरह ही तेजस्वी ताबलिक हुए। पं. सामता प्रसाद मिश्र जिनका उपनाम 'गुदई महाराज' है। पं. गुदई महाराज जी का 'गुदई' नाम उनकी विलक्षण प्रतिभा और बायें के विलक्षण प्रयोग व दाब-गॉस के कारण पड़ा। इनकी परम्परा संगत जगत में महत्वपूर्ण योगदान है। आपके शिष्यों में मुख्यतः पं. कुमार लाल, पं. कैलाशनाथ मिश्र, जे. मैसी, सत्यनारायण वशिष्ठ, शिवशंकर मिश्र, रविशंकर मिश्र जी आदि विद्वान कलाकार आपकी परम्परा के अनुसरण में हैं। 'मस्तराम' के नाम से सम्बोधित किये जाने वाले पं. रामशरण मिश्र जी की वंश एवं शिष्य परम्परा में उनके यशस्वी पुत्र संगीत नायक पं. दरगाही मिश्र जी जो तबला, गायन एवं सितार के प्रकाण्ड विद्वान कहे जाते थे, संगीत की इन विधाओं में समान अधिकार प्राप्तकर्ता थे। पं. दरगाही मिश्र जी ने काशी के अनेक विद्वान कलाकार दिये। 'मस्तराम' जी की परम्परा में पं. सिया जी मिश्र, पं.

रामदास मिश्र (बड़े) विद्याधरी देवी, जद्दन बाई और सिद्धेवरी देवी आदि कलाकारों का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। पं. दरगाही मिश्र जी के पुत्रों क्रमशः पं. सरजू प्रसाद (गायन), पं. गोवर्धन प्रसाद मिश्र उर्फ गौरी प्रसाद मिश्र (सारंगी), व पं. विक्रमादित्य मिश्र 'बिक्कू महाराज' (तबला) जो कि एकमात्र हिन्दू कलाकार हुए, जिनको 'खलीफा' की उपाधि से नवाजा गया। पं. दरगाही जी की वंश व शिष्य परम्परा में तबला शिरोमणि पं. गामा महाराज (रामायण प्रसाद मिश्र), पं. गुदई महाराज, 'मृदंगाचार्य' पं. भोलानाथ पाठक, पं. मुन्नू लाल पखावजी एवं जमीरा के राजा लल्लन बाबू उर्फ शत्रुघन प्रसाद सिंह जी थे।

पं. रामसहाय जी के शिष्य व एकमात्र वंशज के रूप में पं. भैरों सहाय जी हुए, जिनकी परम्परा सर्वाधिक महत्वपूर्ण सिद्ध हो रही है। आपकी तबला संगत अत्यंत बेजोड़ थी, जिस कारण एक बार नेपाल दरबार में उ. नियामतुल्लाह खां (सितार) के साथ आपकी विलक्षण व प्रतिभा सम्पन्न तबला संगत के कारण नेपाल नरेा राणा जंग बहादुर जी ने भेंट स्वरूप तलवार, पगड़ी, घोड़ा, रायफल, आदि वस्तुओं से आपका सम्मान किया था। आपके एकमात्र पुत्र पं. बलदेव सहाय जी जो कि आपके शिष्य भी थे, जिन्होंने संगीत जगत् को अद्वितीय तबला वादक दिये। जिनमें मुख्यतः पं. कण्ठे महाराज, पं. वाचा मिश्र, पं. बिक्कू महाराज (मौसेरे भाई पं. गुदई महाराज) बेनी माधव व रामजी गंधर्व जी काफी विख्यात हुए। आपके 4 पुत्रों क्रमशः दुर्गासहाय, लक्ष्मी सहाय, देवी सहाय व भगवती सहाय जी अच्छे ताबलिक हुए जिन्होंने आपकी परम्परा को गतिमान किया। आपकी परम्परा में मुख्यतः पं. कंठे महाराज, पं. किशन महाराज, आशुतोष भट्टाचार्या, नाटू बाबू, विश्वनाथ बोस, पं. शारदा सहाय, शीतल प्रसाद मिश्र, कुमार बोस, सुखविन्दर सिंह 'नामधारी', पं. संजय सहाय (संजू सहाय) जी आदि वे मूर्द्धन्य विद्वानकलाकार हुए, जिन्होंने बनारस घराने की मान-मर्यादा व कीर्तिपताका सदैव से फहरायी है।

बनारस में तबले की आधारशिला स्वरूप पं. रामसहाय जी जो तबले के क्षेत्र में हस्ताक्षर सा प्रतीत होते हैं, उनके अथक प्रयास, कर्मठता, समर्पणता, निश्छलता, आदि गुणों से सम्पूर्ण बनारस ही नहीं अपितु देश-विदेशों में घराने की धूलि विद्यमान है। आपके शिष्य प्रशिष्यों से सम्पूर्ण संगीत समाज आपको अपने समक्ष पाकर गौरवान्वित होता है।

काशी, भगवान शिव की नगरी रही है। ऐसा माना जाता है कि शिव के डमरू पर काशी नगरी बसी हुई है। बनारस घराने का तबला पूरी तरह शिव को समर्पित है। यह पहला घराना था जो तबला सहित अनेक अवनद्य वाद्यों को ईश्वर से जोड़ता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. तबला पुराण, पं. विजय शंकर मिश्र
2. काशी की संगीत परम्परा, पं. कामेश्वर नाथ मिश्र
3. पखावज और तबला के घराने एवं परम्पराएं, डॉ. आबान ई. मिस्त्री
4. तबले का उद्गम्, विकास और शैली, योगमाया शुक्ला
5. भारतीय सांगीतिक जगत में बनारस घराने का योगदान, रेनू जौहरी

शिव शक्ति की प्रतीक तुर्रा कलंगी नाट्य कला

डॉ. प्रभा बजाज

असिस्टेंट प्रोफेसर, संगीत विभाग (H.O.D.) कानोडिया पी.जी. महिला महाविद्यालय, जयपुर

भारतीय इतिहास में मध्ययुग से ही, लोक-नाट्य, लेखन और अभिनय की परम्परा रही है। लोक नाट्य आडम्बरहीन एक ऐसी विद्या है, जो विशाल जन के हर्षोल्लास का प्रमुख आधार एवं मिले-जुले समाज का मंच है। लोक नाट्य लोक मानस प्रणीत वह कला है जिसने लोक-परम्परा एवं लोक संस्कृति को अमूल्य निधि के रूप में संजोकर रखा है। डॉ. श्याम सनेही के अनुसार ''लोक नाट्य, लोक मानस के उल्लासित क्षण की सहज अभिनयात्मक अभिव्यक्ति है, जिसमें भाव प्रवणता और लोकानुगत प्रवृत्तियों के माध्यम से क्षेत्र विशेष की संस्कृति को साकारता मिलती है।''[1]

पौराणिक मान्यताओं के अनुसार स्वयं नटराज शिव ने ''ताण्डव और पार्वती द्वारा'' लास्य नृत्य से नाट्य प्रस्तुत किया।

तुर्राकलंगी नाट्य-उद्भव—मेवाड़ के लोक नाट्यों में तुर्रा कलंगी कला का महत्वपूर्ण स्थान है। यह नाट्य लगभग चार सौ से पांच सौ वर्ष पुराना है। दो पीर संतों ााह अली और तुकनगीर ने ''तुर्राकलंगी ख्यालों'' का प्रर्वतन किया। ये वस्तुतः एक नहीं अपितु मेवाड़ की ख्याल परम्परा के दो भाग हैं। कहा जाता है कि एक बार मध्य प्रदेश के चंदेरी गांव के ठाकुर ने दंगलबाज संत तुकनगीर और फकीर शाहअली को न्यौता देकर दंगल कराया, दो दलों का जमीन पर बैठ कर किसी विषय पर गायकी बद्ध शास्त्रार्थ करना दंगल कहलाया। अतः इस प्रकार के ख्याल बैठकी ख्याल'' या 'बैठकी दंगल' भी कहलाए। इनमें भाग लेने वाले दल को अखाड़ा और अखाड़े के मुखिया को उस्ताद कहा जाता है। राजा के द्वारा प्रसन्न होकर तुकनगीर को तुर्रा, एवं शाह अली को कलंगी भेंट स्वरूप दी। तुर्रा व कलंगी पगड़ी पर सजाए या बांधे जाने वाले दो आभूषण है। तब से दो अखाड़े बने जो 'तुर्रा' और कलंगी के नाम से प्रसिद्ध हुए। तुकलगीर ''तुर्रा के पक्षकार थे तथा शाहअली कलंगी के। तुर्रा को शिव और कलंगी को शक्ति का प्रतीक माना जाता है। इन दोनों खिलाड़ियों ने ''तुर्रा-कलंगी'' के माध्यम से शिव और शक्ति के विचारों को लोक जीवन तक पहुंचाया। इनको पसंद किये जाने का प्रमुख कारण इनकी काव्य रचनाएँ थीं, जिन्हें लोक समाज में दंगल के नाम से जाना जाता है।

ये दंगल जब भी आयोजित होते हैं तो दोनों पक्षों के खिलाड़ियों को बुलाया जाता है, इनमें रात्रि में पहर-दर-पहर काव्यात्मक संवाद (दंगल) होते हैं। इन काव्यात्मक संवादों के नित नए-नए रूप ग्रहण करने से शिव एवं शक्ति के दर्शन का लोक जगत में उच्च स्तरीय काव्यात्मक रूप प्रचलन में आया। लोक कलाओं के विशेषज्ञ डॉ. महेन्द्र भानावत के अनुसार राजस्थान में सर्वप्रथम इन ख्यालों का अखाड़ा चित्तौड़ में सहेन्दुसिंह ने खंडेवर महादेव तुर्रा ख्याल के नाम से प्रारम्भ किया। इसे मराठी ख्याल एवं लावणी भी कहा जाता है। इन दोनों ने तुर्राकलंगी के रूप में अपने-अपने पथ चलाये।

तुकनगीर तुर्रे को अर्थात् शिव को बड़ा मानते हैं और शाह अली कलंगी को अर्थात् शक्ति को। इस लोक संगीतात्मक वाद विवाद में संगीत के माध्यम से प्रश्नोत्तर होते हैं दोनों ही पथ के कलाकार अपने पक्ष को पूर्णतया सर्वोपरि दिखाने का भरसक

प्रयास करते हैं। प्रारम्भ में इसमें आध्यात्मिक पक्ष की प्रधानता रहती थी किन्तु वर्तमान में ईर्ष्यावश एक दूसरे को अपमानित करने की भावना आने लगी है।

तुर्राकलंगी के चरित्र प्रायः वही होते हैं जो अन्य ख्यालों में होते हैं। राजा रानी, और राजकुमार ये तीन ख्याल के प्रमुख पात्र होते हैं। इस नाट्य के प्रमुख केन्द्र घोसुण्डा, चित्तौड़, निम्बाहेड़ा तथा नीमच (मध्यप्रदेश) इन स्थानों में तुर्राकलंगी के सर्वश्रेष्ठ कलाकार दिये हैं। जैसे चेतराम, घोसुण्डा का हमीद बेग, ताराचन्द, ठाकुर ओंकार सिंह, डूंगला के कालूलाल' ढाणी आदि।"[2]

यही एक ऐसा लोकनाट्य है जिसमें दर्शक अधिक भाग लेते हैं। इसमें लयात्मक गायन कविता के बोल जैसा ही होता है। प्रत्येक चरण का जो अन्तिम शब्द होता है। उसी शब्द से उसके बाद वाला चरण प्रारम्भ होता है। साथ ही वही शब्द छन्द के अन्तिम चरण के अन्त में रखा जाता है।

लटक रही जुल्फें, जुल्फों में लट, लट में उलझी बिलकुल।
बिलकुल सिर में बाल, बाल में झाल, झाल में जिसके जुल।।

तुर्रा कलंगी ख्याल कई दिन तक होते हैं।[3] आस-पास के सभी गांव वाले एकत्रित होकर इसका रसास्वादन करते हैं। अब ये लोक नाट्य बैठकी ख्याल के स्थान पर मंचीय जोते जा रहे हैं। ख्याल प्रारम्भ होने के डेढ़ महीने पूर्व ही एक खम्बा गाड़ कर कागज पर ख्याल सम्बन्धी सूचनाएँ लगा दी जाती हैं। जो इस प्रकार होती हैं–

होगा तमासा गढ़ चित्तौड़ में सब आजे देखवा।
पीस सुदी नोमी को तमासो सुण लीजो नर नार॥
तारीख पंदरा जनवरी सनिवार मिल्यो सोमार।
राजगति और देवगति तो है ईश्वर अख्यार ॥[4]

चित्तौड़ का जो भू-भाग मालवा प्रदेश से संलग्न है, इसमें तुर्राकलंगी सम्बन्धी लोक नाट्य और लोक संगीत का प्रार्दुभाव हुआ। काव्य के साथ ही लोक संगीत का आनन्द जनता द्वारा लिया जाने लगा। इसके लिये नवीन रचनाएँ लिखी जाने लगीं किन्तु इनके विषय परम्परागत ही रहे। इनका प्रदर्शन परम्परागत दंगल के रूप में अपने झंडों और अखाड़ों के अर्न्तगत होता रहा। गाने बजाने वाले और अभिनय करने वाले स्वयं ही इसका रंगमंच बनाते हैं। अनेक अवसरों पर अभिनय और नृत्यगान से शून्य व्यक्ति केवल रचनाकार के रूप में ही जाने जाते हैं। तुर्राकलंगी नाट्य कला के माध्यम से अनेक कुशल साजिन्द्र जैसे–सारंगिये, नकारची, तबला वादक, ढोलकियों और शहनाई नवाज आदि प्रकाश में आये।

चित्तौड़गढ़ क्षेत्र में भारतीय लोक नाट्य संगीत की सुसम्पन्न परम्परा रही है। आज भी जिले की अधिकांश जनता अपना मनोरंजन मुख्यतः इसी के माध्यम से करती है। लोक-नाट्य संगीत का विगत में विभिन्न नगरों ओर कस्बों में भी विशेष प्रचलन था, तब छाया चित्र, दूर दर्शन और आकाशवाणी आदि के साधन उपलब्ध नहीं थे। अब इस प्रकार के आधुनिक मनोरंजन के साधनों का प्रसार ग्रामीणों में भी हो रहा है। परिणामस्वरूप लोक-नाट्य संगीत अपनी अन्तिम अवस्था की ओर तीव्रता से अग्रसर हो रहा है।

अँचल के इन लोक नाट्यों में गायन, वादन और नृत्य रूपी त्रिवेणी संगम के सुरम्य दर्शन होते हैं एवं प्राचीन भारतीय संगीत का एक विशिष्ट स्वरूप किसी सीमा तक सुरक्षित मिलता है। खेद का विषय है कि संरक्षण और प्रोत्साहन के अभाव में अब पहले जैसे कलाकारों और लोक-नाट्यों के दर्शन दुर्लभ होते जा रहे हैं। यदि यही अवस्था रही तो आने वाले थोड़े ही समय में भारतीय संगीत-सम्बन्धी यह देन सर्वथा विलुप्त हो जायेगी। अतएव इस दिशा में सम्बन्धित व्यक्तियों को सत्वर प्रयत्नशील होने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. शतदल पत्रिका, लोक मंच अंक, पृ.-सं.1
2. सनाढ्य, डॉ. निर्मला–मेवाड़ का इतिहास, पृ.-सं. 3.5
3. वर्मा, पं. सुखलाल–ख्याल चौबोला, पृ.-सं. 307
4. सनाढ्य निर्मला, मेवाड़ का इतिहास, पृ.-सं. 309

संगीत तथा मूर्तिकला में शिव शक्ति

प्रविण के. आहिरे

आसिस्टन्ट प्रोफेसर, फैकल्टी ऑफ परफोर्मिंग आर्टस,
दी महाराजा सयाजीराव यूनिवर्सिटी, वडोदरा
ई-मेल : pravinahire1969@gmail.com

जहां तक संगीत की उत्पत्ति का प्रश्न है तो यह मनुष्य की सृष्टि के प्रथम दिन से ही हम संगीत के अस्तित्व को मान सकते हैं।

धार्मिक दृष्टिकोण से देखा जाय तो संगीत की उत्पत्ति वेदों के निर्माता ब्रह्माजी द्वारा हुई। ब्रह्माजी ने आगे यह कला शिव को, शिव ने सरस्वती को, सरस्वती ने नारद मुनि को तथा नारद मुनि ने गन्धर्व किन्नर और अप्सराओं को संगीत की शिक्षा दी। वहाँ से ही भरत, नारद और हनुमान आदि ऋषि संगीत कला में पारंगत होकर भू-लोक (पृथ्वी) पर संगीत कला के प्रचारार्थ अवर्तीण हुए।

ऐतिहासिक दृष्टि से अगर देखा जाय तो भारतीय परंपरा में संगीत का उद्‌गम स्थान वेदों से माना गया है।

'ओम' शब्द वेद का बीज मन्त्र है। अ, उ और म् यह तीनों ईश्वरीय शक्ति के द्योतक है।

अ ब्रह्मा की शक्ति का द्योतक है।

उ विष्णु की शक्ति का द्योतक है।

म् महेश की शक्ति का द्योतक है।

इन तीनों अक्षरों के संयोग से 'ओम्' शब्द बना है। जो शिव शक्ति का द्योतक है। संगीत के सात स्वर (सा, रे, ग, म, प, ध, नि) आदि 'ओम्' शब्द के ही अन्तर्विभाग हैं। केवल इतना ही नहीं 'ओम्' शब्द में लय तथा ताल का भी समावेश है।[1]

संगीत की व्याख्या :

"गीत वाद्यं च नृत्यं त्र्यं संगीतमुच्यते"

अर्थात् गायन, वादन तथा नृत्य इन तीनों कलाओं के समावेश को संगीत कहते हैं।

भारतीय परम्परा में भगवान शंकर को नृत्य का प्रवर्तक माना गया है। नटराज, भगवान शिव का ही एक रूप है। नटराजजी को नृत्य का स्वामी माना गया है। भगवान शिव के तांडव के दो स्वरूप है एक रौद्र तांडव तथा दूसरा आनंद तांडव है। पहला उनके क्रोध को दिखाता है और दूसरा आनंद प्रदान करने वाला तांडव है। प्राचीन आचार्यों के मतानुसार शिव के आनंद तांडव से सृष्टि का अस्तित्व तथा रौद्र तांडव से सृटि का विलय हो जाता है।

नटराज हमारे समक्ष अक्सर मूर्ति माध्यम से प्रदर्शित होते रहे हैं। नटराज की मुद्रा और कलाकृति के विषय में कई ग्रंथो में चर्चा की गई है।

नटराज की मूर्ति कांस्य, पत्थर तथा पंच धातु से बनाई हुई पाई जाती है।

ओड़िशा के आसानपत गांव में पुरातात्विक स्थल में सबसे पहले ज्ञात नटराज कलाकृति में से एक है।

नटराज को चित्रित करने वाले पत्थर, 6वीं शताब्दी के आसपास के एलोरा गुफाएँ (महाराष्ट्र), एलीफेंटा गुफाएँ तथा बदामी गुफाएँ (कर्नाटक) इत्यादि में पाए जाते हैं। पुरातत्व की खोजों ने

ग्वालियर पुरातात्विक संग्रहालय में आयोजित मध्यप्रदेश के उज्जैन से एक लाल बलुआ पत्थर से बनी नटराज की प्रतिमा प्राप्त की है। जो 9वीं से 10वीं शताब्दी तक की मानी जाती है। बंगाल, आसाम और नेपाल इत्यादि जगह शिव कलाकृति अपने वाहन नंदी, बैल पर नृत्य करते हुए पाई गई है। जिसे क्षेत्रिय रूप से नतेश्वर के रूप में जानी गई है। नटराज कलाकृति आंध्रप्रदेश, गुजरात तथा केरल में भी खोजी गई है। सबसे बड़ी नटराज प्रतिमा तामिलनाडु में नेवेली में है।

नटराज की प्रतिमा में शिवजी की चार भुजाएँ दिखाई देती है तथा उनकी चारों ओर अग्नि के घेरे हैं। उन्होंने अपने एक पांव से एक बोने को दबा रखा है तथा दूसरे पांव को नृत्य मुद्रा में ऊपर की ओर उठा रखा है। उन्होंने अपने पहले दाहिने हाथ में डमरू पकड़ा है। डमरू की आवाज़ सृजन का प्रतीक है। ऊपर की ओर उठे हुए उनके दूसरे हाथ में अग्नि है जो की विनाश का प्रतिक है। उनका दूसरा दाहिना हाथ आशीष मुद्रा में उठा हुआ है जो बुराईयों से रक्षा करता है।

नटराज का जो पांव उठा हुआ है वह मोक्ष दर्शाता है। इसका अर्थ यह है कि शिव मोक्ष के मार्ग का सुझाव करते हैं। जो बौना शिव के पेरों तले दबा हुआ है वह अज्ञान का प्रतिक है। शिवजी अज्ञान का विनाश करते हैं।

शिवजी जब मस्ती में धुमते हुए नृत्य करते थे तब वहां इस नर्तन में समस्त देवगण सम्मिलित होते थे।

शिवजी के इस नृत्य से जो-जो मुद्राओं का आविष्कार होता रहा तब इन सब मुद्राओं को एक-एक करके सम्मिलित करके तण्डु (नन्दीवर) लय-ताल में बारीकी से अभ्यास करने लगे।

शिवजी की आज्ञा से तण्डु ने भरतमुनि को शिक्षा प्रदान की। तण्डु के द्वारा सिखाए जाने के कारण शिवजी का यह नृत्य 'ताण्डव' कहलाया। भरतमुनि ने इस नृत्य की शिक्षा अपने पुत्रो, शिष्यों को दी जिनसे यह नृत्य, लोक में प्रचलित हुआ।

भगवान शिवजी द्वारा रूद्रवीणा तथा रागों की उत्पत्ति :

धार्मिक दृष्टिकोण के अनुसार पार्वती की ायन मुद्रा को देखकर शिवजी ने उनके अंग-प्रत्यंगों के आधार पर रूद्रवीणा का निर्माण किया तथा शिवजी ने अपने पांच मुखों से पांच रागों की उत्पत्ति की। शिव के पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण तक आकाश की ओर सन्मुख होने से क्रमशः भैरव, हिंडोल, मेघ, दीपक और श्री राग प्रकट हुए। तत्पश्चात् पार्वती के मुख से कौशिक राग की उत्पत्ति हुई।[2]

भगवान शिव का अर्ध नारेश्वर स्वरूप और राग बसन्त मुखरी :

नील प्रयालरूचिरं विलसन्त्रिनेत्रं
प्राारुणोत्पल कपाल त्रिशूल हस्तम्।
अर्धाम्बिकेशमनिषं प्रविभक्त भूषं
बालेन्दु ब्रह्म मुकुटं प्रणमामि रूपम् ॥

भगवान अर्ध नारेश्वर के स्वरूप में अर्ध अंग में महासति पार्वतीजी तथा अर्ध में महादेवजी है।

जो निर्विकार होते हुए भी स्वतः की माया से विराट विश्व का आकार (स्वरूप) धारण कर लेते हैं। जिन के गुण-गान से, दर्शन मात्र से दुखः-दर्द का नाश होता है। जो स्वर्ग-मोक्ष की प्राप्ति कराने वाले ऐसे भगवान शंकर को सतकोटी नमस्कार।[3]

राग बसन्त मुखारी राग भैरव तथा भैरवी के मिश्रण से बना है। इस राग के पुर्वांग में भैरव तथा उत्तरांग में भैरवी का मिश्रण है।

भैरव राग की उत्पत्ति भगवान शिव के मुख से तथा भैरवी की उत्पत्ति पार्वती द्वारा हुई थी। इस प्रकार राग भैरव शिव शक्ति का द्योतक है। रागीनी भैरवी आद्या शक्ति पार्वतीजी के शक्ति का द्योतक है।

राग स्वरूप :

सा रे रे सा, रे नि सा ध प, ध नि सा, ध नि सा रे नि सा रे रे ग

ग म रे रे सा, ध नि सा रे सा, सा रे रे ग ग म, ध नि सा रे ग ग म

ग म ध ध प, म प ध नि ध प म, प ग म रे, रे नि ध नि सा । सा रे ग म

प ध प, ग म ध ध, नि ध प म प, ग म प म, प ध नि सां, रें रें सां

रें नि सां नि ध प, ध म प ग म रे रे, सा रे नि ध नि सां।[4]

कहा जाता है कि राग बसन्त मुखारी को शिव शक्ति का स्वरूप मानते हैं। इसे शिव का अर्ध नारेश्वर स्वरूप भी मानते हैं। कलाकार-साधक के लिए यह एक ऐसा राग है। जिसकी निरंतर साधना से संसार के दुःख संकटों से मुक्ति पाकर स्वर्ग-मोक्ष के मार्ग की ओर ले जाने वाला शिव शक्ति तथा आद्या शक्ति का सम्मिलित स्वरूप है।

संदर्भ ग्रंथ

1. यू.जी.सी. नेट, डॉ. संगीता गोरंग, पृ.-37
2. संगीत विशारद, वसंत, पृ.-12, 650
3. शिव उपासना, अंबालाल पटेल, पृ.-63, 64
4. अभिनव गीतांजली, पं. रामाश्रय झा 'रामरंग'

साहित्य में शिव शक्ति

कु. राधा सैनी

जैसा कि आप सभी जानते है कि साहित्य की परिभाषा विभिन्न विद्वानों ने अपने अपने मतानुसार व्यक्त की है, लेकिन मेरे विचार से साहित्य वह है जिसमें सहित का भाव हो अर्थात् जिसमें सबका हित व कल्याण मौजूद हो। चाहे वह साहित्य किसी भी देश या संस्कृति से सम्बन्धित हो क्योंकि साहित्य ही समाज का दर्पण है। समाज में मनुष्यों के द्वारा जो भी गतिविधियां सम्पन्न होती है उन गतिविधियों के द्वारा ही आगे आने वाले समय में मनुष्यों को संस्कारित व जागरुक कर उनका हित करना ही साहित्य का मर्म है। इसके अतिरिक्त साहित्य में बात अगर ईश्वर या धर्म की हो तो वह साहित्य अमरत्व प्राप्त कर लेता है।

भारतीय साहित्य अत्यन्त प्राचीन साहित्य है। इसका क्षेत्र आगे और भी व्यापक व विस्तृत होता जा रहा है। प्रस्तुत विषय को अगर साहित्यान्तर्गत देखा जाये तो जो साहित्य इतना प्राचीनता व वैदिकता से युक्त हो तो और जिसका उद्गम ही वेदों, उपनिषद्ों व पुराणों से हुआ हो वह साहित्य तो शिव की भांति अमर व शक्ति की भांति प्रभावपूर्ण ही होगा।

सर्वप्रथम, वैदिक साहित्य शिव शक्ति को जानने के लिये किसी आधार स्तम्भ कम नहीं है। शैव सम्प्रदाय से अनुप्राणित साहित्य की शृंखला वेदों से शुरू होती है। शिव शक्ति का सम्पूर्ण परिचय पुराणों व उपपुराणों जैसे स्कन्दपुराण (माहेश्वर खण्ड, काशी खण्ड, ब्रह्म खण्ड, प्रभास खण्ड), वाराह पुराण, ब्रह्मवैवर्त पुराण, लिंग पुराण, पद्म पुराण, देवी भागवत पुराण, शिव पुराण, बह्मपुराण, कूर्म पुराण, हरिवंश पुराण, मार्कण्डेय पुराण, वामन पुराण आदि में वर्णित है। इसके अतिरिक्त उक्त विषयानुसार संस्कृत साहित्य में अट्ठारह उपपुराणों में से 'शिवपुराण' जिसकी महत्ता से पूरा विश्व परिचित है उसके अनुसार ''शिव शक्ति का संयोग ही परमात्मा है। शिव की जो पराशक्ति है उससे चित् शक्ति प्रकट होती है चित् से आनन्द शक्ति, आनन्द शक्ति से इच्छाशक्ति, इच्छाशक्ति से ज्ञानशक्ति, ज्ञानशक्ति से क्रियाशक्ति प्रकट होती है'' अतः शिव-शक्ति दोनों मिलकर ही इस जगत् को संचालित करते है। दोनों एक दूसरे के पूरक है शिव के बिना शक्ति अपूर्ण व शक्ति के बिना शिव अपूर्ण। शिवपुराण का संबंध शैव मत से है इस पुराण में प्रमुख रूप से शिवमहिमा व शिवभक्ति का प्रचार प्रसार किया गया। प्रायः सभी पुराणों ,महाकाव्यों, प्रबन्धकाव्यों, उपनिषद्ों में शिव को त्याग, तपस्या, वात्सल्य व करूणा की मूर्ति बताया गया है और साथ ही शिव को सहज ही प्रसन्न हो जाने वाले एवं मनोवांछित फल प्रदान करने वाले ईश्वर है।

संस्कृत व्याकरण के अनुसार 'शक्ति' शब्द 'शक्' धातु में क्तिन् प्रत्यय जोड़ने से निष्पन्न होता है यह शब्द बल, योग्यता, धारिता, सामर्थ्य, ऊर्जा एवं पराक्रम के अर्थ को परिभाषित करता है। इस

अनन्त ब्रह्माण्ड की अधिष्ठाता सत्यस्वरूपा भगवती ही सम्पूर्ण विश्व को शक्ति, स्फूर्ति व सरसता प्रदान करती है। विश्व के समस्त कार्य उन्हीं से उत्पन्न होते है तथा अन्त में उन्हीं में समा जाते है अर्थात् वे ही सृष्टि का पोषण करती है और वे ही उसका विनाश भी करती है। देव हो या देवियां सभी की स्तुति में शक्ति की आराधना ही उसका मूल आधार है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश की संहारकता मात्र शक्ति के कारण ही है शक्ति के बिना कुछ भी सम्भव नहीं। शास्त्रों में शक्ति के तीन भेदों को स्वीकार किया गया है जो प्रभु शक्ति, मन्त्रशक्ति एवं उत्साह शक्ति के रूप में वर्णित है। पौराणिक साहित्य के अन्तर्गत उसका रूप कही तो देवपत्नियों एवं अप्सराओं ने ग्रहण किया तो कही उस शक्ति को काली, दुर्गा, श्रद्धा, सीता, सावित्री, अनुसूया जैसी नारियों ने ग्रहण किया। जिस प्रकार ऋग्वेद के ऋषि एक ओर तो देवों की पूजा को एक ही ब्रह्म मानते है उसी प्रकार देवियों को भी वे एक तत्व मानते है–

अहं रुद्रोभर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वदेवैः।
अहं मित्रावरुणोभा बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा॥

-ऋग्वेद 10/125/1

देवी का कथन है कि "मैं रुद्रों एवं वसुओं के रूप में विचरण करती हूँ। मैं आदित्यों एवं विश्वेदेवों के रूप में निवास करती हूँ, मित्रावरुण को धारण करती हूँ और मैं ही इन्द्र, अग्नि एवं अश्विनीकुमारों की आधारभूमि हूँ। इस प्रकार सिद्ध होता है कि शक्ति तत्व के द्वारा ही यह समूचा ब्रह्माण्ड संचालित होता है। कोई यह कहते नहीं सुना जाता कि मैं विष्णुहीन हूँ, रुद्रहीन हूँ या ब्रह्महीन हूँ। जबकि सभी मनुष्य शक्ति से विरहित होने पर स्वयं को शक्तिहीन होना स्वीकारते हैं–

रुद्रहीनं विष्णुहीनं न वदन्ति जनाः किल।
शक्तिहीनं यथा सर्वे प्रवदन्ति नराधमम् ॥

शक्ति की व्यापकता इस बात से सिद्ध है कि यह मात्र एक स्थान में नहीं, गाँव-गाँव, घर-घर में देवियों के पूज्य स्थान हैं। वैष्णव, शैव, शाक्त, सनातनी हो अथवा यवन या ईसाई, दक्षिणमार्गी हो वाममार्गी, सभी के मत में साक्षात् अथवा परम्परा में शक्ति की उपासना स्वीकृत है।

शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं
न चेदेवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि।

–भगवत्पादाद्यशंकराचार्य जी विरचित
'सौन्दर्यलहरी'

अर्थात् भगवान् शिव शक्ति से युक्त होकर ही सृटि का संचालन करने में समर्थ हो पाते है। भगवती पराशक्ति से युक्त न होने पर उनमें स्पन्दन तक सम्भव नहीं है। इस प्रकार शिव शक्ति के बिना शव समान है क्योंकि वर्तनी रूप में भी शव में जब तक शक्ति की इ की मात्रा न लगे तब तक वह शिव नहीं बन पाता और यहां तो बात सृष्टि के संचालन की है जो और भी ज्यादा महत्वपूर्ण है। समस्त मानव जाति के कल्याण हेतु लिखे गये ग्रन्थों की कल्पना शक्ति के बिना करने लगे तो इन ग्रन्थों की महत्ता निरर्थक एवं अपूर्ण सिद्ध होगी, क्योंकि शक्ति की सहायता से ही रामायण में श्रीराम द्वारा अंहकारी रावण का विनाश दिखाया गया।

संस्कृत साहित्य के अन्तर्गत स्तोत्रों में 'वैदिक शतरुद्रि', उत्पलदेव की 'स्तोत्रवली', जगद्धर भट्ट की 'स्तुति कुसुमांजली', पुष्पदंत का 'शिवमहिम्न स्तोत्र', रावणकृत 'तांडव स्तोत्र' एवं शंकराचार्यकृत 'शिवानंदलहरी' प्रमुख शैव रचनाएं हैं। इसके अतिरिक्त प्रबंधकाव्यों में कालिदास कृत 'कुमारसम्भव', भारवि कृत 'किरातार्जुनीयम्', मंखकरचित 'श्रीकंठचरितम्' एवं रत्नाकर प्रणीत 'हरविजय' आदि शैव ग्रन्थ है।

हिन्दी साहित्य में भी शिव व शक्ति का वर्णन शैव सम्प्रदाय और शाक्त सम्प्रदाय के अन्तर्गत हुआ है। इनके सन्दर्भ में अनेक स्तोत्रात्मक व

प्रबंधात्मक पद्धतियाँ प्रचलित रही पर इसके अतिरिक्त शिव के स्वरूप-ऐश्वर्य का स्वतंत्र वर्णन, हास्य के आलंबन, श्रृंगाार के उपमान एवं क्रांति और विनाश के प्रतीक के रूप में भी उनका चित्रण पर्याप्त रूप में मिलता है। सर्वप्रथम, आदिकाल में अपभ्रां और लोकभ्राा दोनों में शैवकाव्य का वर्णन हुआ है।

शिव को कपालिक भी कहा जाता है इस विषय में हिन्दी के प्रथम कवि सरहपा अपने अदृश्य गुरु कपाल को प्रणाम करते हुये कहते है कि "सर्व प्राणियों को प्रातःकाल जो सूर्योदय दीखता है, वह सूर्य कपालदर्शन ही होता है। यह जो आकाश है, यह विराट कपाल सा ही प्रतीत होता है, और भूमण्डल भी कपाल का सादृश्य रखता है। शेषनाग का फणसमूह, कपालमण्डल सा ही है और सूर्य चन्द्रमा के सिर कपालवत् ही दृष्टिगोचर होते हैं। यह जो प्राणियों के सिर हैं, उन्हीं में प्रकृति ने जटिलतम संरचना की है और समस्त सोच-विचार, संवेदन भाव के आवेग, शब्द स्पर्श, रूप गंध के स्त्रोत, शिरा-धमनियों के सूत्र या केन्द्र कपाल में ही केन्द्रित हैं। मनुष्य की खोपड़ी का प्रतीक देवी का खपर है जिसमें वह रक्तपान करती है। मस्तिष्क को प्रकृति ने अति दृढ़ खोपड़े में ही सुरक्षित किया है, सारे ज्ञान, संवेदन, भावना और संचार का स्त्रोत यह कपाल ही है—यह ब्रह्माण्ड भी कपाल के रूप में कल्पित है। यह जो अण्डाकार विश्व है, वह भी कपालवत् ही है। अतएव कपाल सर्वाधिक उपयोगी और इसलिए पवित्र माना जाता है। कपाल को शरीर के धड़ से काट देने पर देहधारी मृत हो जाता है। अतएव शिव या रुद्र कपाल माला पहनते हैं और काली माता, अक्षोभ्य और हेरुक आदि देवी-देवता सब कपाल मुण्डधारी माने गये हैं। यह प्रतीक रचना है और प्रतीकों से ही साधना होती है। प्रतीक मूल अर्थ को प्रकट करने में सबसे अधिक सहायक होता है। हमने या हमारे नाम से जो साधनाएँ प्रचलित हैं, शास्त्रों और पुराणों में जो साधना जाल वर्णित है, उसमें कपाल की ही प्रधानता है। कपाल अस्तित्व का आधार है, उसके बिना अन्य सब अंग-प्रत्यंग कार्य नहीं कर सकते। अतएव सर्वत्र कपाल का बिम्ब ही प्रमुख है, विश्व या व्यक्ति का दर्शन, कपाल बोध पर आधारित है। गुरु सरहपा आगे कहते है कि कपाल गोलाकार होता है। अतएव सौन्दर्य का आधार भी व त्ताकार माना गया है, मुख, नेत्र, भ्रकुटि, कपाल, जन्हु सब गोल हैं। नारियों का शरीर सुन्दर है क्योंकि उसके अवयव सब गोलाकार हैं, नख से शिख तक सब वृत्ताकार हैं, सम्पूर्ण विश्व में, पर्वत कपालवत् ही हैं, सरिताओं की गति सीधी रेखा में कम वक्र या वृत्त के आकार में अधिक है। यह जो वैश्विक ज्यामिति है, उसका मूल इसी वृत्त या कपाल जैसा है और यह कारण कार्य से उत्पादित या निर्मित है। यह किसी चेतन सत्ता की सृष्टि नहीं हैं, पदार्थ में स्वयं कोई स्वधर्म नहीं है, कोई स्वभाव नहीं है, सब निःस्वभाव है। अतएव शून्य है जिसे सत्य, सौन्दर्य और शिव कहा जाता है। वह कारण कार्य से कार्यरत हैं और यह जो चित्त है, चेतना है, वह नित्य शाश्वत या सनातन आत्मा नहीं है। यह आशुतर विनाशी क्षण-क्षण प्रवाही है। सरहपा के अनुसार अन्तःकरण ही योग की कसौटी है। वह जो भी क्रिया करे या जिस मनःस्थिति में से गुजरे उसमें जो चित्त को निर्द्वन्द्व, निष्पाप और वज्रवत् दृढ़ रख सकता है, वह बुद्ध है, वह सिद्ध है, वह तथागत है, वह शिव है।

सिद्ध साहित्य के पश्चात् नाथ साहित्य जिसका शैव सम्प्रदाय से अटूट सम्बन्ध है। गोरक्ष को शिव का रूपान्तर मानना, हठयोग, शिव तथा उनके भैरव रूप की पूजा आदि इसके प्रमाण है। नाथों ने शिव, शक्ति और भैरव के मन्दिरों में पुजारी रहकर भक्तिपरक साधना में शैव भक्तों को नेतृत्व प्रदान किया।

वैदिक-अवैदिक और जंगली संस्कृतियों का संगम आधुनिक शैव सम्प्रदाय में हुआ है। इतना ही नहीं शिव-रुद्र मत में ब्राह्म, शाक्त (शक्ति), वैष्णव, नाग आदि सम्प्रदायों का सम्यक् समावेश है। शिव अवैदिक भक्तों के आराध्य महादेव या शिव और वैदिक काल के रुद्र में सामंजस्य का परिणाम है। वेदों ने रुद्र को विनाशकारी प्राकृतिक शक्तियों का

प्रतीक माना है। शिव का अर्द्धनारीश्वर रूप सैंधव सभ्यता के युग में भी लोकप्रिय रहता था। इस सभ्यता में शिव को उत्पादन देवता के रूप में भी पूजा जाता था। यह शिव तथा शक्ति की जो उपासनाएँ प्रचलित रहती थी उनको मिलाने तथा शिव-शक्ति युक्त परम पुरुष की आराधना की ओर आकर्षित कराने के लिये रचा गया होगा। पुराणों ने इसकी व्याख्या करने के लिये कई कहानियाँ प्रस्तुत कीं। वे शिव के नर और नारी रूपों में अपने को विभाजित करने और फिर एक को दूसरे से अभिन्न करके मिला देने तथा पार्वती के प्रेमवश शिवरूप से तादात्म्य प्राप्त करने के उल्लेख करती हैं। इसलिए शैवमत तथा शाक्त सम्प्रदायों का निकटतम सम्बंध है। शैवमत में शिव का जो स्थान है वहीं शाक्त सम्प्रदायों में शक्ति का है। शक्ति शैव सम्प्रदायों में शिव के आदेशों का पालन करती है, परन्तु शाक्त सम्प्रदायों में शिव शक्ति के सामने निस्सहाय बतलाये जाते है। शाक्त सम्प्रदाय इतना प्रभावशाली था कि अन्य सम्प्रदायों को भी विवश होकर शक्ति कल्पना अपनानी पड़ी। शाक्तों के अनुसार मोक्ष चित्स्वरूपा देवी से तादात्म्य प्राप्त करना मात्र है। शिव और शक्ति में कोई भेद नहीं क्योंकि वे यथाक्रम परमतत्व के पुरुष और स्त्री के प्रतिनिधि हैं। इनमें से एक का दूसरे के बिना काई अस्तित्व नहीं है। शैव जब संसार के. ाासक पुरुष तत्व की उपासना करते हैं तब. ाक्त संसार भर में विद्यमान शक्ति की आराधना में संलग्न रहना चाहाते हैं।

इसके बाद आदिकाल के और भी ग्रन्थों में शिव शक्ति की उपस्थिति दिखाई गई है। ग्यारहवीं शताब्दी में रचित एक लोकभाषा काव्य है इसमें ढोला और मारवणी की सहायता करने के लिये शिव पार्वती प्रकट होते है। चौदहवीं शताब्दी में मिथिला के महाकवि विद्यापति ने शताधिक शैव गीतों का सजृन किया। उन्होंने महेशबानी और नचारी के नाम शिवभक्ति से सम्बन्धित अनेक गीतों की रचना की, महेशबानी में जहाँ शिव के परिवार के सदस्यों का वर्णन, देवाधिदेव महादेव भगवान शंकर का फक्कर स्वरूप, दुनिया के लिये दानी, अपने लिये भिखारी का वेश, भूत-प्रेत, नाग, बसहा बैल, मूसे और सयुर सभी का एक जगह समन्वय, चिता का भष्म शरीर में लपेटना, भांग धथुर पीना आदि शामिल है तो दूसरी ओर नचारी में एक भक्त भगवान शिव के समक्ष अपनी विव्राता या दुःख नाचकर या लाचार होकर सुनाता है एक उदाहरण महेशबानी का देखिये–

अगे माई जोगिया मोर जगत सुखदायक।
दुख ककरो नहिं देल ॥
दुख ककरो नहिं देल महादेव,
दुख ककरो नहिं देत।
अहि जोगिया के भाँग भुलैलक।
धथुर खुआइ धन लेल ॥

इस गीत में कवि एक महिला के माध्यम से कुछ इस प्रकार की बातें भगवान शंकर से कहवाना चाहते हैं–"मैं क्या बताऊँ। मेरा अनमोल जोगी अर्थात् भगवान शंकर समस्त संसार के प्राणियों को सुख देने वाला है। यह किसी को दुःख देना जानता ही नहीं। इस मस्त जोगी को भांग एवं धतूरा पिलाकर लोगों ने बदले में अपार धन का वरदान लिया है।"

भक्तिकाल में मिथिला के कृष्णदास, गोविंद ठाकुर तथा हरिदास आदि ने स्वतंत्र रूप से शिवमहिमा एवं उनके ऐश्वर्यप्रतिपादक पदों का निर्माण किया। मिथिलेत्तर प्रदेशों के तानसेन, नरहरि एवं सेनापति ने भी शिव के प्रति भक्तिभाव से पूर्ण अनेक कवित्त रचे।

सूफी कवि जायसी ने शैवमत से प्रभावित होकर 'पद्मावत' में अनेक शैव तत्वों का प्रतिपादन किया। उन्होंने शिवशक्ति या रसायनवाद के सभी उपकरणों को मुक्त भाव से स्वीकार किया एवं राजा रत्नसेन जब सिंहलगढ़ जाता है तो वह एक मन्दिर में जोगी का वेश धारण कर तप करके उसकी प्रतीक्षा करता है फिर शिव-पार्वती ने सिद्धि गुटिका प्रदान कर पद्मावती को प्राप्त करने का मार्ग प्रास्त

किया। इसके बाद जोगी रतनसेन पर जब गन्धर्वसेन आक्रमण करता है तब भी वे (शिव-शक्ति) भाट-भाटिनी के रूप में उसकी सहायता के लिये पहुँच जाते है।

महाकवि तुलसीदास ने 'विनयपत्रिका' में शिव के प्रति भक्तिभाव से पूर्ण अनेक पदों की रचना की एवं 'पार्वतीमंगल' जैसे स्वतंत्र ग्रन्थ में शिवविवाह की कथा को प्रथम बार लोकभाा में प्रबंधात्मक रूप प्रदान किया। 'रामचरितमानस' के आरम्भ में भी शिवकथा कही गई है और शिव-उमा-संवाद के रूप में रामकथा को शैव परिवेश प्रदान किया है। रामचरितमानस में शिव स्तुति देखिये–

नमामिशमीशान निर्वाण रूपम्।
विभुं व्यापकम् ब्रह्म वेदस्वरूपम् ॥
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं शिवस्तुति।
चिवाकाश्माकाशवासं भजेऽहम् ॥

सूरदास ने भी सूरसागर में अंतर्कथा के रूप में शिवजीवन के अनेक प्रसंगों को गीतिप्रबंध का रूप देकर प्रस्तुत किया है। हिन्दी साहित्य के तीसरे काल रीतिकाल में भी शिवसम्बंधी काव्य-प्रणयन किया गया जिनमें केावदास, देव, पद्माकर, भिखारीदास, और भूषण प्रमुख है। केशव और भिखारी आदि ने अपने लक्षणग्रन्थों के उदाहरण के लिये शिव का जहाँ अनेक स्थलों पर वर्णन किया है वहाँ मिथिला के अग्निप्रसाद सिंह, आनंद, उमानाथ, कुंजनदास, चंदनदास, महीनाथ ठाकुर एवं हिमकर ने स्वतंत्र रूप से शिवसम्बंधी पद रचे। इसके अतिरिक्त दीनदयाल गिरि का 'विश्वनवथ नवरत्न', दलेलसिंह का 'शिवसागर' व बनारसी कवि की 'शिवपच्चीसी' आदि महत्त्वपूर्ण है।

हिन्दी साहित्य के चौथे काल (आधुनिक काल) में भी शैवसम्बंधी रचनाओं में जयशंकर प्रसाद कृत 'कामायनी' जिसमें शिव के नटराज रूप के अतिरिक्त उनके सृष्टिरक्षक, सृष्टिसंहारक, सृष्टि की मूल शक्ति एवं महायोगी रूप का भी भव्य और उदात्त वर्णन है इसमें श्रद्धा के सहयोग से इच्छा, क्रिया, और ज्ञान का सामंजस्य कर शाश्वत शिवानंद प्राप्त करने का दिव्य संदेश मानव को दिया गया। इसके अतिरिक्त गिरिजादत्तशुक्ल गिरिशकृत 'ताराकवध', रामानंद तिवारीकृत 'पार्वती' जैसे महाकाव्यों व अनेक विधाओं जैसे नाटक, एकांकी, कथा, उपन्यास, आदि में युगीन भावनाओं एवं राष्ट्रीय परिवेश के अन्तर्गत शिव को तांडव, क्रांति और विध्वंस के प्रतीक मानकर लिखने वालों में नाथूराम शर्मा शंकर, रामधारीसिंह दिनकर, सुमित्रानंदन पंत एवं निराला आदि हैं। इस प्रकार सृष्टि के आरम्भ से अंत तक पुरुष और प्रकृति दोनों के माध्यम से ही सब कुछ संभव है।

संदर्भ ग्रंथ

1. भक्ति आन्दोलन और साहित्य, डॉ. एम. जार्ज
2. हिन्दी के पौराणिक नाटकों के मूल स्त्रोत, शशिप्रभा शास्त्री
3. इन्टरनेट

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में शिव शक्ति

राखी अग्रवाल

छात्रा-भारतखण्डे संगीत विद्यापीठ, लखनऊ

"एक व्यक्ति जिसे अपने पूर्व इतिहास, उद्गम् और संस्कृति के विषय में कोई जानकारी नही है उस वृक्ष के जैसा है जिसकी जड़ नही है।"

—मार्कस गैरवे

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में शिव शक्ति

बीज से अंकुर, अंकुर से पल्लव, पल्लव से प्रसून, प्रसून से फल, फल से पुनः बीज। इस प्रकार सारी सृष्टि का क्रम लगातार चलता रहता है। हे! देवाधिदेव महादेव, आपके चरणों में मेरी यह प्रार्थना है कि जिस प्रकार जगत के जीर्ण शीर्ण होने पर उसका संहार कर आप उसे नवीन रूप दे डालते हैं। उसी प्रकार विधि तापों से जर्जरित मेरे अंतःकरण के विविध मल को जलाकर उसे सुवर्ण की भांति परिष्कृत, शुद्ध बना दीजिए।

"शिव ही सर्वस्व हैं"

परमशिव आदि देव हैं। सभी देवों में सर्वोच्च और महान, शिव को ऋग्वेद में रुद्र कहा गया है। शिव आदि तत्त्व हैं, वह ब्रह्म हैं, वह अखण्ड, अभेद्य, अच्छेद्य, निराकार, निर्गुण तत्त्व हैं। वह अपरिभोय हैं, वह नेति-नेति हैं। शिव संस्कृत भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है कल्याणकारी या शुभकारी। यजुर्वेद में शिव को शान्तिदाता बताया गया है। 'शि' का अर्थ है, पापों का नाश करने वाला, जबकि 'व' का अर्थ देने वाया यानी दाता ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र के तीनों की उत्पत्ति महेश्वर के अंश से ही होती है। शिव ब्रह्माण्ड के रचयिता हुए और शंकर उनकी एक रचना। भगवान शिव को इसीलिए पुराणों में महादेव भी कहा जाता है। तीनों अभेद हैं, तीनों समान हैं। सृष्टि का अनादि तत्त्व शिव हैं। यही कारण है—सृष्टि, स्थिति एवं प्रलय का।

"ना सन्न चासच्छिव एव केवलः"

अर्थात् सृष्टि के पूर्व ना सत् ही था और ना असत्, किन्तु केवल शिव था। यह बात सर्वसम्मत है कि जो वस्तु सृष्टि के पूर्व हो वही जगत का कारण है और जो जगत का कारण है वही ब्रह्म है। इस विषय में कोई मतभेद नहीं है। सत् चेतन वस्तु को कहते हैं और असत् कहते हैं अचेतन या जड़ वस्तु को। जिस समय यह दोनों नहीं होते वह सृष्टि का पूर्व का काल और जो वस्तु रहती है वह शक्ति का कारण। ***"न सन्न चासत"*** के अन्दर उस काल में केवल शिव की सत्ता वताई गयी है। अतः शिव ही जगत के जन्म का कारण हैं और जगत का जन्म ब्रह्म के अन्तर्गत आता है। अतः ब्रह्म ही शिव हैं। इस तरह शिव को जगत का कारण वताने वाली श्रुति की संगति हो जाती है।

'श्वेताश्वतरोपनिषद्' के अनुसार—

"सृष्टि के आदिकाल में जब सर्वत्र अंधकार ही अंधकार था। न दिन न रात्रि, न सत् व असत्। तब केवल निर्विकार शिव (रुद्र) ही थे।"

शिव पुराण में इसी तथ्य को इन शब्दों में व्यक्त किया गया है—

"एक एव तदा रुद्रो न द्वितीयोऽस्ति कश्चन"

सृष्टि के आरम्भ में एक ही रुद्र देव विद्यमान रहते हैं, दूसरा कोई नहीं होता। वे ही इस जगत की सृष्टि करते हैं, इसकी रक्षा करते हैं और अंत में

इसका संहार करते हैं। 'रु' का अर्थ है—दुःख तथा 'द्र' का अर्थ है—द्रवित करना या हटाना अर्थात दुःख को हरने वाला। इसलिए वह परमशिव 'हर' भी है। शिव की सत्ता सर्वव्यापी है।

"वेदो शिवम, शिवो वेदम"

परमात्मा शिव के इसी स्वरूप द्वारा मानव शरीर को रुद्र से शिव बनने का ज्ञान प्राप्त होता है। वैदिक परम्परा का रूद्र उपनिषदों में सत्यम् शिवम् सुन्दरम् की अभिव्यक्ति पाता हुआ पुराणों में विविध कथाओं के संदर्भ में जनमानस को प्रभावित करता है। इसी रूप में शिव शक्ति के विविध रूप वैदिक वांगमय में प्रस्तुत हुए हैं। सब शिव में ही रमण करें, इसका ही ध्यान करें और अंत में इसी में ही लय हो जाएं, तो परम कल्याणकारी होगा।

शिव-शक्ति - इतिहास की समग्र खोज

शिव और शक्ति : एक परिचय

शिव स्वरूप हमें बताता है कि उनका रूप विराट और अनंत है, महिमा अपरंपार है। उनमें ही सारी सृष्टि समाई हुई है। कर्तव्य के पथ पर सत्य ही शिव है। लोकमंगल ही शिव है। शिवजी के गले में विषैला सर्प है। वे अपने गले में विष धारण करते हैं। वे सुंदर हैं, माथे पर चन्द्रमा और पावन गंगा को धारण किए हुए हैं। अमंगल को सुंदर और शुभ बना देना ही शिवत्व है। शिव कल्याण स्वरूप हैं। श्रेष्ठ आचरण वाले हैं। संहारकारी हैं। वे प्रकृति और पुरुष के नियंत्रक हैं।

शक् अर्थात समर्थ होना, इस धातु से क्तिन् प्रत्यय के जुड़ने पर शक्ति शब्द बना। सामर्थ्य, पराक्रम और प्राण, ये शक्ति शब्द के प्रमुख अर्थ हैं। प्रत्येक पदार्थ में कार्योत्पादन हेतु उपयोगी और उस पदार्थ से कभी भी भिन्न न होने वाला जो विशिष्ट धर्म होता है, वह शक्ति है, जैसे—अग्नि शक्तिमान है और दाहकता उसकी शक्ति है। दाहकता अग्नि से कभी भी अलग नहीं होती। प्रत्येक पदार्थ में उसकी अभिन्न एक शक्ति होती है। पदार्थ अनंत हैं, अतएव शक्तियाँ भी अनंत हैं। पार्वती को ही शक्ति माना गया है। शरीर में शक्ति ना हो तो शरीर बेकार है। शक्ति तेज का पुंज है। मानव को हर काम में सफलता की शक्ति पार्वती यानी दुर्गा देती हैं। भगवान शिव ने अर्द्धनारीश्वर स्वरूप में स्वयं शक्ति के महत्व को सिद्ध किया है। माँ शक्ति के बिना शिव अधूरे हैं, यह भी भगवती, काली, जगदम्बे, अम्बे हैं। जब सभी देवी देवता किसी महा आपदा के सामने हार गये तब माँ शक्ति ने ही अवतार लेकर सभी का कल्याण किया है। यह सृष्टि काल आधारित है, इसलिए शिव महाकाल प्रथम और आद्या महाकाली प्रथमा ही मूल शक्ति हैं।

शक्ति शिव में व शिव शक्ति में

मातृ सत्ता की कृपा के बिना यह सृष्टि नहीं बन सकती, इसलिए संसार में जहाँ 'म' है वहीं पूर्णता है। माँ में 'म', राम में 'म', श्याम में 'म', प्रेम में 'म', परन्तु परमात्मा में दो 'म' शिव शक्ति की एकता का बोध कराते हैं। शिव और शक्ति के अनेक रूप हैं। शक्ति शिव से भिन्न नहीं, अपितु वह शिव का ही अंग है। शक्ति अचेतन शिव को कार्यान्वित करती रहती है। इसी तथ्य को गोरख ने *'सिद्ध सिद्धान्त पद्धति'* में इस प्रकार वर्णित किया है।

"शिवस्याभ्यन्तरे शक्तिः शक्तेरभ्यन्तरेशिवः"

शक्ति शिव में निहित है शिव शक्ति में निहित है। चन्द्र और चन्द्रिका के समान दोनों अभिन्न हैं। शिव को शक्ति की आत्मा कहा जा सकता है और शक्ति को शिव का शरीर, शिव को शक्ति का पारमार्थिक रूप कहा जा सकता है और शक्ति को शिव का प्रापंचिक रूप, शिव से भिन्न और स्वतंत्र शक्ति का कोई अस्तित्व नहीं है और शक्ति की अवहेलना की जाए तो शिव का आत्म प्रकाशन संभव नहीं है। शक्ति के कारण ही शिव स्वयं सर्व शक्तिमान, सर्वज्ञानी, सर्वानन्द, सगुण परमेश्वर, जगत का सर्जक, पालक और भोक्ता बन जाते हैं। निज शक्ति से रहित शिव कोई भी कार्य नहीं कर सकते, किन्तु निज शक्ति सहित वे समस्त स्तरों के अस्तित्वों के सर्जक एवं प्रकाशक बन जाते हैं। शिव एक

साथ स्रटा एवं सृष्टि आधार और आधेय आत्मा और शरीर हैं। शक्ति एक को अनेक करती है और पुनः अनेक को एक में मिला देती है। शिव का विस्तार सृष्टि है, शिव का संकुचन प्रलय है।

शक्तिहीन शिव 'शिव' न होकर मात्र 'शव'

जगजन्म आदि कार्य अनुकूल शक्ति विशेष को परम शिव ब्रह्म के अन्दर मानना ही पड़ेगा। शक्तिहीन जो चैत्र, मैत्रादि (मृत) है वह कुछ भी नहीं कर सकते। चुंबक में सुई को खींचने की शक्ति है, बीज में भी अंकुर उन्मुख शक्ति ना तो आगे वह फल नहीं सकेगा। संसार में दृश्यमान जो कारण वस्तुए हैं उनमें रहने वाली कार्यानुभव शक्ति को मानना जरूरी है। उसी तरह परम शिव ब्रह्मा में शक्ति ना हो तो संसार की उत्पत्ति ही ना हो इस प्रकार बिना शक्ति के कुछ भी संभव नहीं है। शक्ति और शिव भिन्न-भिन्न दो पदार्थ हैं। यही संसार के माता पिता हैं। इस सृटि के आधार और रचयिता यानी स्त्री पुरुष शिव और शक्ति के ही स्वरूप हैं। इनके मिलन और सृज़न से यह संसार संचालित और संतुलित है। दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं। नारी प्रकृति है और नर पुरुष। प्रकृति के बिना पुरुष बेकार है और पुरुष के बिना प्रकृति। दोनों का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। अर्द्धनारीश्वर शिव इसी पारस्परिकता के प्रतीक हैं। भगवान शिव सही अर्थों में परिवार के देवता हैं, क्योंकि ये एकमात्र ऐसे देवता हैं, जिनका परिवार सम्पूर्ण है। परिवार के मुखिया शिव जी के साथ माँ पार्वती, गणेश, रिद्धि, सिद्धि, शुभ, लाभ का विशेष स्थान है। कोई भी दैविक कार्य इनके बिना सम्भव नहीं हो सकता। आधुनिक समय में स्त्री पुरुष की बराबरी पर जो इतना जोर है, उसे शिव के इस स्वरूप में बखूबी देखा-समझा जा सकता है। यह बताता है कि शिव जब शक्ति युक्त होता है तभी समर्थ होता है। शक्ति के अभाव में शिव 'शिव' न होकर 'शव' रह जाता है। शिव को सृष्टि का प्राण माना जाता है। अगर शिव नहीं हों तो सृष्टि शव के समान हो जाती है। इस कारण शिव को कालों का काल यानी महाकाल भी कहा गया है।

शिवशक्ति संयोग

शिव पुराण में शिव और शक्ति में समानता बतायी गयी है और कहा गया है कि दोनों को एक दूसरे की जरूरत रहती है। न तो शिव के बिना शक्ति का अस्तित्व है और न शक्ति के बिना शिव का। शिव पुराण में यह भी दर्ज है कि जो शक्ति सम्पन्न है, उनके स्वरूप में कोई अन्तर नहीं मानना चाहिए। इसलिए शिव और शक्ति को अभेद माना जाता है। शिवपुराण के अनुसार शिव-शक्ति का संयोग ही परमात्मा है। शिव की जो पराशक्ति है उससे चित शक्ति, चित शक्ति से आनन्द शक्ति, आनन्द शक्ति से इच्छाशक्ति, इच्छाशक्ति से ज्ञानशक्ति और ज्ञानशक्ति से पांचवीं क्रियाशक्ति प्रकट हुई हैं। इच्छाशक्ति से 'म' कार प्रकट हुआ है। ज्ञानशक्ति से पांचवां स्वर 'उ' उत्पन्न हुआ है और क्रियाशक्ति से 'अ' कार की उत्पत्ति हुई है। इस प्रकार प्रणव ॐ की उत्पन्न हुई है। शिव से ईशान, ईशान से तत्पुरुष, तत्पुरुष से अघोर का, अघोर से वामदेव क्रा और वामदेव से सद्योजात का प्राकट्य हुआ है।

शिव शक्ति की उपासना

महाकाल महाकाली के नीचे लेटे हैं, शिव के लेटने का मूल कारण शक्ति के उग्र रूप से सृष्टि को बचाना है। शिव को नीचे देख काली की उग्रता समाप्त हो गयी। शिव के स्वरूप को समझने के लिए शक्ति की उपासना अनिवार्य है और शिव के सानिध्य के बिना शक्ति की उपासना भी नहीं फलती। शिव शक्ति कलातीत, शब्द ज्ञान से परे है। परमात्मा का पवित्र प्रणव बीज है, वही शक्ति का प्रणव हीं है। शिव शक्ति के रहस्य की एक छोटी अनुभूति शिव का बीजाक्षर हां, हीं है। वहीं शक्ति के बीजाक्षर हीं, क्रीं, श्रीं, ऐं, क्लीं आदि हैं। परन्तु शिव हां में राम हीं में हरी (विष्णु) क्लीं में काली कृष्ण, श्रीं में लक्ष्मी, ऐं में गुरु और सरस्वती। यही तो परम रहस्य है शिव शक्ति का है। शिव का अपमान शक्ति सह नहीं पाईं, तो दक्ष यज्ञ मृत्यु यज्ञ बन गया। वहीं शक्ति का वियोग शिव सह नहीं पाए और शव लेकर

विलाप करते हुए भटकने लगे। सृष्टि का नाश होने के भय से विष्णु को आना पड़ा। शिव शक्ति का प्रेम ही ऐसा है कि ये एक दूसरे के बिना रह नहीं सकते। शिव शक्ति मूल महाशक्ति हैं। शिव वियोग में शक्ति आँसू बहाती है। शिव सिर्फ अमृत देते हैं, लेते हैं हमारा विष, हमारे पाप, हमारे ताप। और शक्ति तो सब के पीछे, सबके कल्याण हेतु तत्पर रहती है। वह सबकी स्वामिनी हैं।

शिव शक्ति सार

अतः संसार में जो कुछ देखा जाता है, सुना जाता है, सभी शिव शक्ति है। शिव नर है, उमा नारी है, शिव ब्रह्मा है, उमा वाणी है, शिव विष्णु है, उमा लक्ष्मी है, शिव सूर्य है, उमा तारा है, शिव दिन है, उमा रात्रि है, शिव यज्ञ वेदी है, उमा स्वाहा है, शिव वेद है, उमा शास्त्र है, शिव गंध है, उमा पुष्प है, शिव अर्थ है उमा अक्षर है, शिव लिंग है उमा पीठ है। शिव और शक्ति जहाँ व्याप्त न हो ऐसा कोई स्थान नहीं है। अगर हम शिव शक्ति को आस-पास महसूस करके उस पर विश्वास करने लगेंगे तो क्या ही कल्याण होगा। हर जीवात्मा के शरीर आधार चक्र में शक्ति स्थापित हैं और सिर के ऊपर सहस्रार में शिव बैठे हैं। ध्वनि के उच्चारण का असर मूलधारा चक्र से सहस्रार धारा चक्र तक सीधा होता है, मानव शरीर में सबसे बड़ी ऊर्जा का केन्द्र मन ही होता है। जब मानव मन ***'शिव संकल्पमस्तु'*** के वेद मंत्रों का उच्चारण करता है तो मानव के मन में अनेक तत्वों का मिश्रण होता है और मन निर्बल से प्रबल हो जाता है। कल्याणकारी कर्मों को करने वाला हो जाता है। सही उच्चारण से **'शिव'** शब्द ध्वनि का असाधारण असर हो सकता है। सिर्फ एक उच्चारण पर बहुत शक्तिशाली, इस ध्वनि में इतनी शक्ति है। जिसे मैंने अपने भीतर बहुत गहराई से देखा है। ***ओम नमः शिवाय,*** शिव जी का पंचाक्षरी मंत्र है, जिसके जप से ही सभी विघ्न और संकट दूर हो जाते हैं। उस परम शिव शक्ति पर अगर श्रद्धा, विश्वास और आस्था है तो सब कुछ साध्य है। हमारी जिन्दगी हमारे वशीभूत है और आत्मविश्वास के साथ हम अपनी जिन्दगी को निश्चित ही नियंत्रित कर सकते हैं।

निःसंदेह सुरों को था, शिव सुत पर विश्वास।
आस करेगा पुण्य यही, यही हरेगा त्रास॥

संदर्भ ग्रंथ

1. शंकरभाष्य रत्नप्रभा - भाषा अनुवाद सहित
2. कल्याण ग्रंथ - गोरखपुर प्रकाशन
3. शिव परिवार कल्याण, शिवांक, वर्ष-8, अंक-1 1/4 गोरखपुरः गीता प्रेस
4. शिव के अनन्य उपासक या शिव सम्बन्धी विचारक
5. वाराह पुराण, अध्याय 215
6. सौर पुराण, अ.60-62
7. वायु पुराण, 72, 20
8. स्कन्द पुराण 1/ 4क1/2 महेश्वर खण्ड 1/4 केदार खंड-1/2
9. शिव पुराण - रूद्र संहिता, कुमार खंड अ.1-10, पूर्वार्द्ध -अ.2-4
10. वामन पुराण - अ.-57
11. पद्म पुराण - सृष्टि खण्ड 1/4अ.461/2
12. वेताश्वतरोपनिषद
13. ऋग्वेद
14. अथर्ववेद
15. शतपथ ब्राह्मण
16. तैत्तिरीय संहिता
17. उत्तरसंहिता
18. रुद्र निरूपण
19. ऐतरेय
20. ब हज्जावालोपनिषद
21. श्रीमद्भागवत
22. यजुर्वेद संहिता
23. कैवल्योपनिषद
24. अथर्वशिखा उपनिषद

साहित्य में शिव

रेखा कुमारी

छात्रा-स्नातकोत्तर संगीत विभाग, तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय भागलपुर

शिव पुराण के अनुसार शिव-शक्ति का संयोग ही परमात्मा है। शिव की जो पराशक्ति है उससे चित् शक्ति प्रकट होती है। चित् शक्ति से आनंद शक्ति का प्रादुर्भाव होता है आनंद शक्ति से इच्छाशक्ति का उदय हुआ ज्ञानशक्ति से पांचवी क्रियाशक्ति प्रकट हुई है। इन्हीं से निवृत्ति आदि कुलाएँ उत्पन्न हुई है।

चित् शक्ति से नाद और आनंदशक्ति से बिंदु का प्राकट्य बताया गया है। इच्छा शक्ति से 'म' कार प्रकट हुआ है। ज्ञान शक्ति से पांचवा स्वर 'उ' कार उत्पन्न हुआ है और क्रियाशक्ति से 'अ' कार की उत्पत्ति हुई है। इस प्रकार प्रणव 'ऊँ' की उत्पत्ति हुई।

शिव से ईशान उत्पन्न हुए हैं, ईशान से तत्पुरुष का प्रादुर्भाव हुआ है। तलपुरुष से अधोर का अधोर से वामदेव का और वामदेव से सद्योजात का प्राकट्य हुआ हैं। इस आदि अक्षर प्रणव से ही मूलभूत पांच स्वर और तैंतीस व्यंजन के रूप में अड़तीस अक्षरों का प्रादुर्भाव हुआ है। उत्पत्ति क्रम में ईशान से शांव्यतीताकला उत्पन्न हुई है। ईशान से चित् शक्ति द्वारा मिथुनपंचक की उत्पत्ति होती है।

अनुग्रह तिरोभाव, संहार, स्थिति और सृष्टि इन पाँच कृत्यों का हेतु होने के कारण उसे पंचक कहते हैं। यह बात तत्वदर्शी ज्ञानी मुनियों ने कहा है। वाच्य-वाचक के संबंध से उनमें मिथुनत्व की प्राप्ति हुई है। कला वर्ण स्वरूप इस पंचक में भूतपंचक की गणना है। आकाशादि के क्रम से इन पांचों मिथुनों की उत्पत्ति हुई है। इनमें पहला मिथुन है आकाश दूसरा वायु तीसरा अग्नि, चौथा जल और पांचवा मिथुन पृथ्वी है।

इनमें आकाश से लेकर पृथ्वी तक के भूतों का जैसा स्वरूप बताया गया है वह इस प्रकार है आकाश में एकमात्र शब्द ही गुण है, वायु में शब्द और स्पर्श रूप और इन तीन गुणों की प्रधानता है, जल में शब्द स्पर्श रूप और रस ये चार गुण माने गए हैं तथा पृथ्वी शब्द, स्पर्श रूप, रस और गंध इन पांच गुणों से संपन्न है। यही भूतों का व्यापकत्व कहा गया है अर्थात् शब्दादि गुणों द्वारा आकाशदि भूत वायु परवर्ती भूतों में किस प्रकार व्यापक है, यह दिखाया गया है।

इसके विपरित गंधादि गुणों के क्रम से वे भूत पूर्ववर्ती भूतों से व्याप्य हैं अर्थात् गंध गुणवाली पृथ्वी जल का और रसगुणवाला जल अग्नि का व्याप्य है, इत्यादि रूप से इनकी व्याप्यता को समझना चाहिए। पांच भूतों (महत् तत्व) का यह विस्तार ही प्रपंच कहलाता है।

सर्वसमष्टि का जो आत्मा है, उसी का नाम विराट है और पृथ्वी तल से लेकर क्रमशः शिवतत्व तक जो तत्वों का समुदाय है वही ब्रह्मांड है। वह क्रमशः तत्वसमूह में लीन होता हुआ अंततोगत्वा सबके जीवन भूत चैतन्यमय परमेश्वर में ही लय को प्राप्त होता है और सृष्टिकाल में फिर शक्ति द्वारा

शिव से निकल कर स्थूल प्रपंच के रूप में प्रलय कालपर्यत सुखपूर्वक स्थित रहता है।

अपनी इच्छा से संसार की सृष्टि के लिए उद्यत हुई महेश्वर का जो प्रथम परिस्पंद है, उसे शिवत्व कहते हैं। यही इच्छाशक्ति तत्व है, क्योंकि संपूर्ण कृत्यों में इसी का अनुवर्तन होता है। ज्ञान और क्रिया, इन दो शक्तियों में जब ज्ञान का अधिक्य हो, तब उसे सदाशिवतत्व समझना चाहिए, जब क्रियाशक्ति का उद्रेक हो तब उसे महेश्वर तत्व जानना चाहिए तथा जब ज्ञान और क्रिया दोनों शक्तियां समान हों तब वहां शुद्ध विद्यात्मक तत्व समझना चाहिए।

भगवान शिव को संहार का देवता कहा जाता है। भगवान शिव सौम्य आकृति एवं रौद्ररूप दोनों के लिए विश्वयात हैं। अन्य देवों से शिव को भिन्न माना गया है। सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति एवं संहार के अधिपति शिव हैं। त्रिदेवों में भगवान शिव संहार के देवता माने गए हैं। शिव अनादि तथा सृष्टि प्रक्रिया के आदिस्त्रोत हैं और यह कला महाकाल ही ज्योतिशास्त्र के आधार हैं। शिव का अर्थ यद्यपि कल्याणकारी माना गया है, लेकिन वे हमेशा लय एवं प्रलय दोनों को अपने अधीन किए हुए हैं। राम, रावण, शनि, कश्यप ऋषि आदि इनके भक्त हुए है। शिव सभी को समान दृष्टि से देखते हैं, इस लिये उन्हें महादेव कहा जाता है।

पृथ्वी पर बीते हुए इतिहास में सतयुग से कलयुग तक, एक ही मानव शरीर ऐसा है, जिसके ललाट पर ज्योति है, इसी स्वरूप द्वारा जीवन व्यतीत कर परमात्मा ने मानव के वेदों का ज्ञान प्रदान किया है जो मानव के लिए अत्यंत ही कल्याणकारी साबित हुआ है, वैदो शिवम; शिवो वेदम'' परमात्मा शिव के इसी स्परूप द्वारा मानव शरीर को रूद्र से शिव बनने का ज्ञान प्राप्त होता है।

सृष्टि में जब आत्मा मानव शरीर धारण करती है तो उसके मन को यह ज्ञान नहीं होता कि वो कौन से जन्म में अपना जीवन व्यतीत कर रही होती है; मानव मन सृष्टि के कल्याण का संकल्प ज्योति बिंदु परमात्मा शिव से धारण किए हुए होता है, इस संकल्प का ज्ञान उसी के शरीर की बुद्धि के सीधे भाग पर जड़ा हुआ होता है, मन से बुद्धि तक की उन ऊर्जा धराओं को जब मानव शरीर खोलता है और उन धाराओं में जब ऊर्जा का बहाव होना प्रारंभ होता है तो उसके मन को अद्भुत संकल्प के ज्ञान का स्मरण होता है और मानव संकल्पित जीवन व्यापन करना प्रारंभ करता है।

भगवान शिव को सभी शस्त्रों को चलाने में निपुण माना जाता है। पौराणिक कहानियों की मानें तो भगवान भोलेनाथ के घनुष का निर्माण ऋषि-दधीचि की अस्थियों से हुआ था। इस धनुष का नाम 'पिनाक' है। माना गया हैं कि जब सृष्टि का आरंभ हुआ था, तब एक ब्रह्मनाद हुआ था और उससे भगवान शिव की उत्पत्ति हुई थी। भगवान शंकर की उत्पत्ति के लाभ ही उनके साथ में तीनों गुणों रज तम और सत्व की भी उत्पत्ति हुई थी। यह तीनों गुण ही भगवान के तीन शूल यानी त्रिशूल में परिणित हुए।

शिव पुराण के अनुसार शिव-शक्ति का संयोग ही परमात्मा है। जब शिव अपने रूप को माया से निग्रहीत करके संपूर्ण पदार्थों को ग्रहण करने लगता है, तब उसका नाम पुरुष होता है।

शिव-शक्ति का एकात्म रूप-अर्द्धनारीश्वर (कला के विशिष्ट सन्दर्भ में)

ऋतु मालवीय

असि. प्रोफेसर सर्वेश्वरी पी.जी. कॉलेज धनुहा, चाका, नैनी, इलाहाबाद ईमेल-ritumalviya724@gmail.com

परम्परा प्रधान भारतीय मूर्तिकला अपने वाह्यरूप में सदैव एक समान रही है। इसका विशेष सम्बन्ध शैली से है, शैली से तात्पर्य मूर्तिकला के वाह्य स्वरूप से है जिसे हम प्रत्यक्ष देखते हैं। भारत की एक दीर्घकालीन मूर्ति परम्परा रही है। भारतीय उपमहाद्वीप में कला को ईश्वर की रचना माना जाता है। अतः कोई भी कला दूसरे से श्रेष्ठ नहीं है। शिव से ही नृत्य एवं संगीत का उद्भव हुआ है। मूर्तिकला में उपयोगितावादी दृष्टिकोण न होने से वह अपने सम्पूर्ण रूप से परिवर्तनशील नहीं रही है और धर्म प्रधान होने के कारण उसमें कोई क्रान्तिकारी परिवर्तन परिलक्षित नहीं होता, यदि सूक्ष्म अवलोकन किया जाये तो स्पष्ट है कि यह परम्परा देवी-देवताओं की मूर्ति निर्माण में भी रही है।

हिन्दू धर्म के प्रमुख तीन देवताओं में शिव-संहारक के रूप में स्वीकृत है, परन्तु शैव-परम्परानुपाथी उन्हें सृष्टि का कर्ता भी मानते हैं। इन्हें सर्वोच्च देवता भी स्वीकार किया गया है। शिव का व्यक्तित्व बहुपक्षीय है। जहाँ वह भक्तों के लिए अत्यन्त कृपालु अनुग्रहदाता (भोलेनाथ) है, तो दूसरी ओर सृष्टि के संहार हेतु ताण्डव नृत्यकर्ता भी हैं। शिव को संगीत, नृत्य और योग का प्रणेता भी माना जाता है। पशुपति के रूप में वे समान्त प्राणियों के स्वामी हैं। वे महेश्वर और महादेव हैं, शक्ति की प्रतीक उमा के पति हैं। शिव के शताधिक नाम है। जिसके विश्लेषण से उनके व्यक्तित्व में अनेक परम्पराएं एवं सांस्कृतियों अवतीर्ण हुई हैं।

शिव की मानव रूप प्रतिमाओं को मुख्यतः दो रूपो में विभक्त किया गया है। **(i) सौम्य रूप प्रतिमा (ii) घोर, उग्र या संहाररूप प्रतिमा।** वैदिक काल में देवता या शिव के अर्द्धनारीश्वर रूप की कल्पना भारतीय प्रतीक विधा भी एक अनोखी धरोहर है।[1] इसमें स्त्री की पुरुा के इस मूलभूत मनोवैज्ञानिक आधार की स्पष्ट पहचान की गयी है। प्रत्येक स्त्री के अर्द्ध भाग पुरुष और प्रत्येक पुरुष का अर्द्धभाग स्त्री का है। एक ही देवता स्वरूप को पुरुष और स्त्री अथवा कुमार-कुमारी कह कर सम्बोधित करता है।[2] यही मान्यता पत्नी को पति की अर्द्धांगी होने के सिद्धान्त में निहित है। दार्शनिक एवं कला परक परम्परा में 'नरनारीमय' के इसी दृष्टिकोण का पल्लवन बहुधा दिखाई देता है।[3]

इन्हें पौराणिक-कथाओं से सम्बद्ध और असम्बद्ध के भागो में वर्गीकृत किया गया है। शिव की कुछ प्रतिमायें शैव सम्प्रदाय से सम्बन्धित है, जो इस सम्प्रदाय के दर्शन का प्रतिनिधित्व करती है। इसी शृंखला में शैवो के सोम सिद्धान्त और कापालिक सम्प्रदाय से सम्बन्धित है, 'अर्द्धनारीश्वर प्रतिमा'। इन सम्प्रदायों में शिव और पार्वती दोनों को महत्व दिया गया है। अर्द्धनारीश्वर प्रतिमा इस सम्प्रदाय के दर्शन के आधार पर निर्मित की जाती है। सोम

सिद्धान्त के अनुसार यह समस्त जगत शिव और पार्वती की प्रतिच्छाया है। कापालिक सम्प्रदाय प्रत्येक स्त्री-पुरुष में शिव-पार्वती का रूप देखता है। इसी को आधार मानकर कालान्तर में 'प्रत्यमिज्ञा' सिद्धांत का प्रतिपादन हुआ। इस सिद्धान्त के अनुसार दोनों ही परम सत्य के ही रूप हैं। परम शिव ही एक मात्र मूलतत्व है। समस्त जीव एवं जगत उसी का आभास है।[4]

"स्वार मैं सर्वजन्तुनामेक एवं महेश्वरः। शिवरूपोशमिदमित्यं खण्डामर्शमूव हितः"

जितेन्द्र नाथ बनर्जी के अनुसार शिव के अर्द्धनारीश्वर प्रतिमा निर्माण के आधारभूत तत्वों की विवेचना करते हुए स्पष्ट किया है कि यह प्रतिमा शैव और शाक्त सम्प्रदायों की आधारभूत एकता को दर्शाती है। संभवतः दोनों ही सम्प्रदाय (शैव, शाक्त) में संघर्ष की स्थिति थी और इस परिस्थितियों में दोनों ही अपनी श्रेष्ठता घोषित करते थे। कालांतर में इस संघर्ष को दूर करने हेतु अर्द्धनारीश्वर की कल्पना की गई। जिसमें आधाभाग पुरुष एवं आधा भाग नारी का प्रदर्षित किया जाता है।[5]

शिव के अर्द्धनारीवर रूप के प्रतिमा निर्माण के सम्बन्ध में **विष्णु धर्मेत्तर पुराण** में बताया गया है कि देवता का आधा भाग नारी का आधा भाग पुरुष का होना चाहिए। आधे भाग में शिव से सम्बन्धित अलंकरण तथा आयुध (जटा, सर्प, यज्ञोपवित, मेखला, त्रिशूल) और आधे भाग में स्त्रियोंयोचित्त आभूषण प्रदर्षित होना चाहिए।[6] **मत्स्य पुराण** में भी इसी रूप की परिकल्पना की गई है।[7] लक्षण ग्रन्थों के आधार पर निर्मित शिव की अद्धनारीश्वर प्रतिमाएं भारत के विभिन्न भागों में प्राप्त होती हैं। **मथुरा संग्रहालय** में कुषाणकालीन एवं गुप्तकालीन अर्द्धनारीश्वर प्रतिमाएं संग्रहीत है जिसमें मानवीय रूपों के अन्तर्गत धार्मिक समन्वय के आदर्शात्मक स्वरूप को मूर्तिरूप दिया गया है इन मूर्तियों मे दाहिना भाग पुरुष का और बायां भाग नारी का है। पुरुष भाग में मस्तक पर जटा-जूट तथा नारी भाग में वक्षस्थल का प्रदर्शन मुख्य रूप से हुआ है। पुरुष भाग में हाथ अभय की मुद्रा में ऊपर उठा है एवं नारी भाग में हाथ में दर्पण है। दोनों के कर्णाभूषणों में अन्तर नहीं है, किन्तु कटि वस्त्रों में स्पष्ट अन्तर है।[8] **चन्देलवंश** मध्यकालीन भारत का प्रसिद्ध राजवंश था जिसने 8 वीं व 12 वीं शता. में राज किया था। चन्देल कालीन मूर्ति कला ने विश्व को प्रभावित किया। यह उत्कृष्ट थी इसका उदाहरण खजुराहो के मंदिर है। चंदेलों में पौराणिक धर्म जन प्रिय था। यहाँ शिव पूजा का प्रचलन अधिक था। शिवलिंग एवं शिवमूर्ति यहाँ मिलती है साथ ही शक्ति की भी पूजा का प्रचलन था। इसी क्रम में खजुराहो से प्राप्त अर्द्धनारीश्वर प्रतिमा को ललितासन मुद्रा में दिखाया गया है। प्रतिमा का दायां भाग (पुरुष) जटा-जूट, अर्द्धचन्द्र कुण्डल त्रिशूल से सुशोभित है। आधा वायां भाग (नारी) सुन्दर के केशविन्यास तथा स्त्रियोचित वेशभूषा से सुसज्जित है।

पालवंश कालीन मूर्ति कला में शिव के अर्द्धनारीश्वर रूप की एक सुन्दर किन्तु कुछ खंडित मूर्ति राजशाही संग्रहालय में सुरक्षित है, जो पूर्वी बंगाल से प्राप्त हुई थी। लम्बा मुकुट और हार आदि आभूषणों से अलंकृत इस मूर्ति के बाए भाग में वक्ष सौष्ठव दर्शाया गया है। मुख मण्ड पर नारी सुलभ कोमलता स्पष्ट परिलक्षित होती है। पुरुषोचित अलंकरण से युक्त दायां भाग स्वाभाविक कड़ापन लिए है। सम्पूर्ण शिल्प में शैव धार्मिक मान्यता की मार्मिक छवि उभरी है। अलंकरण की बहुलता में बावजूद भाव संबोध की दृष्टि से आकृति अधिक सम्पन्न है।[9]

तंजोर के वृहदेश्वर मंदिर से प्राप्त अर्द्धनारीश्वर प्रतिमा का उललेख बनर्जी महोदय ने किया है। इसी क्रम में **मद्रास संग्रहालय** में सुरक्षित एक कांस्य निर्मित अर्द्धनारीश्वर प्रतिमा का उल्लेख **गोपीनाथ राव** ने किया है।[10]

अर्द्धनारीश्वर की प्रतिमा मूलतः स्त्री एवं पुरुष को प्रकृति एवं पुरुष के दर्शन को ही परिलक्षित करती है, अर्थात प्रकृति जो स्त्री का रूप है उसमें कोमलता, सृजन, ममत्व सौन्दर्य का दिग्दर्शन करती

है और उसमें पुरुष जो पुरुषोचित कठोरता को दर्शाते हुए पालन-पोषण सृजन में सहभागी होता है। दोनों ही एक दूसरे के पूरक होते हैं अलग-अलग होते भी एकाकार होते है। तात्पर्य है कि सम्पूर्ण सृष्टि का मूल आधार ही पुरुष प्रकति के प्रतीक अर्द्धनारीश्वर है जो सृष्टि में सृजन, पालन, संहार के द्योतक होते हुए मानव को यह संदेश देते है कि इससे इतर कुछ भी नहीं है। सम्पूर्ण विश्व इसी एक जाज्वलयमान पुज के चारो ओर घूमना है।

चित्र फलक - (I) वृहदीश्वर मन्दिर

चित्र फलक - (II) खजुराहो मन्दिर

संदर्भ ग्रंथ

1. ऋग्वेद - 1. 164. 16, 5. 61. 6
2. अथर्ववेद- 10, 8, 27
3. प्राचीन भारतीय कला एवं वास्तु–डॉ. पृथ्वी कुमार अग्रवाल
4. ईश्वर प्रत्यभिज्ञा - 4. 1. 1
5. उद्धृ त-प्राचीन भारतीय प्रतिमा विज्ञान मूर्तिकला–बी. बी. श्रीवास्तव (DHI, P. 552)
6. विष्णु धमर्ता पुराण-55, 9, 13
7. मत्स्य पुराण 260, 8-7
8. पी. एल. गुप्त-गुप्तसाम्राज्य पृ.-570
9. उद्धृत - प्राचीन भारतीय प्रतिमा विज्ञान मूर्तिकला–बी. बी. श्रीवास्तव (C.J.French\art of the Pola-Empire of Bengal Page-6)
10. उद्धृत-प्राचीन भारतीय प्रतिमा विज्ञान मूर्तिकला-बी. बी. श्रीवास्तव (E.H.I Vol. II Pt. I page 278)
11. चित्र फलक (I) - इण्टरनेट विकीपीडिया
12. चित्र फलक (II) - इण्टरनेट विकीपीडिया

संगीत में शिव शक्ति

मो. रियाज

शोधछात्रा स्नातकोत्तर संगीत विभाग, ति.मां.भा.वि.वि., भागलपुर

सारांश

संगीत-कला की उत्पत्ति कब और कैसे हुई, इस विषय पर विद्वानों के विभिन्न मत है, जिनमें से कुछ का उल्लेख इस प्रकार है–

1. संगीत की उत्पत्ति आरम्भ में वेदों के निर्माता ब्रह्मा द्वारा हुई। ब्रह्मा ने यह कला शिव को दी और शिव के द्वारा सरस्वती को प्राप्त हुई। सरस्वती को इसी लिए 'वीणा-पुस्तक-धारिणी' कहकर संगीत और साहित्य की अधिष्ठात्री माना गया है। सरस्वती से संगीत-कला का ज्ञान नारद को प्राप्त हुआ। नारद ने स्वर्ग के गंधर्व, किन्नर तथा अप्सराओं को संगीत-शिक्षा दी। वहाँ से ही भरत, नारद और हनुमान आदि ऋषि संगीत-कला में पारंगत होकर भू-लोक (पृथ्वी) पर संगीत कला के प्रचारार्थ अवतीर्ण हुए। दूसरे शब्दों में पृथ्वी लोक पर संगीत प्रचलित और प्रसारित हुई।

2. एक ग्रंथकार के मतानुसार, नारद ने अनके वर्षों तक योग-साधना की, तब शिव ने उन्हें प्रसन्न होकर संगीत-कला प्रदान की। पार्वती की शयनमुद्रा को देखकर शिव ने उनके अंग-प्रत्यंगों के आधार पर रूद्रवीणा बनाई और अपने पाँच मुखों से पाँच रागों की उत्पत्ति की। तत्पश्चात् छठा राग पार्वती के मुख द्वारा उत्पन्न हुआ। शिव के पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण और आकाशोन्मुख होने से क्रमशः भैरव, हिंडोल, मेघ, दीपक और श्री राग प्रकट हुए तथा पार्वती द्वारा कौशिक राग की उत्पत्ति हुई। 'शिव-प्रदोष' स्तोत्र में लिखा है कि त्रिजगत् की जननी गौरी को स्वर्ण-सिंहासन पर बैठाकर प्रदोष के समय शूलपाणि शिव ने नृत्य करने की इच्छा प्रकट की। इस अवसर पर सब देवता उन्हें घेरकर खड़े हो गए और उनका स्तुति-गान करने लगे। सरस्वती ने वीणा, इन्द्र तथा ब्रह्मा ने करताल बजाना आरंभ किया, लक्ष्मी गाने लगीं और विष्णु भगवान् मृदंग बजाने लगे। इस नृत्यमय संगीतोत्सव को देखने के लिए गंधर्व, यक्ष, पतग, उरग, सिद्ध साध्य, विधाधर, देवता, अप्सराएँ आदि सब उपस्थित थे।

3. 'संगीत-दर्पण' के लेखक दामोदर पंडित (सन्-1625 ई.) के मतानुसार, संगीत की उत्पत्ति ब्रह्मा से ही हुई है। अपने मत की पुष्टि करते हुए उन्होंने लिखा है–

द्रुहिणेत यव्दन्विष्ट प्रयुक्त भरतेन च।
महादेवस्य पुरतस्तमार्गाख्य **विमुक्तदम्** ॥

अर्थात्-ब्रह्मा (द्रु हिण) ने जिस संगीत को शोधकर निकला, भरत मुनि ने महादेव के सामने जिसका प्रयोग किया तथा जो मुक्तिदायक है, वह "मार्गी, संगीत कहलाता है।

इस विवेचन से प्रथम मत का कुछ अंशों में समर्थन होता है। आगे चलकर इसी पंडित ने सात स्वरों की उत्पत्ति पशु-पक्षियों द्वारा इस प्रकार बताई–

मोर से षड्ज, चातक से ऋषभ, बकरा से गांधार, कौआ से मध्यम, कोयल से पंचम, मेढ़क से धैवत और हाथी से निषाद स्वर की उत्पत्ति हुई।

4. फ़ारसी के एक विद्वान का मत है कि हज़रत मूसा जब पहाड़ों पर घूम-घूमकर वहाँ की छटा देख रहे थे, उसी वक्त गैव से एक आवाज आई (आकाश-वाणी हुई) कि 'या मूसा हक़ीक़ी', तु अपना असा (एक प्रकार का डंडा, जो फ़कीरों के पास होता है) इस पत्थर पर मारा, यह आवाज सुनकर हज़रत मूसा ने अपना असा जोर से उस पत्थर पर मारा, तो पत्थर के सात टुकड़े हो गए और हर-एक टुकड़े में से पानी की धारा अलग-अलग बहने लगी। उसी जल-धारा की आवाज से अस्सामलेक हज़रत मूसा ने सात स्वरों की रचता की, जिन्हें, सा, रे, ग, म, प, ध, नि, कहते है।

5. एक अन्य फ़ारसी विद्वान का कथन है कि पहाड़ों पर 'मूसीकार, नाम का एक पक्षी होता है, जिसकी चोंच में बासुरी की भांति सात सूराख होते हैं। उन्हीं सात सूराखों से सात स्वर ईजाद हुए।

6. पाश्चात्य विद्वान फ्रायड के अनुसार, संगीत की उत्पत्ति एक शिशु के समान, मनोविज्ञान के आधार पर हुई। जिस प्रकार बालक रोना, चिल्लाना, हँसना आदि क्रियाएँ आवश्यकतानुसार स्वयं सीख जाता है, उसी प्रकार मानव में संगीत का प्रादुर्भाव मनोविज्ञान के आधार पर स्वयं हुआ।

7. जेम्स लोंग के मतानुयायियों का भी यही कहना है कि पहले मनुष्य ने बोलना सीखा, चलना-फिरना सीखा और फिर शनैः शनैः क्रियाशील हो जाने पर उसे अन्दर संगीत स्वतः उत्पन्न हुआ।

इस प्रकार संगीत की उत्पत्ति के विषय में विभिन्न मत पाए जाते हैं। इनमें कौनसा मत ठीक है, यह कहना कठिन है।

प्राचीन ग्रन्थों में संगीत के चार मुख्य मत पाए जात हैं 1. शिव-मत या सोमेश्वर-मत 2. कृष्ण-मत या कल्लिनाथ-मत 3. भरत-मत और 4. हनुमन्मत। इसी प्रकार हम वेदों से भी संगीत के बारे में जानते है वेद की संख्या भी चार है।

(1) ऋग्वेद (2) यजुर्वेद (3) सोमवेद (4) अथर्ववेद

सर्वप्रथम हम, ऋगवेद : ऋक अर्थात स्थिति और ज्ञान। ऋग्वेद सबसे वेद है जो पद्यात्मक है। इसके 10 मंडल (अध्याय) में 1028 सुक्त है जिसमें 11 हजार मंत्र है। इस वेद की 5 शाखाएँ हैं—शाकल्प, वास्कल, अश्वलायन, शांखयन, मंडूकायन। इसमें भौगोलिक स्थिति और देवताओं के आवाहन के मंत्रों के साथ बहुत कुछ है। ऋग्वेद की ऋचाओं में देवताओं की प्रार्थना, स्तुतियां और देवलोक में उनकी स्थिति का वर्णन है। इस में जल चिकित्सा, वायुचिकित्सा, और चिक्त्सा मानस चिकित्सा और हवन द्वारा चिकित्सा आदि की भी जानकारी मिलती है। ऋग्वेद के दसवें मंडल में औाधि सूक्त यानी दवाओं का जिक्र मिलता है। इसमें औषधियों की संख्या-125 के लगभग बताई गई है, जो कि 107 स्थानों पर पाई जाती है। औषधि में सोम का विशेष वर्णन है। ऋग्वेद में च्यवनऋषि को पुनः युवा करने की कथा भी मिलती है। दूसरा-यजुर्वेद—यजुर्वेद का अर्थ : यतूजत्र यजु। यत् का अर्थ होता है। गतिशील तथा जु का अर्थ होता है आकाश इसके अलावा कर्म। श्रेष्ठतम कर्म की प्रेरणा। यर्जुवेद में यज्ञ की विधियाँ और यज्ञों में प्रयोग किए जाने वाले मंत्र हैं। यज्ञ के अलावा तत्वज्ञान का वर्णन है। तत्व ज्ञान अर्थात रहस्यमयी ज्ञान। ब्रह्माण, आत्मा, ईश्वर और पदार्थ का ज्ञान। यह वेद गद्य मय है। इसमें यज्ञ की असल प्रक्रिया के लिए गद्य मंत्र हैं। इस वेद की दो शाखाएँ हैं, शुक्ल और कृष्ण।

(तीसरा)-सामदेव-साम का अर्थ रूपांतरण और संगीत। सौभ्यता और उपासना। इस वेद में ऋग्वेद की ऋचाओं का संगीतमय रूप है। सामवेद गीतात्मक यानी गीत के रूप में है। इस वेद को संगीत शास्त्र का मूल माना जाता है। 1824 मंत्रों के इस वेद में 75 मंत्रों को छोड़कर शेष सब मंत्र ऋग्वेद से ही लिए गए है इसमें सविता, अग्नि और इन्द्र देवताओं के बारे में जिक्र मिलता है। इसमें मुख्य रूप से शाखाएँ हैं। 75 ऋचाएँ हैं।

चौथा-अथर्वेवेदः थर्व का अर्थ है कंपन और अर्थव का अर्थ अकंपन। ज्ञान से श्रेष्ट कर्म करते हुए जो परमात्मा की उपासना में लीन रहता है वही

अकंप वुद्धि को प्राप्त होकर मोक्ष धारण करता है। इस वेद में रहस्यमयी विद्याओं, जड़ी-वूटियों, चमत्कार और आयुर्वेद आदि का जिक्र है। इसके 20 अध्यायों में 5687 मंत्र हैं। इसके आठ खण्ड हैं जिनमें भेषज वेद और धातु वेद ये दो नाम मिलते हैं।

अव हम संगीत किसको कहते हैं यह समझेंगे, गायन, वादन तथा नृत्य, तीनों कलाएँ मिलकर संगीत कहलाये, गायन, कला को तीनों कलाओं में श्रेष्ठ माना जाता है, और यह तीनों कलाओं के गुरू शिवजी ही जनक है। तथा आगे हम बताएगें कि किस प्रकार तीनों कलाओं की परिचर्चा है। समूगीत अर्थात संगीत से स्पष्ट होता है कि किसी का साथ होना। वे हैं—गायन, वादन और नृत्य। गायन के साथ वादन और वादन के साथ नृत्य का होना अनिवार्य होता है। अगर ये तीनों आपस में मिल जाएँ तो सम्पूर्ण संगीत होता है, जिससे हम अति आनन्दित होते हैं। यही तीनों कलाएँ संगीत कहलाती है, न कि सिर्फ गायन।

गायन-1 ऊँ शिव के मुख से निकली स्वर है। उसे हम स्वर या गायन स्वर कहते हैं। धर्म शास्त्र के अनुसार ऊँ से ही शिव का जन्म का माना गया है, नाद और भगवान शिव का अटूट संबंध है। वस्तुतः नाद एक ऐसी ध्वनि है जिसे ऊँ कहा जाता है। पौराणिक मत है, कि 'ऊँ' से ही भगवान शिव का जन्म हुआ है। संगीत के सात स्वर तो आते जाते रहते हैं, लेकिन उनके केन्द्रीय स्वर नाद में ही है। नाद से ही ध्वनि, और ध्वनि से ही वाणी की उत्पत्ति हुई है। शिव का डमरू नाद-साधना का प्रतीक माना गया है।

वाद्य-(2) एवं नृत्य-(3) भगवान भोलेनाथ दो तरह से तांडव नृत्य करते है। पहला जब वे गुस्से में होते हैं। तब बिना डमरू के तांडव नृत्य करते हैं लेकिन दूसरे तांडव है ऐसे समय में शिव परम आनन्द से पूर्ण रहते हैं, लेकिन जब वे शांत समाधि में होते हैं तो नाद करते है। इस प्रकार उपर्युक्त विवरण से हम समझ सकते हैं, कि डमरू वाद है, भगवान स्वयं नृत्यग है।

संगीत प्रकृति के हर कण-कण में मौजूद है, भगवान शिव को "संगीत का जनक माना जाता है। शिव महापुराण के अनुसार शिव के पहले संगीत के बारे में किसी को भी जानकारी नहीं थी। वाद्य यंत्रों को बजाना और गाना उस समय कोई नहीं जानता था, चूँकि शिव ही ब्रह्मांड में सर्वप्रथम आए है। अतः शिव ही संगीत के जनक माने जाते हैं।

नटराज, रूप भगवान शिव शंकर का ही रूप है, जब शिव तांडव करते हैं, तो उनका यह रूप नटराज कहलाता है, नटराज शब्द दो शब्दों के मेल से बना है, 'नट' और 'राज' नट का अर्थ है, कला और राज का अर्थ है—राजा भगवान शिव शंकर का नटराज रूप इस बात का सूचक है कि अज्ञानता को संगीत और नृत्य से भी दूर किया जा सकता है।

नटराज शास्त्र में उल्लेखित संगीत नृत्य आदि के प्रवर्तक शिव ही है। शिव महापुराणों में 29 उप-पुराणों में से एक है। इसमें 24000 लोक है जिनमें शिव का संगीत के प्रति स्नेह के बारे में विस्तारित चर्चा है। वर्तमान में शास्त्रीय नृत्य से सम्बन्धित जितनी भी विधाएँ प्रचलित है। वह तांडव नृत्य की ही देन है। तांडव नृत्य की तीव्र प्रतिक्रिया है, वही लास्य, सौम्य शैली में वर्तमान में भरत नाट्यम, कुचिपुरी, ओडिसी और कथक नृत्य किए जाते हैं। यह लास्य शैली से प्रेरित है। जबकि कथकली तांडव तृत्य से प्रेरित है।

अब मैं मुख्यतः शिव के जनमय संगीत की भूलोक यानी पृथ्वी के इस धरती पर किस प्रकार विस्फोटक चमत्कारी की है उसकी चर्चा आवश्यक है।

संगीत की शाक्ति

ज्ञान-विज्ञान से परिपूर्ण मानव-जगत में नित नए प्रयोग हो रहे हैं। जब ये प्रयोग जीवन के अभिन्न अंग बन जाते हैं तब मानव फिर अभिनव अनुसंधान में प्रवृत्त हो जाता है। यद्यपि संगीत स्वयं एक विज्ञान है, किन्तु अभी उसकी सिद्धि के लिए

वर्षों की तपस्या अपेक्षित है। इधर कुछ समय से वैज्ञानिकों का ध्यान संगीत की ओर गया है, लेकिन संगीत के क्रियात्क ज्ञान के अभाव के कारण हर वैज्ञानिक इस ओर ध्यान नहीं दे सका है।

संसार परमाणु की सत्ता स्वीकार कर चुका है और नाद के गुण से भी वह परिचित है। किन्तु नाद की विलक्षण शाक्ति अभी अप्रकट है। जिस दिन वह प्रकट हो जाएगी, संसार एक मत से संगीत को सर्वोपरि विज्ञान स्वीकार कर लेगा। अणु और परमाणु का अस्तित्व उसके समक्ष नगण्य हो जाएगा। प्राचीन काल में ध्वनि के भौतिक प्रभाव पर जो प्रयोग किए गए थे, वे आज केवल किंवदंती के रूप में अवशिष्ट है। किन्तु जो भी उन किंवदंतियों को सुनता है, वह भविष्य में उनकी सफलता के लिए आज के वैज्ञानिक उत्कर्ष को देखकर आस्थावान हो जाता है। हमारे प्राचीन आचार्य और महर्षियों ने हाइड्रोजन बम निश्चय ही नहीं बनाए थे, किन्तु ध्वनि विज्ञान पर उन्होंने जो विचार व्यक्त किये थे,

विज्ञान द्वारा यह सिद्ध हो गया है कि द्रव्य (मैटर) और शक्ति (एनर्जी), ये दोनों एक ही वस्तु है। 'मैटर' को 'एनर्जी' और 'एनर्जी' को 'मैटर' में परिवर्तित किया जा सकता है, अर्थात् परम तत्व एक ही है। अतः शब्द का प्रभाव बड़ा विलक्षण है। जिस प्रकार मिट्टी का गुण 'गंध' और अग्नि का गुण 'ऊष्णता' है, उसी प्रकार आकाश का गुण 'शब्द' है। वह सदा आकाश में विद्यमान रहता है। इस सत्य को जान लेने पर कुछ वैज्ञानिकों का दावा है कि वे शीघ्र ही किसी उपकरण की सहायता से तानसेन का गायन अथवा भगवान श्री कृष्ण के मुख से कही गई गीता को आकाश से ग्रहण कर उन्हीं की आवाज में सुनवा सकेंगे।

इंगलैंड की एक महिला एलियस ने संगीत द्वारा टेलीविजन पर गिलास तोड़ने का आश्चर्यजनक प्रदर्शन किया था। स्टूडियो में काँच के चार गिलास रखे गए, जो कि मिस एलियस द्वारा तोड़े जानेवाले थे। एलियस ने गायन प्रारम्भ किया। हजारों मनुष्य अपने-अपने घरों में टेलीविज़न पर यह कमाल देख रहे थे। किन्तु एलियस स्टूडियो में रखे गिलासों को न तोड़ सकी। बाद में एक औरत ने टेलीविज़न को पत्र लिखा कि 'एलियस के ऊँचे स्वर ने मेरे घर के चार गिलासों को चटका दिया। इसके पश्चात् अन्य लोगों से टूटे हुए गिलासों के 29 नमूने प्राप्त हुए, जो कि उनके घरों में एलियस के एक विशेष ऊँचे स्वर से टूट गए थे। स्टूडियों के कमरे विशेष प्रकार के बने होने के कारण ध्वनि का प्रभाव वहाँ के गिलासों पर पूर्णरूपेण नहीं पड़ सका था, इसलिए वे नहीं टूटे किन्तु अन्य लोगों ने जब अनेक पत्र टूटे गिलासों के नमूने-सहित भेजे, तब प्रयोग की सफलता पर अत्यन्त आचर्य और हर्ष हुआ।

युद्ध-कान्त में फ़ौजी बैन्डों को आदेश दिया जाता था कि पुल के उपर से गज़रते समय वे बैन्डों को न बजाते हुए तथा पदचायों में समानता न रखते हुए खामोशी के साथ चलें, क्योंकि स्वर के प्रभाव से पुल टूटने की आशंका रहती थी।

'ट्र, थ' की 8-वीं वॉल्यूम में एक स्थान पर कहा गया है कि कैप्टन ओवर्ने ने एक बार तिब्बत की एक अन्धकारपूर्ण गुफ़ा में प्रवेश किया था। उनका साथी एक लामा अपने साथ धातु-निर्मित गोंग (एक वाघ) ले गया था। जब वे लोग अन्धकार में प्रविष्ट हुए, तब लामा ने अपने वाद्य को लकड़ी के 'हैमर' से बजाना शुरू किया। कैप्टन का कहना है–'मुझे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि वाद्य की टंकार से आधी दर्जन के लगभग हरे प्रकाश की किरणें प्रस्फुटित हुए, जिनका प्रकाश 500 कैण्डिल पावर से किसी भी प्रकार कम नहीं था। तिब्बत में अन्धकार को ध्वनि-कम्पनों द्वारा दूर करने की यह क्रिया काफी प्रचलित है। इस प्रकार संगीत की रोशनी में उन्होंने कई गुफाएँ देखी। सम्भव है, प्राचीन काल में अजन्ता और एलोरा की गुफाओं की बारीक कला के निर्माण में भी संगीत का ही आश्रम लिया गया हो, क्योंकि कई स्थलों पर इतनी बारीक चित्रकारी देखने को मिलती है, जो साधारण प्रकाश में पूर्ण करना असम्भव है और आग के प्रकाश द्वारा

इसलिए सम्भव नहीं कि उसके धुएँ से उसके नष्ट और खराब होने का भय रहता है।

भारतीय संगीत-साहित्य में तानसेन से सम्बन्धित कई चमत्कारिक किंवदन्तियाँ है, जिनमें से दीपक राग द्वारा दीपक जला देना, मेघ राग द्वारा वृष्टि कराना और स्वर के प्रभाव से हिरन आदि पशुओं को पास बुला लेना मुख्य रूप से प्रचलित है। इसी प्रकार ग्रीक साहित्य में ऑरफ़ेन्स का वर्णन मिलता है, जो संगीत के प्रभाव से चराचर जगत् को हिला देता था, समुद्र की उत्ताल तरंगों को शांत कर देता था और वायु के वेग को रोककर पर्वतों को गति दे सकता था।

मिल्टन ने 'पैराडाइज लास्ट' में लिखा है कि जब ईश्वर ने सृष्टि रची, तब उसने पहले बिखरे हुए महाभूतों को संगीत द्वारा एकत्र किया, तत्पश्चात् सृष्टि रचना को। ट्राइडन इसी बात को अपने सैन्ट असीलिया की प्रार्थना के गीत में दिखाता है। वह कहता है कि संगीत में केवल वस्तु के सृजन की ही नहीं, लय उत्पन्न करने की भी शक्ति है, जिस प्रकार जगत् की उत्पत्ति संगीत से है, उसी प्रकार उसका लय भी संगीत से ही होता है। जैसे संगीत भौतिक तत्वों का समन्वय करता है, वैसे ही आध्यात्मक तत्वों का भी। स्थूल और सूक्ष्म, दोनों ही सृष्टि संगीत की शक्ति के अधीन है, इस सत्य को स्टीवेन्सन ने भी स्वीकार किया है। उसने अपने 'पैंस पाइप्स' नामक लेख में वंशी बजाते हुए प्रकृति-देव की कल्पना की है।

आजकल कुछ वैज्ञानिक पशु-पक्षी और कीड़े-मकोड़े के संगीत को भी रिकॉर्ड कर रहे हैं। इससे इन्हें संगीत-प्रभाव के अनुसंधान में सहायता मिलती है। 72 वर्षीय लुडविगकौश पिछले 64 वर्षों से पक्षियों के स्वरों का अध्ययन कर रहे हैं। चीन के चाँग पो ने कीड़ों के संगीत के अनेक रिकॉर्ड तैयार किए हैं। उनका कहना है कि मच्छरों को संगीत से बेहद प्रेम होता है। गर्मी के दिनों में बिजली पैदा करने वाले यन्त्र की मधुर आवाज पर असंख्या मच्छर अपने प्राणों की भेंट चढ़ा देते हैं। मकड़ियाँ अच्छी संगीत सुनकर उसके पास खिसक कर आ जाती है। पेलीसिन नामक फ्रेंच लेखक जेल में बाँसुरी बजा-बजा कर मकड़ियों को अपने काफ़ी निकट तक बुला लिया करता था।

चीन के प्रमुख समाचार पत्र 'पिपुल्स डेली' की एक रिपोर्ट में कहा गया है कि तैयुआन के एक डेरी फ़ार्म में कोमल और हलके संगीत का आयोजन करने से गाएँ अधिक दूध देने लगी है। शांसी प्रांत के श्रमिक-डेरी फ़ार्म ने दूध देनेवाली अपनी 45 गायों के दूध का दैनिक औसत 444.5 किलोग्राम से 514.5 किलोग्राम कर लिया है। उनकी चारा वगैरह की अन्य सुविधाओं में कोई परिवर्तन नहीं किया गया था सर्वोत्तम परिणाम एक मिश्रित नस्ल की गाय से प्राप्त हुए। दस दिन की परीक्षा में यह देखा गया की संगीत की व्यवस्था करने पर वह प्रतिदिन औसत 16.5 किलोग्राम अर्थात् पहले की अपेक्षा 2.5 किलोग्राम अधिक दूध देती है।

कुछ समय पूर्व शेर-जैसे हिंसक पशु पर भारतीय संगीत के आचार्य पंडित ओंमकारनाथ ठाकुर ने लखनऊ के चिड़ियाघर में एक प्रयोग किया था। शेर के निकट जाने पर उसका हिंसक भाव स्पष्ट परिलक्षित हो रहा था, किन्तु कोमल गांधार के विशिष्ट प्रयोग द्वारा उसकी आँखों में कुछ ही देर बाद परिवर्तन आ गया। कुत्ते की तरह वह अपनी पूँछ हिलाने लगा और उसकी आँखों से वात्सल्य प्रकट होने लगा।

सर जे. सी. बोस ने वनस्पति-शास्त्र संबंधी विशेष अनुसंधान के द्वारा प्रमाणित कर लिया कि वनस्पति में भी जीव है। पंडित ओंमकारनाथ ठाकुर ने उनकी प्रयोगशाला में जाकर एक बार भैरवी गाई थी। गाने से पूर्व यंत्रों द्वारा पौधें व पत्ती की अवस्था देख ली गई थी और गायन के पश्चात् उन पर आई हुई नई चमक का दर्शन भी लोगों ने किया था। मधुर स्वर सुनकर वृक्षों के 'प्रोटोप्लाज्म' के कोश में स्थित 'क्लोरोप्लास्ट' विचलित और गतिमान हो उठता है।

दक्षिण की प्रसिद्ध अन्नामलाई यूनिवर्सिटी में बॉटनी-विभाग के कुछ छात्रों ने संगीत द्वारा पौधों पर अद्‌भुत प्रभाव डाला। एक ही क़िस्म की दो पौधे तैयार किए गए। एक पौधे को स्वरों द्वारा कई दिनों तक प्रभावित किया गया और दूसरे को प्राकृतिक अवस्था में स्वतंत्र रहने दिया गया। प्रयोग के पश्चात् देखा गया कि जिस पौधे को संगीत सुनवाया गया था, वह दूसरे की अपेक्षा सवागुनी गति से बढ़ रहा था।

प्राचीन मिश्र में संगीत की शक्ति के द्वारा पागलों का उपचार किया जाता था। डॉ. जे. पॉल ने अपनी पुस्तक 'संगीत चिकित्सा' में विभिन्न रोगों द्वारा विभिन्न बीमारियों का उपचार करने पर विस्तृत प्रकाश डाला है। क्लोरोफ़ार्म की अपेक्षा किसी भी गंभीर नाद द्वारा मस्तिष्क की नाड़ियों को सुषुप्त किया जा सकता है। इस प्रकार औधि और शाक्ति, दोनों ही रूपों में यह कला प्रयोज्य है।

संगीत के प्राचीन ग्रंथों में राग-रागिनियों के स्वरूप और उनके ध्यान की चर्चा मिलती है। उनका अभिप्राय है कि राग-रागनियों का शुद्ध रूप से ध्यान और गान करने पर उनका रूप साकार हो उठता है। श्रीमती वाट्स ह्म ग ने वर्षों के अनुसंधान द्वारा हाल ही में लॉर्ड लीटन के स्टूडियो में ध्वनि-आकृतियों का सजीव चित्रण भाषाण के साथ-साथ दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत किया था। उन्होंने एक साधारण वाद्य 'ईडोफ़ोन' पर विशेष गायन प्रारंभ किया तो दर्शकों ने देखा कि प्रस्तुत प्रत्येक स्वर एक विशेष आकृति में सामने आता है। भाषण के पश्चात् हवाई कंपनों में उन्होंने छोटे-छोटे बीज फेंक कर मारे, परिणामस्वरूप आकृतियों में हल-चल होने लगी। इन हिलती-डुलती आकृतियों ने फिर कई रूप धारण कर लिए। एक प्रत्यक्ष-दर्शी संवाददाता ने बताया कि आकृतियों में सितारे, साँप तथा पहिए की भाँति की अनेक शक्लें बन गई थी।

एक बार श्रीमती ह्म ग एक स्वर का प्रसारण कर रही थीं। उसी समय आँखों के सामने एक फूल की आकृति आई अध्य हो गई। इस अनुसंधान को जनता के समक्ष उपर्युक्त लेबोरेटरी में फिर से उन्होंने जब रखा, तब फूलों की कई क़िस्में सामने आई और दर्शकों ने उन्हें पसन्द किया। किसी-किसी दर्शक के मुँह से तो यह भी निकला कि कितने प्यारे फूल हैं! इस प्रकार अनेक वृक्षों की आकृतियों को भी स्वर-संधान द्वारा रूप प्रदान किया गया और उसमें सफलता भी मिली।

निष्कर्ष—उपर्युक्त बातों से हम कह सकते हैं कि जिसकी संगीत में आस्था है उसको शिव में भी आस्था है, और संगीत सुनने से हमें आत्मोर्जा मिलती है, और नगण्य कानों से संगीत को काल्पनिक से वास्तविक की ओर ले जाती है।

संगीत में शिव का शक्ति बोध होता है। पौराणिक कथाओं के अनुसार शिव पृथ्वी का निर्माता है और संगीत के विवरणी अनेक प्रकार से शिव से जुड़ी है, अगर यह बात सत्य है, तो आज भगवान हमें शक्ति देता है। पुराणों में संगीत का वर्णन है और आज हमारे बीच संगीत है, तो भगवान भी है। संगीत ही हमें शक्ति प्रदान करती है। संगीत में शिव शक्ति है, या शिव में संगीत शक्ति है। अतः स्पष्ट है कि हमें दोनों ही रूपों में स्वयं भगवान ही दर्शन मिलता है।

लोक गीत, लोक गाथा, लोक नाट्य में शिव शक्ति

रूपा सिंह

ति. मां. भा. वि. वि. भागलपुर, बिहार

सत्यम शिवम सुंदरम यही तीन शब्द जीवन के मूल हैं।

करपूर गौरम करूणावतारम्
संसार सारम् भुजगेन्द्र हारम्।
सदा वसंतम् हृदयारविंदे
भवम भवानी सहितं नमामि ॥

लोक जीवन में संगीत, नाटक, नृत्य आदि का बहुत महत्व है। यह समाज को जोड़ने तथा परम्पराओं से अवगत कराने का बड़ा ही अनूठा माध्यम है।

शिव और शक्ति देवाधिदेव महादेव और जगत जननी माँ पार्वती जो हमारे सृष्टि करता हैं, पालन करता है, जो हमारी प्रकृति हैं, हमारी ऊर्जा है, हमारी स्तम्भ है। शिव सर्वज्ञ हैं, सर्वस्व हैं, उनकी उपस्थिति कण-कण में है, जान-जान की जीवन शैली उन पर निर्भर है। इन सभी के मूल में शिव हैं। इनके बिना पूजा नहीं, शिव हमारे भूमंडल हैं। हमारी दैहिक, दैविक और भौतिक शक्ति हैं। जगत जननी माहमाया, शंकर प्रिया, माता जगदम्वा हमारे आचरण में हैं, आराधना में हैं, हमारी प्रकृति हैं, हमें जीवन जीना सिखाती हैं, जीना-मरना सिखाती हैं और ऐसे बाबा मैया के चरणों में कोटि वंदन।

शिव शक्ति स्वरूप विभिन्न रूपों में व्यख्याचित किये गए, वस्तु कला, चित्र कला, काव्य, संगीत, रंगमंच, लोक से शास्त्रीय संगीत जगत तक रचे गए हैं। अर्धनरेश्वर रूप तो कलासंस्कृति, साहित्य, धर्म, समाज को एक नई दिशा प्रदन करता है। लोक महत्व की दृष्टि से योगिनियों का शिव लोक में विशिष्ट स्थान है। अनेकों रूपों में शक्ति स्वरूपिणीयोगिन क्षेत्रिय नामों से पूजी जाती हैं तथा लोक गीतों के माध्यम से उनकी आराधना की जाती है।

शिव शक्ति का वर्णन किसी कागज़ में असंभव है। इनकी लीलाओं की विराटता अंतहीन, सीमाहीन क्षितिज से, आदि से अंत तक कोई सीमित नहीं कर सकता। आनंद और उल्लास के विस्तृत रूप में मनोहारी शिव सुंदर हैं। शिव विभस्त हैं, शिव सरल हैं, शिव रौद्र हैं, शिव सहज हैं, शिव कठोर हैं, शिव निर्मल हैं, शिव अघोरी है, शिव राजा, शिव भिख़ारी हैं, शिव संसार हैं, शिव सार्थक हैं, शिव विपरीतार्थक हैं, शिव शक्ति में समाहित हैं और शक्ति शिव में, संसार शिव में और मानव शिव-शक्ति की आभा में, शिव शक्ति के शब्द आते ही शरीर के अंदर सांसों का आवागमन इस प्रकार झंकृत होने लगता है कि में तुझमें तू मुझमें तू मेरा मैं तेरा (सोहम्) और आती जति सांसों में / नमः शिवाय के पंचाक्षर का जाप चलने लगता है।

लोक गीतों और कथाओं में शिव शक्ति-शिव का कैलाश और हिमालय से अनूनाश्रय संबंध है। हम विहार वासी अपने आपको शिव लोक में ही विचरण करते महसूस करते हैं, क्योंकि हमारी रीति-रिवाज सारे शिव पार्वती से जुड़े परम्पराओं के आधार पर चलता है। हमें लगता है कि शिव राजा कैलाश के उनके पर्वतों पर विराज ते हैं और हमसब उन्हीं की सीमा लोम में रहते हैं। हम जहाँ भी रहते हों गांव में, शाहरों में, सुबह-सुबह शिवालयों में घंटे बजना शुरू हो जाता है, हमारी

दिनचर्या के साथ शिवमय होती जाती हैं। पंडित, पुजारी, लोक समाज, नर-नारी, शिव आराधना शुरू कर देते हैं। भजन तथा लोक गीत के माध्यम से शिव से याचना शुरू हो जाती है। हमारे सबसे बड़े शिव भक्त कवि महाकवि विद्यापति के शब्दों में–

❍ कखन हरब दुख मोर
हे भोला नाथ कखन हरब दुख मोर
दुख ही जन्म दिल दुख रही कम गमाओल
सुख सपनाहूं नहीं भी भेल
हे भोला नाथ कखन हरब दुख मोर

इस लोक गीत के माध्यम से शिव आराधना करते हैं। इन लोकगीतों का नाम भी देते हैं। शिव पर आधारित जो भजन हम गाते हैं उसे मैथिली भाषा में नचारी या महेशवाणी कहते हैं। भोजपुरी में भोला भजन शिव भजन या गीत कहते हैं। हिंदी भाषाओं में भी गायकों द्वारा अनेकों शिवभजन प्रचलित हैं। प्रसिद्ध लोक गायिका स्वर कोकिला श्रीमती शारदा सिन्हा जी की एक प्रसिद्ध प्रस्तुति–

❍ का लेके शिव के मनायब हो
शिव मानत नाहीं
कोठा अटारी शिव के मनहूँ न भावे
टुटली मढ़्या कहां पायब हो
शिव मानत नाहीं
❍ हमार जोगिया हो हमार जोगिया
डिम-डिम डमरू बजावेला हमार जोगिया

इसी तरह लोकगीतों में शक्ति स्वरूपा मां की आराधना 'मनौऊंन' के रूप में की जाती है। ग्रामीण महिला-पुरुष बड़े ही श्रद्धा भक्ति से मनौऊंन गाते हैं। माता के गहवर का विशेष महत्व होता है। शक्ति स्वरूपिणी अनेक नामों से पूजी जाती हैं। विशेष अवसरों पर माता का अलग-अलग ढंग से मनौऊंन होता है। मनौऊंन के कुछ अंश इस प्रकार हैं–

❍ पियारी अचरवां माई के
थकरल केस हे
बिहसली आई ली मैया
गहवर अपन हे
तोहरा चढ़ायब मैया अड़हुल फूल हे
अपना लय मांगे हो मैया
सीत के सिंदूर हे
❍ जय जय भैरवि असुर भयावनी
पशुपति भाविनी माया
सहज सुमति वर दीयों है गोसावनी
अनुगति-गति तुअ पाया
वासर रैन सवासन शोभित
चरण चंद्र मनी चूड़ा
कतहूक देल मारी मुख मिलल
कतहूक कय कूड़ा
जय जय...

इस प्रकार सावन के महीने में शिव की पूजा का विशेष महत्व हो जाता है। पूरे भारतवर्ष में द्वादश लिंगों पर कावर से गंगाजल भरकर चढ़ाया जाता है। अपने क्षेत्रीय शिव मंदिरों में कांवरिया द्वारा जल अर्पित किया जाता है। सावन के पूरे महीने में भारतवर्ष ही नहीं अपितु विदेशों से भी शिव भक्तों का तांता लग जाता है। जैसे नेपाल, बंगाल, भूटान, वर्मा तिब्बत, मलेशिया, इत्यादि देशों के शिव भक्त भारत आते हैं। सावन में विशेष रूप से बिहार (अधीनस्त क्षेत्र) झारखंड में कांवरियों की भीड़ होती है, क्योंकि झारखंड स्थित देवघर में रावणेश्वर बाबा बैद्यनाथ का धाम है और वहां शक्तिपीठ भी है। भागलपुर जिला के अंतर्गत सुल्तानगंज से उत्तरवाहिनी गंगा का जल लेकर कंधे पर कांवर उठाकर पैदल ही बोल बम का नारा लगाते हुए बाबा बैद्यनाथ धाम जाते हैं। जहां शिव वहाँ शिवानी विराजती हैं। शिव शक्ति के महत्म से जुड़ें अनेकों कथाओं गाथाओं का वर्णन मिलता है।

शिव के प्रादुर्भाव से लेकर शिव विवाह, गणेश की सृष्टि जगत कल्याण संबंधित अनेक लोक कथाएं प्रचलित हैं। मां भवानी जगत जननी प्रजापति के घर जन्मि तथा सदाशिव के साथ विवाह हुआ। पिता दक्ष द्वारा अपमानित होकर उनके यहां किए जा रहे यज्ञ के यज्ञ कुंड में कूदकर उन्होंने आत्मदाह कर लिया।

शक्ति का पार्वती रूप और शिव-पार्वती से जुड़ी लोक कथाएँ एवं गीत–सती के आत्मदाह करने के बाद, अगले जन्म में पर्वतराज हिमालय के यहां उन्होंने

पार्वती के रूप में जन्म लिया। सती, पार्वती, उमा सभी एक माता दुर्गा के ही अनेक रूप हैं। शिव और पार्वती के मिलन के बाद शिवजी का गृहस्थ जीवन पुनः शुरू हुआ। हमें उनके जीवन से जुड़ी अनेक प्रकार की घटनाओं की कथा का वर्णन मिलता है। पार्वती रूप में भगवान शिव को पति रूप में प्राप्त करने के लिए उन्होंने तपस्या की, शिव जी ने प्रसन्न होकर उनकी मनोकामना पूर्ण की और उन से विवाह किया।

इस घन घोर तपस्या की एक बहुत धार्मिक पौराणिक कथा का हिंदू धर्म में किए जाने वाले प्रमुख पर्व में से एक का संबंध है। इस पर्व का नाम हरतालिका तीज है। महिलाएं उपवास में रहकर पति के दीर्घायु एवं यशस्वी होने के लिए ईश्वर से आराधना करती हैं।

यह पर्व भाद्रपद माह के शुक्ल पक्ष की तृतीया तिथि को किया जाता है। हर वर्ष महिलाएं इसे अटूट आस्था से अपने अखंड सुहाग के लिए करती हैं। इस व्रत में देवाधिदेव महादेव, माता गौरी और श्री गणेश की पूजा अर्चना की जाती है। यह निर्जला और निराहार व्रत होता है। महिलाएं रात्रि जागरण कर शिव और शक्ति के भजन और गीत गाती हैं। इस दिन शिव शक्ति की मिट्टी की मूर्ति बनाकर उनका पूजन किया जाता है और उनसे पति व संतान के सुख के लिए प्रार्थना की जाती है।

इस व्रत का संबंध एक लोककथा से है कि जब पार्वती अपने पिता के घर बड़ी हो रही थी तो उनके पिता को यह चिंता हो रही थी कि इतनी गुनी पुत्री का हाथ किनको दूं। देवों और राजाओं में उन्हें कोई अनुकूल नहीं लगता था, एक बार नारदजी प्रकट हुए और उन्हें विष्णु भगवान का प्रस्ताव दे डाला। मन ही मन में अपनी पुत्री के भाग्य को सराह रहे थे। परंतु शक्ति शिव को पति रूप में पाना चाहती थी। इसके लिए उन्होंने हिमालय पर गंगोत्री के समीप बाल्यावस्था में ही अधोमुखी होकर अन्न-जल त्याग कर कठिन तपस्या की। इधर पार्वती जी को इसकी खबर लगी तो वह उदास हो गई वह अपनी सखी के घर जा कर रोने लगी, सखी ने पूछा—"बात क्या है जो हमें नहीं बता रही और रोए जा रही हैं?" तब जाकर पार्वती जी ने सारी बातें अपनी सखी को बताई तब सखी ने कहा "ऐसी बात है तो मैं तुम्हें तुम्हारे पिता के राज्य के बाहर जंगल में छुपा देती हूँ। जहां तुम्हारे पिता को तुम्हारी खबर तक ना हो।" ऐसा ही हुआ और घनघोर वन में शक्ति शिव की आराधना करने लगी। आराधना से प्रसन्न होकर शिव प्रकट हुए और शक्ति की मनोकामना पूर्ण कर एवमस्तु कह अंतर्ध्यान हो गए। सखियों द्वारा हरण किए जाने के कारण इस व्रत का नाम हरतालिका पड़ गया।

इधर पिता हिमवान (हिमालय) परेशान होकर जगह जगह खोजने लगे, नदी, जंगल एवं पहाड़ों में। उन्होंने जंगल के घनघोर अंधेरे में भी जाकर देखा क्योंकि उन्हें आशंका थी कि उनकी पुत्री को जंगली जानवर तो अपना आहार नहीं बना लिया। इसी तरह खोजते-खोजते वे उसी जगह जा पहुंचे जहां माँ गौरी अपनी सखी के साथ बालू की मूर्त का विसर्जन कर फॉरेन के बाद जंगल में विश्राम कर रही थी। पिता अपनी पुत्री को देख कर अति प्रसन्न हुए। उन्होंने पुत्री से अपने साथ चलने का अनुरोध किया, तथा पुत्री के प्रस्ताव को भी उन्होंने मान लिया कि उनका विवाह शिव के साथ ही करवाएंगे। इसके पश्चात माता पार्वती पिता गृह आ जाती हैं अर्पिता भी शिव और शक्ति के विवाह की तैयारी में लग जाते हैं।

इस प्रसंग में कई कथाएं शिव एवं मां शिवानी के संबंधित संसार में प्रचलित हैं। असुरों के प्रचंड उद्दंडता के दमन हेतु देवताओं द्वारा मां को प्रकाट्य करना, तथा शिव को घोर तपस्या से विमुख करना जिससे संसार के कल्याण हेतु शिव शक्ति का मिलन हो सके। हम सभी कामदेव के भस्म होने की कथा तथा रति द्वारा विचलित होना तथा श्राद्ध होना इन सारी कथाओं से अनभिज्ञ नहल हैं। शिव और पार्वती, द्वारा किए गए लीलाओं को लोक कथाओं के माध्यम से संक्षिप्त रूप में व्याख्यान करना असंभव है।

जब माता गौरी और भगवान शिव के विवाह का प्रसंग आता है तो हम नर नारियों को लगता है कि हम उनके साक्ष्य बन जाते हैं। महाशिवरात्रि के दिन पूरे

भारतवर्ष में शिव शक्ति का विवाहोत्सव मनाया जाता है। तरह-तरह की झांकियां निकाली जाती हैं। अलग-अलग वेशभूषाओं में स्त्री पुरुष उनकी बाराती बनने में अपना सौभाग्य समझते हैं। भूत, प्रेत, योगिनी, भोगिनी, हथकट्टा, लंगड़ा, लूल्हा बनने से किसी को परहेज नहीं होता। सभी खुशी -खुशी इस अद्‌भुत छटा का आनंद लेते हैं।

कथाओं के अनुसार शिव शक्ति का विवाह भी अद्‌भुत एवं अविस्मरणीय था। शिव का दूल्हा रूप में महाराजा हिमवान तथा महारानी मैना मैया के द्वार पर आये पर यह क्या यह दूल्हा तो संसार के अन्य र्व से बिल्कुल ही भिन्न था। वर के ऐसे साज सज्जा न तो किसी ने कहीं देखा अथवा सुना होगा। माता महारानी मैना अपने दामाद शिव वर का परीक्षण करने सखियों के साथ हाथों में रत्नजड़ित थल लिए है तथा अन्य विधि व्यवहार की सामग्री साथ लेकर माल से बाहर द्वार पर आती है। अपने इस रूप सलोने वर को देख कर ही वह मूर्छित हो जाती है क्योंकि जामा जोड़ा की जगह बाघंबर और मृगछाल, पैर में जूता नहीं फटा बीमाय, तन पर इत्र पाउडर की जगह भस्म भभूत, गले में हार के बदले मुंडमाल, सिर पर मोर की जगह जुट-जटाओं की लड़ी, तन पर आभूषण की जगह नाग सांपों की सजावट सूरमा लगे कमलनयन की जगह लाल-लाल विकराल आंखें और वर की मंद-मंद मुस्कान की जगह ऐसा विभस्त रूप, जिसे देख सभी नगरवासी हैरत और अचरज में थे कि राजा हिमवान ने अपनी ऐसी रूपवान, गुणवान, सौंदर्य की प्रतिमूर्ति गौरी का हाथ इस भंगिया, जोगिया भिखारी के हाथों में कैसे दे दिया। इनका वाहन भी तो बसहा बरद, घर कैलाश, भोजन के लिए भांग धतूरा, पहने बाघंबर मृगछाल है।

इधर मैना माता अपनी व्यथा इस प्रकार प्रकट करती हैं–

○ गे मा हम नहीं आजू रहब
यही आंगन
जो बुढ़ होएत जमाई
गे माई....

○ एक त वेरी भेल विध-विधाता
दोसर धिया केरे बाप गए माई
तेसर बैरी भेल नारद ब्राह्मण
जे बुढ़ जमाई
गे माई....

○ पहलुक बाजन डमरू तोड़ब
दोसर तोरब मुंड माल
बरद हाँकि बड़ीयात पठायब
दिया लाए जायब परायई
गे माई ...

इस तरह दिगंबर दानी के अनेक रूप और लीलाओं से संसार अभिभूत होता रहा है। शिव भक्त कवि शिरोमणि विद्यापति अपने अपने भाव इस प्रकार दुनिया वालों को सुनाया है–

○ भनहि विद्यापति सुनु हे मनायन
दृढ़ करु अपन ज्ञान गे माई
शुभ-शुभ करु जी गौरी विवाह
गौरी हर एक समान गे माई

शिव शक्ति अर्थात अर्धनारीश्वर ने अपनी गृहस्थी की लीला से भी हम सब को जीने की प्रेरणा दी है। कथाओं में मैया के साथ गृहस्थी चलाने के लिए नोकझोंक, मायके ससुराल की उलाहना, कभी मैया का भगवान शिव को खेती करने के लिए कहना–

○ नित उठी गौरव शिव मनावती
करु बिगहा दुइ खेत
गे माई...

फिर कभी अपने घर में अभाव को देखकर शिव को उलाहना देती हैं–

○ अरज अरज शिव ककरा के दय छी
घर में किछो नय देखए छी यौ
अय घोर खोजलों वैय घोर खोजलों
कोठी सून पड़ल छि यौ

इतना ही नहीं कभी-कभी शांत गौ माता भी अपना सिर उठा मरने दौड़ती हैं उसी प्रकार हम संसारी भी अभाव में आक्रामक हो जाते हैं। शिव शक्ति तो जगत के पालक हैं। स्त्री होने के नाते घर में अभाव के कारण जो परिस्थितियां पैदा होती है इससे हम पृथक नहीं हैं।

इसलिए माता गोरा अपने अंदर की व्याकुलता इस तरह प्रकट करती हैं–

○ सबटा खाये गेलै भांग
बुझी गेलै बसहा
चिबैये गेलै भांग
जंगल झाड़ी घुमिक गौरी
काटीक लेलन भांग
बड़ उत्पाती शिव के बसहा
खाये गेलै भांग
सबटा...

○ व्याकुल गौरा खोजी कय लेलन डांग
एही बाटे बसहा जैता
तोड़िये देयवन टांग
सबटा...

इस तरह से शिव शक्ति के कथाओं का अंतहीन प्रसंग हमें जन्म जन्मांतर तक सुखदाई बनाते रहेगा। शिव शक्ति के इसी नोकझोंक के परिवेश में हम अपने आप को जोड़ते चले आ रहे हैं। माता पार्वती के इस व्यवहार में हर-हर अपने आप को कम महत्व नहल्ल देते–

अपना लय भिखारी, सेवक लय घोड़ा

अर्थात कुछ हो ना हो अपने आपको कमतर क्यों समझें। शेवटी शिव से तनिक विलग नहीं रह सकती तो शिव को उन्हें खिजलने में बड़ा मजा आता है। कभी भांग पीसने को लेकर तो कभी बसहा को लेकर तो कभी त्रिशूल डमरू को लेकर रूठने मनानें का दौर चलता रहता था। इतना ही नहीं माता पार्वती के नैयहर की भी उलाहना देने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ते थे।

माता पार्वती जगत जननी मैया गोरा जगत पिता दिगंवर दानी भोलेनाथ की कथा तथा लोक कथा का से संबंधित गीतों लोकगीतों का कोई अंत हो ही नहीं सकता। मैंने अपने अल्प ज्ञान से शिव शक्ति से संबंधित अंश और मेरे वड़े वुजुर्गों के माध्यम से जो सिखा है उसी में से छोटी सी प्रस्तुति के साथ निवेदित करने का प्रयास कर रही हूं। अनजाने में मेरे द्वारा हुई अनगिनत त्रुटियों के लिए क्षमा मांगते हुए मैं अपने भाव रख रही हूं। इस लघु अंश पत्र के द्वारा मैं शिव शक्ति के चरणों में समर्पण देती हूं। नमः शिवाय।

साहित्य में शिव शक्ति 'कालिदास, शिवमहापुराण और धनुर्भङ्गम् महाकाव्य के परिप्रेक्ष्य में'

सचिन सेमवाल

शोधछात्र साहित्यविभाग

रा.सं.सं.लखनऊ परिसर, लखनऊ (उ.प्र.)

अमरी कबरीभारभ्रमरीमुखरी कृतम्।
दूरी करोतु दुरितं गौरीचरणपंकजम्॥

भारतीय सनातन परम्परा धर्म पर पूर्णाश्रित सभ्यता है। धर्म मानसिक विश्वास के साथ ही कर्म तथा आत्मा का संयोग है। यह संयोग बुद्धि का प्रेरक है तथा ज्ञानेन्द्रियों को जाग त और कर्मेन्द्रियों को क्रियान्वित करता है। यह मानव को चेतनत्व प्रदान करता है। इन सबकी निष्कलुषिता मानव को श्रेष्ठ कर्मों हेतु उद्यत करके आनन्दमय जीवनयापन रूपी परमोपलब्धि को लब्ध करवाती है। इस सम्पूर्ण प्रकल्प में मनुष्य की नवीन पीढी समय के साथ परिवर्तित हो प्राक्-परम्परा को साथ ले जाते हुए नूतन आदर्श स्थापित करती है। आज मानव-जाति को अरबों-खरबों वर्ष व्यतीत हो चुके हैं और निरंतर नूतन अंचल को धारण करता ये ब्रह्माण्ड वर्तमान के साथ भी न्याय करने में असमर्थ प्रतीत होता है। फिर भूतकाल तथा भविय की परिकल्पना करना असम्भव सा है। परन्तु वास्तविकता के पुष्ट-प्रमाण किसी भी प्रकार की छद्म्ता को पराजित करते है तथा अपने अस्तित्व को युगयुगांत तक प्रकाशित करते रहे हैं।

सृष्टिक्रम में यथा मनुष्यजाति का निरंतर अग्रेसरण होता रहा है, तदनुरूप धर्म तथा साहित्य जैसे पृष्ठभूम्यात्मक बिन्दुओं की भी स्थिति है। धार्मिक-आध्यात्म मानव को शासनात्मक आदेषित करके जीवन जीने की जो विधा सिखलाता है वही अमूल्य धरोहर साहित्य के रूप में परिणत हो चिरस्थायी स्वरूप धारण करता है। भारतीय प्राचीन परम्परा वैदिककाल से प्रारम्भ होकर सम्प्रति अत्याधुनिक संगणकयन्त्रों तक प्रतिभागिता प्रदान कर रही है। समस्त सभ्यताओं में पुरोगा भारतीय सभ्यता का वृहद् साहित्य वेद-वेदांग-पुराण-दर्शन-धर्माचारग्रन्थ-सूत्रोपनिषद-रामायण-महाभारत-स्मृति-व्याकरण -छन्दशास्त्र-ज्योति।-आयुर्वेद-योग-चिकित्सा-काव्यशास्त्रादि विशाल कलेवर युक्त जगत में व्याप्त है। इस साहित्य में उद्धत विषय वस्तु मानव जाति के समस्त विभागों से परस्पर सम्मिलित है। भारतीय साहित्य विश्वपुरोगा साहित्य है। न केवल स्वार्थहित अपितु **"वसुधैव कुटुम्बकम्"** की भावना तथा सर्वकल्याण का उद्घोष इसी अपरिमित साहित्यवाङ्मय में निहित है।

यथा–

सर्वेभवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कचिद्दुःख भाग् भवेत् ॥

आर्ष काव्यों में ऋषि मुनियों के तत्सामयिक कथनों में अत्याधुनिक असमंजसताएं परिलक्षित करते हुए उनका निदान भी प्रस्तुत किया है।

यथा–

मात वत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्
आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पश्यति ॥

भारतीय संस्कृत साहित्य में इस प्रकार के श्लोकों के माध्यम से सम्प्रतिकाल की महाबाधाओं का दूरीकरण संभव प्रतीत होता है। यथा **"मातृवत् परदारेशु"** की भावना महिलाओं के संबंध में समाज की निम्न सोच तथा कुबुद्धि का नाश करके ममत्व और पुत्रत्व के संतुलित संबंध की वाहिका है। तथा **"परद्रव्येषु लोष्ठवत्"** भ्रष्टाचार, चौरकार्य तथा लुण्ठनादि कुकृत्यों का शमनकर समाज को मूलशान्ति प्रदान करने वाला विचार है वहीं **"आत्मवत् सर्वभूतेषु"** की भावना आतंकवाद, नक्सलवाद, अलगाववाद आदि हिंसक क्रियाकलापो का इति श्री परक संकेत है। संस्कृत साहित्य उदारता का नगाधिराज है। मनु ने सर्वप्रथम **"स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथ्वियां सर्वमानवाः"** की प्रकल्पना करते हुए इसे युग-युगांत के लिए आदर्श बनाया है। भारतीय साहित्य का मौलिक सिद्धांत धर्मपरक है इसी कारण से वेदोक्त देवों की सत्ता आगे चलकर विस्तृत हुई।

साहित्य में शिवशक्ति के परिप्रेक्ष्य में यदि किंचित् समग्रता का ग्रहण किया जाय तो जिस प्रकार सांख्य दर्शन में सृष्टिक्रम को परिलक्षित किया गया है, उसी प्रकार शिवपुराण में भगवान शिव की प्रधानता से सृष्ट्योत्पत्ति का वर्णन दर्शाया गया है–

प्रकृतेष्व महानासीन् महतश्च गुणास्त्रयः
अहंकारस्ततो जातस्त्रिविधौ **गुणभेदतः ॥**
तन्मात्राचततो जाताः पंचभूतानि वै ततः।
तदैव तानीन्द्रियाणि ज्ञानकर्ममयानि **च ॥**[1]

अर्थात् प्रकृति द्वारा महत्त् की उत्पत्ति हुई और महत्त से तीन गुण हुए। उनसे अहंकार तीन गुणों के भेद से तीन प्रकार का हुआ। उससे पांच (शब्द-रूप-रस-गंध, स्पर्श) तन्मात्रांए हुई। उनसे पंचभूतों का निर्माण (आकाश-वायु-अग्नि-जल-पृथ्वी) हुआ तथा इनसे पांच ज्ञानेन्द्रियों (आंख, नाक, कान, जीभ, त्वचा) तथा पांच कर्मेन्द्रियों (हाथ-पाद-पाशु-उपस्थ-मुख) की उत्पत्ति हुई– श्रुति-स्मृति-पुराण-दर्शन तथा इतिहास में सृष्ट्योत्पत्ति का वर्णन भिन्न-भिन्न प्रकार से मिलता है। विभिन्न शास्त्रों के अलग-अलग रचयिता ऋषि होने से यह स्वीकार्य हो जाता है कि इनका सृष्टिक्रम भिन्न है। तथापि अष्टादश पुराणों के कर्त्ता स्वयं वेदव्यास जी है। उनमें भी पुराणभेद, देवभेद, तथा सृष्टिक्रमभेद स्पष्ट दृष्टिगोचर है। शाक्त-शैव तथा वैष्णव पुराणों की भिन्नता से शक्ति-शिव तथा भगवान विष्णु के अंश से सृष्टिक्रम का विस्तार बताया गया है।

तदुपरान्त इन सव श्रुति-पुराणादि सिद्धान्तों में सृष्टिक्रम का एक स्थाई सिद्धान्त **"प्रकृति-पुरुष से सृष्टि उत्पत्ति"** के रूप में मेरुदण्ड स्वरुप है। शिवपुराणानुसार शिव-शक्ति का अन्तर्हित स्वरुप ही परमात्म स्वरूप है।–

इतीदृशं यदा नासीघत्तत्सदसदात्मकम् ।
योगिनोक्रन्तर्हिताकाशे **यत् पश्यन्ति निरन्तरम्॥**[2]

शिव-शक्ति के इसी स्वरूप का ध्यान योगीजन परमात्म स्वरुप में करते हैं। और उसे ही ईश्वर आदि की उपाधि से संज्ञित किया जाता है।

अमूर्ते यत्पराख्यं वैतस्य मूर्ति सदाशिवः ।
अर्वाचीना पराचीना ईश्वरं तं जगुर्बुधाः॥[3]

शिव स्वयं सम्पूर्ण को समाहित किये हुए सत्-रूप में है। और शिव की जो पराशक्ति है वह चित् रूप में विद्यमान है।

शक्तिस्तदैकलेनापि स्वैरं विहरता तनुः
स्वविग्रहात् स्वयं सृष्टा स्वखरीरानपायिनी॥

अर्थात् स्वच्छन्द विचरण करने वाले उस एक शिव ने अपने शरीर से स्वयं शरीरधारिणी नित्यस्वरूपा शक्ति की सृष्टि की। इन्हीं दोनों शक्तियों का संयोग परमानन्द का उद्बीजक है। इसके प्रभाव से ही सृटि का अग्रेसरण होता है। तथा क्रमशः आनन्दशक्ति-इच्छाशक्ति-ज्ञानशक्ति-क्रियाशक्ति तथा निवृत्ति आदि शक्तियां प्राप्त होती है।

शिवया परया शक्तया संयुक्त परमेश्वरम्''
प्रधान प्रकृतिं तां च मायां गुणवती पराम्।
बुद्धितत्वस्य जननीमाहुर्विकृति वर्जिताम्॥[4]

अर्थात् विकार से रहित होने के कारण उसी को लोग प्रधान, प्रकृति माया परा-त्रिगुणा-बुद्धितत्व की जननी आदि कहा करते हैं। वह शिव की शक्ति ही प्रकृति सकलेश्वरी, अम्बिका, त्रिदेवजननी नित्या और मूलकारण कही जाती है–

सा शक्तिरम्बिका प्रोक्ता प्रकृति सकलेश्वरी
त्रिदेवजननी नित्या मूलकारणमित्युत ॥

शिव को विस्त तरुप से जानने तथा ऊंकार के द्वारा सृष्टि क्रमोत्पत्ति के संदर्भ में सत् रूपी शिव के साथ चित्त शक्ति से नाद और आनन्दशक्ति से बिन्दु का प्राकट्य हुआ इच्छाशक्ति से मकार प्रकट हुआ है। तथा ज्ञानशक्ति से पांचवां स्वर उकार प्रकट हुआ, क्रियाशक्ति से अकार की उत्पत्ति हुई। इस प्रकार प्रणव ॐ की उत्पत्ति शिवपुराण में बताई गई है। शोध-पत्र गौरवमय तथा विषयान्तर भय से केवल यहां पर अधिक विस्तार न करते हुए यही वर्णित करना होगा कि पृथ्वी तत्व से लेकर शिवतत्व तक जो तत्वनिचय है, वह ब्राह्मण्ड है। वह तत्व समूह में लीन होता हुआ अंततोगत्वा सबके जीवनभूत चैतन्यमय परमेश्वर में लय को प्राप्त होता है। और सृष्टिकाल में फिर शक्ति द्वारा शिव से निकलकर स्थूल प्रपंच के रूप में प्रलय कालपर्यन्त सुखपूर्वक स्थित रहता है।

यामाहुर्ब्रह्मविद्वांसो देवी दिव्यगुणान्विताम्।
परस्य परमां शक्ति भवस्य परमात्मनः॥[5]

अनेन प्रकारेण शिवपुराणान्तर्गत शिव-शक्ति का संयोग वर्णित है। संस्कृत के अन्यान्य आर्षकाव्य यथा-वाल्मीकीय रामायण तथा महाभारत आदि में भी भगवान शिव का शक्ति के साथ वर्णन किया गया है। वाल्मीकीय रामायण में कार्तिकेय उत्पत्ति की कथा में देवताओं द्वारा शक्ति के साथ शिव की तपचर्या आदि का वर्णन है–

देवदेव महादेव लोकस्यास्य हितेरत-
ब्राह्मेण तपसा युक्तो देव्या सह तपश्चर॥[6]

अतः स्पष्ट है कि वाल्मीकीय रामायण में भी शिवशक्ति के संयोग का वर्णन समाहित है। और महाभारत में भी अर्जुन द्वारा भीलरूपी शिव के साथ युद्ध का वर्णन प्राप्त होता है। महाभारत के अनुसार अद्वितीय पराक्रम दिखाने पर अर्जुन को भगवान शिव द्वारा पाशुपातास्त्र देना तथा शक्ति के सहित दर्शन देने का वर्णन है।

महाकवि कालिदास के परिप्रेक्ष्य में शिव शक्ति का उद्धरण व्यापकता युक्त है। उनके काव्य निर्माण हेतु पत्नी विद्योतमा द्वारा कहे गये वाक्य **अस्ति कश्चिद् वाग्विशेषः** को विभिन्न कथानको के आधार पर माना जाता है–

इसमें मेघदूत के अतिरिच्य कुमार संभव तथा रघुवंश महाकाव्य में कविवर ने शिव-शक्ति का विशेष वर्णन किया है। ''कुमारसंभव'' महाकाव्य में महाकवि कालिदास द्वारा स्कन्दकुमार की उत्पत्ति विषयक कथानक के अन्तर्गत तारकासुर द्वारा देवताओं को त्राशित करने से लेकर शिव पार्वती मिलन-विवाह, कामदेव का भस्म होना, कुमारोत्पत्ति, तथा तत्पश्चात् तारकासुर का वध करके इन्द्रादि देवताओं का पुनः स्वर्ग को प्राप्त करने का वर्णन मिलता है। कवि कालिदास ने संयोग शृंगारात्मक अपनी इस रचना में शिव-पार्वती का संयोगात्मक वर्णन किया है। इस वर्णन में कविवर कालिदास ने मानवीय प्रकल्पनाओं के साथ शिव पार्वती के रमण आदि क्रिया-कलाप बहुतायत उद्धृत किया है। जिसके फलस्वरूप कालिदास के रोगग्रस्त होने की भी किंवदंति लोक प्रचलित है। किन्तु इसी वर्णन में शास्त्रीय दृष्टि से उन गूढ़ रहस्यों का भी वर्णन प्राप्त होता है, जो कि योगियों की योग साधना का प्रतिफल होता है। कुमार संभव के षष्ठम सर्ग में नारद के द्वारा पार्वती के दर्शन करने के पश्चात् उसके पिता हिमालय को यह बताने का वर्णन है कि यह तुम्हारी कन्या भगवान शिव के अर्ध शरीर की अधिकारिणी है।

तां नारदः कामचरः कदाचित् कन्यांकिल प्रेक्ष्य पितुः समीपे।
समादिदेशैकवधूं भवित्रीं प्रेम्णा शरीरार्धहरा हरस्य॥[7]

क्योंकि यही पार्वती शिव की शक्ति के रूप में सृष्टिलय प्रलय में उनके साथ है तथा प्रत्येक जन्म

धारण करने पर सदाशिव के साथ ही संबंधित रहती है। और पार्वती रूप में शिव के साथ ही उनकी अर्द्धांगिनी के रुप में अवस्थित रहीं। वहीं षष्टम् सर्ग में कुमारोत्पत्ति हेतु शिव को शक्तियुक्त होने पर ही सृष्टि क्रिया संभव होने का वर्णन प्राप्त होता है।

अत आहर्तुमिच्छामि पार्वतीमात्मजन्मने
उत्पत्तये हविर्भोक्तुर्यजमान इवारणिम्॥[8]

अर्थात् जिस प्रकार महायज्ञ का सम्पादन करने हेतु यज्ञकर्त्ता मुख्य हवनीय तत्व अग्नि की प्राप्ति के लिए अरणि को प्राप्त करने का प्रयत्न करता है उसी प्रकार आत्मज उत्पत्ति हेतु शिव के लिए शक्ति अर्थात् पार्वती को ग्रहण करना आवश्यक है। क्योंकि वही शिव और पार्वती समस्त स्थावर-जंगम-चर-अचर प्राणियों के लिए माता-पिता है।

यावन्त्येतानि भूतानि स्थावराणि चराणि च।
मातरं कल्पयन्त्वेनामीशो हि जगतः पिता॥[9]

रघुवंश महाकाव्य के मंगलाचरण में कवि कालिदास ने इसी बात को व्यापकता के साथ साहित्य के रूप में शब्द और अर्थ के लिए प्रकाशित किया है।

वागर्थाविव सम्प क्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ॥[10]

अर्थात्—शब्द और अर्थ के समान नित्य सम्बद्ध जगत् के माता-पिता पार्वती और परमेश्वर को शब्द और अर्थ के परिज्ञान के लिए वन्दन करता हूँ। मीमांसामतानुसार शब्द और अर्थ का नित्य सम्बन्ध है। उसी तरह पार्वती और परमेश्वर (शिव) नित्य सम्बंध युक्त तत्व रूप है। और उन्हीं परमात्म शक्ति रूप शिव-पार्वती को कालिदास ने स्थान-स्थान पर परिलक्षित किया है। इसी वक्तव्य को कुमार संभव में कवि कालिदास ने उद्धृत किया है कि जिस प्रकार वाणी का सम्बंध अर्थ से हुआ है। उसी प्रकार हे हिमालय! तुम भी अपनी कन्या का सम्बंध शिव जी से कर दो—

तमर्थमिव भारत्या सुतया योक्तुमर्हति—
अशोच्या हि पितुः कन्या सद्भर्तुप्रतिपादिता॥[11]

अतः सुस्पष्ट है कि भारतीय साहित्य में सर्वत्र शिव-शक्ति संयोगात्मक वर्णन प्राप्त होता है। भगवान शिव जिस प्रकार सृष्टि के समस्त तत्वों में विद्यमान है उसी प्रकार साहित्य में भी सर्वत्र विभिन्न प्रारूपों में व्याप्त है। प्राचीनकाल से अनवरत रचित साहित्यिक कृतियां में शिव शक्ति तत्व का वर्णन मिलता ही है बल्कि आधुनिक कृतियों में भी शिव शक्ति का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है।

आधुनिक प्रासांगिता के संदर्भ में शिव शक्ति का महत्व अत्यन्त युक्ति संगत प्रतीत होता है। आध्यात्मिक भावपूर्ण होने के साथ-साथ सामाजिक एकता के लिए एक पुष्ट आदर्श के रूप में यह प्रस्तुत होता है। भगवान के द्वारा स्वयं शृंगार रहित वैराग्य भाव युक्त होकर सर्पनागादि गरलीय कृमियों को आभूषणों के रूप में धारण करने का यह भाव है कि सांसारिक चाकचिक्य से परे ही मानव को वास्तविकता का सत्यज्ञान हो पाता है। वैराग्य भाव अन्धन्यूनता का प्रतीकारात्मक भाव है। जहरीले कृमियों को धारण करना समाज की गरलता जैसे निन्दा, अवहेलना आदि दुर्व्यवहारों को साथ लेकर जीवन यापन करने के लिए प्रेरित करता है। शिव परिवार में भयावह विषमता होते हुए भी कल्याणकारी संदेश प्राप्त होता है, यथा शिव साक्षात् आदि-अन्तरहित परमात्म स्वरूप है, किन्तु शक्ति (पार्वती) सदैव अंक में स्थित हो यह सन्देश देती है कि निराकार परमात्मा साकार शक्ति के साथ प्रत्यक्ष होते है। भगवान शिव का वाहन बैल स्वरूप में है जो कि धर्म का प्रतीक माना गया है। वही पार्वती सिंहवाहिनी है सिंह तथा बैल का सृटिचक्र में वैर होता है, किन्तु शिव परिवार में अभयता का प्रतीक सिंह जीवन में निर्भय हो सत्कर्म के लिए प्रेरित करता है। कार्तिकेय का वाहन मयूर सर्पो का काल है। किन्तु शिव परिवार में वह शान्ति का प्रतीक है। गणेश जी विघ्नों के विनाशक है। मेरे द्वारा शोधार्थ गृहीत श्री उमापदचोपाध्याय विरचित धनुर्भङ्गमहाकाव्य के दृष्टिगत शिव-शक्ति का प्रभाव व्यापक है। प्रथम सर्ग से ही कविवर ने शिव-शक्ति कर उद्धरण स्वलेखनी के द्वारा उल्लिखित किया है। यथा प्रथम सर्ग के अनितम लोक में—

शिवा वामे दृष्टा रविनयनकमपोप्यवितरम्।[12]

कवि नें प्रस्तुत लोक मे माँ पार्वती के प्रसङ्ग में कहा है कि माँ पार्वती की विपरीत दृष्टि होने पर सूर्य के समान नेत्रों वाले व्यक्ति को भी पथभ्रष्ट कर देती है। अतः स्पष्ट दृष्टिगोचर है कि शक्ति की महत्ता विषयक यह उद्धरण स्वयं में अपरिमित है। महाकाव्य के द्वितीय सर्ग में विश्वामित्र मुनि के साथ सिद्धाश्रम की ओर प्रस्थान कर रहे राम-लक्ष्मण कामाश्रम नामक स्थान के विषय के मुनि से प्रश्न करते हैं। वह कामाश्रम नामक सिद्धभूमि भगवान शिव द्वारा पूतीकृत है। तपश्चर्या मे लीन भगवान शिव नें कामदेव को इसी स्थान पर भस्म करके सवयं के पारबह्मत्व को जगत्प्रसिद्व किया। उन्हीं शिव के द्वारा कोटिवर्षपर्यन्त इसी स्थान पर घोर साधना की गई। इसी प्रसङ्ग में लोक 2 से 23 तक तीन श्लोकों में शिव की महत्ता का कवि ने स्फुट वर्णन किया है। तीसरे सर्ग के अन्त में 38 वें श्लोक के रूप में "शिवनामसुखधाम" शीर्षक युक्त मधुर गीत रचकर शिवमहिमा को मुखर किया है। अग्रिम तृतीय सर्ग में भी षष्टम् लोक से पन्द्रहवें श्लोक तक 10 श्लोकों में भगवान शिव-शक्ति की सुन्दर महिमा का वर्णन करते हुए कवि नें लिखा है कि–

सन्तप्तभक्तनयनाम्बुविमोचने हि
सन्तानदुःखहरणा जननी समर्था
तन्मस्तके सुरधुनी हृदये भवानी
मात द्वयं विदधतं पतित्तात मित्रम्॥[13]

प्रस्तुत लोक में विपदाग्रस्त भक्त के नेत्रों से जल (आँसू) गिरने से जगदम्बा भवानी अपने पुत्ररूपी भक्त के कष्ट को हर लेती है। अतः भगवान शिव के मस्तक पर विराजित मां गंगा तथा हृदय में माँ दुर्गा हैं। दीन-दुखियों की सहायक उन दोनों माताओं को हम प्रातःप्रणाम करते है। इस दशपद्यीय शिवस्तुति में कविवर उमापद चट्टोपाध्याय नें शिव और शक्ति का उत्तम सामंजस्य प्रदर्शित किया है। सप्तम सर्ग में राक्षकुलसमुदभूत् परमभागवतप्रह्लादपौत्र बलि के प्रसङ्ग में कवि ने भगवान शिव के 'अव्यय' नाम को प्रतिबोधित किया है कि उन परब्रह्म अव्यय भगवान शिव की कृपाकणिका को प्राप्त करके ही बलि नें त्रिभुवन जीत लिया था। 'गंगास्त्रोत्रम्' नामक एकादश सर्ग में गंगावतरण के सन्दर्भ में कवि ने शक्ति सहित शिव का सुन्दर चित्रण प्रस्तुत किया है–

कैलाशाधिपमस्तकावतरणा,[14]
यज्ञेदक्षसुता गताकुतइति,[15]
चण्डी चण्डविनाशिनी गिरीसुता त्वय्येव सक्तःशिवः,[16]

आदि श्लोको के माध्यम से प्रस्तुत महाकाव्य में कवि के द्वारा उदात्त भाव से शिव तथा शक्ति उररीकृत है। अतः यह कहना अत्युक्ति नहीं होगा कि आधुनिक काल में मानव जीवन शिव शक्ति का चिन्तन परक हो सुखपूर्वक आनन्द की प्राप्ति कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. शिवपुराण–रूद्रसंहिता सृष्टिखण्ड, अध्याय-8 श्लोक 56,57
2. शिव महापुराण–रूद्रसंहिता सृष्टिखण्ड, अध्याय-6, श्लोक-18
3. शिव महापुराण-शतरूद्रसंहिता, अध्याय-6, श्लोक-19
4. शिवमहापुराण-शतरूद्रसंहिता, अध्याय-3, श्लोक-6
5. शिवमहापुराण-वायवीयसंहिता, अध्याय-16, श्लोक-7
6. वाल्मीकीय रामायण बालकाण्ड सर्ग-36 श्लोक-9
7. कुमार सम्भव महाकाव्य प्रथमसर्ग श्लोक-50
8. कुमार सम्भव महाकाव्य षष्ठम् सर्ग श्लोक-28
9. कुमार सम्भव महाकाव्य षष्ठम् सर्ग श्लोक-80
10. रघुवंशमहाकाव्य प्रथमसर्ग श्लोक-1
11. कुमार सम्भव महाकाव्य षष्ठमसर्ग श्लोक-79
12. धनुर्भङ्गमहाकाव्य प्रथम सर्ग श्लोक-32
13. धनुर्भङ्गमहाकाव्य तृतीय सर्ग श्लोक-9
14. धनुर्भङ्गमहाकाव्य द्वादश सर्ग श्लोक-9
15. धनुर्भङ्गमहाकाव्य द्वादश सर्ग श्लोक-27
16. धनुर्भङ्गमहाकाव्य द्वादश सर्ग श्लोक-14

शास्त्रीय नृत्य कथक में शिव

शाम्भवी शुक्ला मिश्रा

कथक नृत्यांगना एवं ब्रांड एम्बेसेडर सागर (बुंदेलखण्ड) पर्यटन

शिव को भारतीय वाग्डमय में आदि देवता कहा जाता है। देश के विभिन्न भागों में शिव, महादेव, बड़े देव, बूढ़ा देव, लिंग रूप आदि रूपों में प्रतिष्ठित है और पूजित हैं। रूद्र-रूप शिव का ही प्रारंभिक और प्राचीन रूप है। रूद्र ही समस्त देवताओं के पूर्वरूप माने जाते हैं। भारतीय प्राचीन चार वेदों में से एक वेद ऋग्वेद में शिव को रूद्र कहा है। भारतीय आध्यात्म और दर्शन के केन्द्र में भी शिव और उनकी शक्ति है। लोक में भी शिव की कल्पना अद्भुत है, उन्हें स्वयंभू कहा गया है। देवता-त्रयी यानी ब्रह्मा, विष्णु, महेश की परिकल्पना में शिव को ही सबसे प्रमुख माना गया है। इन प्रमुख देवताओं के माध्यम से ही सृटि का निर्माण, संचालन और ध्वंस होता है। विष्णु को सृष्टि का पालनकर्ता माना गया है। भागवत पुराण के अनुसार प्रकृति के सत्व, रज और तम ये तीन गुण हैं। विष्णु, ब्रह्म और रूद्र ये तीन नाम सृष्टि व प्रकृति को बनाने, संचालित करने में माने गये हैं।

आदिकाल से शिव एक परम्परा के रूप में हर समय उपस्थित रहे हैं। वेद व पुराणों के लिखित साक्ष्य के अनुसार जब काल नहीं थे तब शिव ही थे। इन ग्रंथों में वर्णित है "प्रारंभ में शिव मात्र एक संकल्प के रूप में थे। शिव का यही संकल्प रूप 'ओंकार तत्व' याने 'ऊँ' है जो ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। नृत्य व संगीत आध्यात्म, धर्म के प्रारंभ में यही ओमू आराधना की जाती है।

"ईश्वर स्वरूप नाद ब्रह्म
स्वर ताल लय सरगम
ध्याये नित ब्रजराज
नाद ब्रह्म, ब्रह्म नाद"

संकल्प ही समय था जो हजारों लाखों वर्षों तक निष्क्रिय, निष्काम पड़ा रहा, उसमें कोई हलचल या प्राण गतिविधि नहीं थी। "शिव तत्व की धारणा शक्ति है। यहीं से सृष्टि कालक्रम शुरू हुआ। शिव के मन में जैसे ही इच्छा जागी 'शक्ति' प्रगट हुई। यही परमशक्ति थी जिससे सृष्टि का प्रारंभ हुआ"[1]

भारतीय लोक अवधारणा में 'आद्याशक्ति' के रूप में पराशक्ति की महत्ता स्वीकार की गई है। पार्वती स्वयं आद्याशक्ति का रूप हैं। शिव ने शक्ति को आधे शरीर में धारण कर लिया था इसलिये शिव को अर्धनारीश्वर भी कहा जाता है। आद्याशक्ति पार्वती के नौ रूप अवतरित हुये। शिव पुराण के अनुसार काली, कात्यायनी, इंशानी, चामुण्डा, मुण्ड मर्दिनी, भद्रकाली, भद्रा त्वरिता और वैष्णवी दुर्गा मानी गई हैं लेकिन मूलभूत पराशक्ति के तीन केन्द्र माने जाते हैं सरस्वती, लक्ष्मी और पार्वती। लोक में सर्वाधिक प्रतिष्ठित पार्वती है।[2]

हमने अपने इस शोध पत्र में शिव और शास्त्रीय नृत्य कथक के आपसी संबंध को दर्शाने हेतु पहले अत्यन्त संक्षिप्त में शिव की सत्ता व्याप्ति का उल्लेख किया है।

"लोक और शास्त्र के भेद का प्रारंभ आगम और निगम के माध्यम से हुआ। लोक की आध्यात्मिक प्रणालियों को उपनिषदों में "आगमिक" ज्ञान कहा गया है एवं शास्त्र सम्मत ज्ञान को 'निगमिक' कहा गया है। इस आगमिक परंपरा द्वारा पुराणों से होते

हुये महाभारत का विशाल फलक है जिसमें लगभग सारे पात्र शिव भक्त होते हैं। कर्ण, अर्जुन, द्रोणाचार्य, भीम आदि शिव की शरण में आते हैं।''[3]

अध्यात्म, धर्म, दर्शन आदि सभी क्षेत्रों में हमारी भारतीय संस्कृति का स्वरूप रागात्मक सौंदर्य से अभिमंडित रहा है। नृत्य इस संस्कृति का प्रमुख अंग रहा है और यही कारण है कि हमारी रंगमंचीय परम्परा हो या मंदिर हो या गाँव की चौपाल हो सभी क्षेत्रों में नृत्य के विभिन्न प्रकार के आयोजन परिलक्षित होते हैं। अजन्ता, एलोरा, कोणार्क, चिदम्बरम्, खजुराहो आदि मंदिरों की मूर्तियों में नृत्यात्मक भाव-भंगिमाओं के कलात्मक भाव मौजूद हैं। वेदों में नृत्य शब्द का प्रयोग नृत्य की प्राचीनता का स्पष्ट प्रमाण प्रस्तुत करता है। नृत्य-शिल्प का विधिवत् विवेचना करने वाला संसार का सर्वप्रथम ग्रंथ ''नाट्यशास्त्र'' है जिसे 'पंचमवेद' की संज्ञा दी गई है। इस ग्रंथ का रचनाकाल ईसा के जन्म से अनुमानतः तीन सौ वर्ष पूर्व का है। गायन, वादन तथा नर्तन का सूक्ष्म विवेचन इस ग्रंथ में हुआ है। ऐसा विवेचन आज तक किसी ग्रंथ में नहीं हुआ है। अनेक विद्वानों, आचार्यों ने इस ग्रंथ का आधार लेकर कई ग्रंथों की रचना की है। इन ग्रंथों को नाट्यशास्त्रीय परंपरा के ग्रंथ कहा जाता है। नाट्यशास्त्रीय परंपरा के इन ग्रंथों में नृत्य कला के अधिष्ठाता शिव और पार्वती को माना गया है। ताण्डव नृत्य शिव द्वारा तथा लास्य नृत्य पार्वती द्वारा किया गया नृत्य माना जाता है। इस ताण्डव व लास्य नृत्य के अनेक उपभेद किये गये हैं। शिव को नटराज भी कहा जाता है। नटराज कहने का भी शिव का एक आख्यान है। नटराज की नृत्यमय मुद्रा का प्रचलित स्वरूप इसी कथा पर आधारित है जिसमें बौना राक्षस अपस्मार को नृत्यरत शिव ने अपने पैरों के नीचे दबोच लिया और पूर्ववत् नृत्यरत हो गये। नाट्यशास्त्र के चौथे अध्याय के श्लोक 260 के अनुसार नृत्य प्रयोग की उत्पत्ति तण्डु मुनि ने की–

''सृष्टवा भगवता दत्तास्तण्डवे मुनये तदा।''

नाट्यशास्त्र, अध्याय-4, श्लोक-260

शास्त्रीय नृत्य कथक का इतिहास काफी प्राचीन है। रामायण व महाभारत में कथक शब्द का प्रयोग मिलता है। कथक में नाट्यशास्त्रीय तत्वों का प्रयोग भी यह दर्शाता है कि कथक अपने मूल में नृत्तृव नाट्य को समाहित किये हुये हैं। रामायणकाल व महाभारतकाल में नृत्य का विवरण कई जगह प्राप्त होता है। ''कथा कहे तो कथक कहावे'' की यह परिभाषा आज भी सामान्यतः प्रस्तुत की जाती है।

कथक प्रस्तुति में कथक के जयपुर घराने में गणेा वंदना या शिव स्तुति से ही नृत्य प्रारंभ करने का रिवाज है। विभिन्न आचार्यों, विद्वानों द्वारा पखावज़ के बोलों पर शिव स्तुति प्रस्तुत की जाती है।

उदाहरण–**शिव पक्षचाक्षर स्त्रोत**

नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय भस्माङ्गरागाय महेश्वराय।

नित्याय शुद्धाय दिगम्बराय तस्मै नकाराय नमः शिवाय॥1॥

मंदाकिनीसलिलचन्दनचर्चिताय नन्दीश्वरप्रमथनाथ महेश्वराय।

मण्दारपुष्पवहुपुष्पसुपूजिताय तस्मै मकाराय नमः शिवाय ॥2॥

शिवाय गौरीवदनाब्जव न्दसूर्याय दक्षाध्वरनाशकाय।

श्रीनीलण्ठाय वृषध्वजाय तस्मै शिकाराय नमः शिवाय ॥3॥

वसिष्ठकुम्भोभूदवगौतमार्यमुनीन्द्रदेवार्चितशेखराय।

चन्द्रार्कवैश्वानरलोचनाय तस्मै वकाराय नमः शिवाय ॥4॥

यक्षस्वरूपाय जटाधराय पिनाकहस्ताय सनातनाय।

दिव्याय देवाय दिगम्बराय तस्मै यकाराय नमः शिवायः ॥5॥

इसी प्रकार महापंडित रावणकृत शिव ताण्डव स्त्रोत तो कथक एकल नृत्य व समूह में विभिन्न तरीकों से प्रस्तुत किया जाता है। कथक नृत्य प्रदर्शन के वस्तुक्रम याने वंदना या स्तुति के पश्चात थाट, सिरप, तोड़ा, टुकड़ा, परन किसी एक ताल में विलंबित लय, मध्यलय एवं द्रुत लय में क्रमशः प्रस्तुत किये जाते हैं। ये सभी इस नृत्य प्रदर्शन की वस्तु अथवा उपादान कहे जाते हैं। तोड़े, टुकड़े,

तिहाई के पश्चात द्रुत लय में भी विभिन्न परनें प्रस्तुत की जाती हैं जैसे दुर्गा परन, शिव परन आदि। एक प्रसिद्ध शिव परन बुंदेलखण्ड के प्रसिद्ध बिजना नरेा छत्रपति सिंह जू देव कृत प्रस्तुत है–

शिवपरन

तिरतिटतिट तगिन नगिन, धित्तरान धिन्नरान।

दिग्गदान धुमकिटतक, धिकिटतगिन, धिकिट तगिन।

छत्रपति जगतपति, देवपति महादेव।

तांग्ड़ धिरकिट तिरकिट गले, मुंडमाल शोभित है।

चंद्रभाल, धाकिटधमकिट, डिमक डिमक डमरू बजत।

विघ्नहरन दारिददुख दूरकरत, तिरकिट तनाना।

धिकिटतान तगनगधग, दिताकत नगनड़ान।

गद्दीकिट धिकिटतान, कतिट धगिन धन्नतान।

शारदाही धरतध्यान, गुणीजन सब करत ध्यान।

धाकिट धुमकिट धेत्ताजन पतिमृदंग राज नजत॥

(धाकिट धुमकिट धनानाना धा-S) तीन बार

उपयुक्त शिव परन में शिव का आंगिक वर्णन अपने संपूर्णता में लक्षित होता है।

कथक नृत्य प्रस्तुति के वस्तुक्रम में द्रुत लय की बंदिशों एवं परनों के पश्चात कवित्त का स्थान आता है। कवित्त की रचना भी छन्दबद्ध होती है जिसमें कृष्ण, राधा, गोपियाँ, ग्वाल आदि की क्रीड़ा विनोद के सरस वर्णन होते हैं। कवित्तों के विविध विषय होते हैं। शिव व पार्वती के जीवन चरित पर आधारित छन्द भी इन कवित्तों में हो सकते हैं। गणेश विषयक छन्द भी हो सकते हैं वस्तुतः यह बात नर्तक के ऊपर निर्भर करती है कि वह किस विषय के छन्द की नृत्यबद्ध रचना करता है। नृत्य अपने प्रारंभिक स्तर पर भाषा का चित्रात्मक संस्करण होता है, शब्द की मुद्रासापेक्ष अभिव्यक्ति होती है, पद के अर्थ को साकार करने वाला नृत्यात्मक सौंदर्यपरक विधान होता है।[4] नर्तक न त्त, नृत्य तथा नाट्य नामक तीनों 'तत्वों' का समन्वित प्रयोग करता है।

उदाहरण–

शिव-कवित्त

ऊँ डिमक डिम डमरू बाजे
गिर कैलाश शिखर पर राजे
धिमंग धिमंग धुनि मृदंग बाजे
शीश गंग अरधंग बिराजे
उमा रमा हरि सब सुर साजे
कर त्रिशूल डमरू लिये नाचे
(शिव छम छम छम छन नन नन नन तट) तीन बार
थईया ता-थईया ता-थईया थईया ता S) तीन बार

उदाहरण - 2

शिव स्तुति

जटा जूट मध गंग झल्लकत्
शीश चंद्र लिल्काट झलक्कत्
मुंड माल गले शेष धरनधर
(पारवती शिव हर हर हर हर) तीन बार

उदाहरण - 3

पंचबदन त्रिलोचन, भस्म अंग, गल भुजंग,
कानन कुंडल नेत्र प्रचंड
धाकिटतक धुमकिट तक धा धा धा
ताण्डव नर्तन अति प्रचंड
ताण्डव नर्तन अति सुढंग
ताण्डव नर्तन अति प्रचंड धा

इस कवित्त में शिव की मुद्राओं तथा भाव भंगिमाओं द्वारा कवित्त के शब्दों पर तदनुरूप अभिनय करते हुये उनकी लयात्मक अभिव्यक्ति करते हैं। तबला और पखावज वादक भी इन कवित्त के बोलों के अनुसार एकरूप होकर वादन करते हैं जिससे नृत्य में जीवंतता आ जाती है।

कवित्त के बाद कथक नृत्य प्रस्तुति में गत भाव का क्रम आता है जिसमें नर्तक छोटे-छोटे लीलाचरित अभिनय द्वारा प्रस्तुत करते हैं। कथक नृत्य के विकास का आधार मूलरूप से प्राचीन कथानक है जो नर और नर्तकों द्वारा प्रस्तुत किये जाते रहे।

भारतीय पुराण साहित्य की कई कथाओं पर आधारित कथा साहित्य कथानकों द्वारा प्रदर्षित की जाती रहीं हैं। गंगावतरण, समुद्र मंथन, शिव तांडव, ऋतुसंहार, त्रिपुरासर वध, मदन दहन, भस्मासुर आदि शिव आधारित कथानकों को कथक नृत्य में प्रस्तुत किया जाता है। एक उदाहरण शिव ताण्डव पर आधारित कथानक–

शिव तांडव

भगवान् शिव (नटराज) आदि नर्तक है जिन्हें प्रलय का देवता माना जाता है। गंगा शिव की जटाओं से प्रवाहित होकर पृथ्वी पर आती है जिसे स्वर्ग से भगीरथी प्रयास द्वारा लाया गया था। शिव के डमरू से भाषा उत्पन्न हुई है। अग्नि ज्ञान का प्रतीक है और जिस कमल पर शिव खड़े हैं वह मानव का सात्विक हदय है। जब शिव नृत्य करते हैं तो उससे काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर (इच्छाएँ), घृणा, राग, द्वेष और अहंकार आदि जल कर भस्म हो जाते हैं। वास्तव में यह रजोगुण ओर तमोगुण पर सतोगुण की विजय का प्रतीक हैं।

शिव का उठा हुआ और जीवात्मा की मुक्ति का प्रतीक है। शिव के पीछे की धधकती अग्नि द्वैत से अद्वैत में समाहित होने का संकेत देती है। शिव का धनुषाकार वृत्त और उनकी नृत्य मुद्रा ऊँ नमः शिवाय के माध्यम से अखिल विश्व में गुंजायमान ओंकार ध्वनि की प्रतीक है। उस ओंकार तत्व से ही ब्रह्मा पुनः सृष्टि करते हैं। डमरू की ध्वनि उसी का संकेत हैं।

नंदिकेश्वर ने भगवान शिव के नृत्य को तांडव की संज्ञा दी है जो सृष्टि, स्थिति और प्रलय का सूचक है। 'सांध्य तांडव' सृष्टि का रक्षक है इसीलिए इस नृत्य के समय सरस्वती ने वीणा वादन किया, ब्रह्मा ने ताल दी, रमा ने गीत गाया, विष्णु ने तालवाद्य का वादन किया तथा अन्य देवों ने चारों और धिरकर इस अद्भुत दृश्य को देखकर ईश्वर की स्तुति की।

'आनन्द ताण्डव' शिव के शिष्यों की रक्षा करने वाला हैं। 'काली या शक्ति तांडव' इस बात का प्रतीक है कि शिव और शक्ति को एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। 'त्रिपुरतांडव' तारकाक्ष, कमलाक्ष और विद्युन्माली, जैसे राक्षसों के वध का प्रतीक है जिनकी पत्नियाँ सात्विक हृदय वाली थीं। सती और शिव तांडव पुरुष व प्रकृति के मिलन का प्रतीक है। अर्द्धनारी तांडव ब्रह्म और माया की एकता को सिद्ध करने वाला है और संहार तांडव प्रलय का प्रतीक है, जिसे पार्वती की तपस्या ने शान्त किया और अपने उपास्य के रूप में सदैव के लिए शिव को प्राप्त किया। तभी से शिव-पार्वती तांडव और लास्य के अधिष्ठाता बनकर नाट्य जगत् को अनुप्राणित कर रहे हैं।[5]

उपर्युक्त आलेख द्वारा हम देख सकते हैं कि शिव और शास्त्रीय नृत्य कथक का आपस में अनन्य संबंध है। शिव में नृत्य व्याप्त है और कथक में शिव प्रसंग, शिव-मुद्राओं, शिव भंगिमाओं का प्रयोग होता है। शिव में कामदेव को भस्म किया, समुद्र मंथन से निकले हताहल विष का पान किया। शिव नटराज रूप में नृत्य कला के जनक माने जाते हैं। लोक पूजित गंगा और चंद्रकला शिव के अद्भुत व अलौकिक अलंकरण हैं। इन अवलंकरणों का कथक में विभिन्न भाव मुद्राओं द्वारा सुंदर अभिनय प्रस्तुत किया जाता है।

'कथक रत्न' शाम्भवी शुक्ला मिश्रा

संदर्भ ग्रंथ

1. चौमासा, कपिल तिवारी, लेख डॉ. भगवतीलाल राजपुरोहित, जुलाई-अक्टूबर, 2007 प्रकाशक मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद, भोपाल
2. वही, पृष्ठ-21
3. वही, लेख बसंत निरपुणे, पृष्ठ-24
4. कथक दर्पण, पं. तीरथराम आजाद, नटेश्वर कला मंदिर, 28, भारती आर्टिस्ट कालोनी, विकास मार्ग, दिल्ली-110092, द्वितीय संस्करण
5. कथक नृत्य, डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग, संगीत कार्यालय, हाथरस-204101, उ.प्र. जनवरी 1994, छठवां संस्करण, पृष्ठ-119